महर्षिपाणिनिप्रणीतं

लिङ्गानुशासनम्

'शान्ति' संस्कृत-हिन्दी व्याख्याद्वयोपेतम्

डॉ० नरेश झा

HPD

।। श्रीः ।।

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
३७३
******

महर्षिपाणिनिप्रणीतं

लिङ्गानुशासनम्

(समीक्षात्मकम्)

'शान्ति' संस्कृत - हिन्दीव्याख्याद्वयोपेतम्

व्याख्याकारः सम्पादकश्च
डॉ० नरेश झा
शास्त्रचूडामणि, विद्यावारिधि
पूर्वप्राचार्य
आदर्श रानी चन्द्रावती श्यामा महाविद्यालय
कचौड़ी गली, वाराणसी

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

प्रकाशक

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)
के. 37/117 गोपालमन्दिर लेन
पो. बा. नं. 1129, वाराणसी 221001

अन्य प्राप्तिस्थान

चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस

4697/2, भू-तल (ग्राउण्ड फ्लोर)
गली नं. 21-ए, अंसारी रोड
दरियागंज, नई दिल्ली 110002

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

38 यू. ए. बंगलो रोड, जवाहर नगर
पो. बा. नं. 2113
दिल्ली 110007

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बैंक ऑफ बड़ोदा भवन के पीछे)
पो. बा. नं. 1069, वाराणसी 221001

प्रस्तावना

समस्त ज्ञानराशि के द्योतक एवं प्रवर्त्तक अनादि अपौरुषेय वेद हैं। इन ऋग्वेदादि वेदों के उपकारक शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष– ये छः अंग हैं। अतः इन्हें वेदांग कहा जाता है। इन वेदांगों में व्याकरण मुखस्थानीय है– **मुखं व्याकरणं स्मृतम्**।

व्याकरण का व्युत्पत्तिलभ्य शाब्दिक अर्थ होता है– **व्याक्रियन्ते व्युत्पाद्यन्ते शब्दा अनेनेति व्याकरणम्** अर्थात् जिससे शब्दब्रह्म की व्युत्पत्ति हो, निष्पादन हो; वह व्याकरण शास्त्र है। इस व्याकरण शास्त्र की व्युत्पत्ति होती है– वि + आङ्पूर्वक ल्युट् = अन् प्रत्यय से। वैसे तो आचार्य बोपदेव (मुग्धबोधप्रणेता) ने–

इन्द्रश्चन्द्रः काशकृत्स्नः पिशली शाकटायनः।
पाणिन्यमरजैनेन्द्रा जयन्त्यष्टाब्दिशाब्दिकाः ॥[१]

यह कहकर इन्द्रप्रोक्त ऐन्द्र व्याकरण को प्रमुखता दी है। हो सकता है कि वह ऐतिहासिक क्रम के लिये दिया हो, किन्तु दाक्षीपुत्र महर्षि पाणिनिप्रोक्त पाणिनीय व्याकरण सर्वातिशायी है। विद्वद्वर्ग इस व्याकरण को ही वेदांग का प्रतिनिधित्व करने वाला मानते हैं और उनका कहना है कि–

समुद्रवद्व्याकरणं महेश्वरे तदर्द्धकुम्भोद्धरणं बृहस्पतौ।
तद्भागभागाच्च शतं पुरन्दरे कुलाग्रबिन्दूत्पतितं हि पाणिनौ ॥[२]

अर्थात् माहेश्वर व्याकरण (जो पाणिनीय व्याकरण के नाम से ख्यात है) समुद्र के समान विस्तृत था, बृहस्पति का व्याकरण आधे घड़े में जल रखने के समान था। इसके टुकड़े का शतांश इन्द्र (ऐन्द्र) व्याकरण में विद्यमान था और पाणिनि में तो कुश के अग्रभाग से गिरने वाले जल का बिन्दु ही वर्तमान है; जिसे महर्षि पाणिनि ने सूत्ररूप में ग्रथित कर अष्टाध्यायी में लगभग चार हजार सूत्रों में संगृहीत किया। जिन्हें यथास्थान विनियोग कर आचार्य भट्टोजिदीक्षित ने सिद्धान्तकौमुदी का रूप दिया। यह व्याकरण विश्व के सभी भाषाओं के व्याकरण से समृद्ध है। इसके रक्षा, ऊह (तर्क), आगम, लघु और असन्देह निमित्त प्रयोजन सिद्ध होते हैं। इन प्रयोजनों की सिद्धि

---

१. वैदिक साहित्य (पद्मविभूषण आचार्य पं० बलदेव उपाध्याय), पृ० ३५१।
२. वैदिक साहित्य (पद्मविभूषण आचार्य पं० बलदेव उपाध्याय), पृ० ३५१।

के लिये लिङ्गानुशासन (शब्दानुशासन), शिक्षा, परिभाषा, वार्त्तिक, गणपाठ और धातुपाठ की स्थापना की गयी। कोषकार अमरसिंह ने त्रिकाण्ड उत्पलिनी आदि कोषों से नाम तथा आचार्य वररुचि के लिङ्ग (पुंस्त्वादि द्योतक) को ग्रहण कर 'नामलिंगानुशासन' (अमरकोष) की रचना की और उसके स्वरूप के विषय में कहा गया कि **नाम च लिङ्गं च नामलिङ्गे, तयोरनुशासनमिति नामलिङ्गानुशासनम्। स्वरादिनाम्नां पुंस्त्वादि-लिङ्गानाञ्च व्युत्पादकमिति**।[१] अर्थात् स्वर्ग आदि नाम और पुंस्त्वादि लिंगों के अनु-शासन का जहाँ निरूपण किया गया हो, वही नामलिंगानुशासन कहा जाता है।

इस महत्त्वपूर्ण लिङ्गानुशासन का प्रवर्त्तन आचार्य शन्तनु (विक्रम से ३१०० वर्ष पूर्व) से माना जाता है। इसके पश्चात् आचार्य व्याडि (विक्रम २८५० वर्ष पूर्व) का स्थान माना जाता है, इनकी चर्चा अनेक लिङ्गानुशासनकर्त्ताओं ने यथास्थान की है। इनके पश्चात् आचार्य महर्षि पाणिनि (विक्रम संवत् से २८०० सौ वर्ष पूर्व) का समय आता है। इनका लिंगानुशासन अभी मुख्य रूप से विख्यात है। इनके लिंगानु-शासन के अनेक व्याख्याकार हुए। आचार्य पाणिनि के पश्चात् चन्द्रगोभी (वि० सं० ११०० पूर्व), वररुचि (विक्रम-समकालीन), देवनन्दी (वि. सं. ५०० से पूर्व), शंकर (वि. सं. ६५० से पूर्व), हर्षवर्द्धन (वि. सं. ६५०-७०४), दुर्गसिंह (वि. सं. ७०० से पूर्व), वामन (वि. सं. ८५१-८७०), पाल्यकीर्ति (वि० सं. ८७१-९२४), भोजदेव, बुद्धिसागर, हेमचन्द्र सूरि, मलयगिरि, बोपदेव, हेलाराज और रामसूरि आदि आचार्य हुए हैं। इनमें अधिकांश आचार्यों के लिंगानुशासनसम्बन्धी ग्रन्थ अप्राप्य हैं।

महर्षि पाणिनि, आचार्य वररुचि, हर्षवर्द्धन, वामन और पाल्यकीर्ति (शाकटायन) के लिंगानुशासन उपलब्ध हैं। महर्षि पाणिनि के लिंगानुशासन अनेकत्र उपलब्ध हैं, सिद्धान्तकौमुदी के अन्त में तो है ही, श्री तारानाथ तर्कवाचस्पति-भट्टाचार्य के सन् १९०५ ई० में वैदुष्यपूर्ण टीका (विवृत्ति) के साथ घोष यन्त्रालय, कलिकाता (कोलकाता) द्वारा मुद्रित होकर प्रकाशित हुआ था। यही प्रति मुझे विवृत्ति (व्याख्या) लिखने में सहायक हुई। तत्पश्चात् सन् १९३०-३१ ई० में महामहोपाध्याय पं. वे. वेङ्कटराम शर्मा ने जो हर्षवर्द्धनीय लिंगानुशासन का मद्रास विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशन कराया, उसमें आचार्य पाणिनि, वररुचि, वामन और पाल्यकीर्ति (शाकटायन) के भी लिंगानुशासन अन्त में दिये गये हैं। इधर आकर सन् १९९९ में श्रीकृष्णदास अकादमी (चौखम्बा) द्वारा चतुर्थ संस्करण स्वामी प्रह्लादगिरि वेदान्तकेशरी के सम्पादकत्व में संस्कृत-भाषा-टीकासहित प्रकाशित है। इनके अतिरिक्त और भी

---

१. अमरकोष १।१।२ की व्याख्या।

संस्करण हो सकते हैं, जो मुझे अज्ञात हैं। हर्षवर्द्धनीय लिंगानुशासन का एक प्राचीन संस्करण जर्मन भाषानुवादसहित डॉ० फ्रान्के (Franke) के सम्पादकत्व में सन् १८९० ई० में प्रकाशित हुआ था। वामनीय लिंगानुशासन स्वल्पकाय (मात्र ३३ कारिकायें- आर्या छन्दों में) होते हुए भी बहुचर्चित है। इसका सम्भवतः प्रथम संस्करण सन् १९१८ ई० में गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज बरोदा से स्वोपज्ञ वृत्ति के सहित श्री चिमनलाल डी० दलाल, एम. ए. (क्यूरेटर- सेन्ट्रल लाइब्रेरी बरोदा) के सम्पादकत्व में निकला था, जिसके सम्बन्ध में आचार्य पं० युधिष्ठिर मीमांसक जी का कथन है कि 'वह चिरकाल से अप्राप्य है'[१] किन्तु काशी का सारस्वत साधनाकेन्द्र, विश्वनाथ पुस्तकालय (जो. म. गोयनका सं. महाविद्यालयीय) में ९३७।३२० संख्या पर उपलब्ध और प्राप्य है। इतना ही नहीं; इसमें अंग्रेजी भाषा में पाँच पृष्ठों का विस्तृत इन्ट्रोडक्शन तथा दो एपेन्डिक्स भी अन्त में हैं। इसकी सूचना इसलिये दे रहा हूँ कि अनुसन्धाता सन्दिग्ध या भ्रमित न रहें। हर्षवर्द्धनीय लिंगानुशासन (१९३० ई०) में तो है ही। पश्चात् आचार्य मीमांसक जी ने पाण्डित्यपूर्ण स्वोपज्ञ वृत्ति, सम्पादकीय (सं.) एवं परिशिष्टों सहित विशेष सम्भारपूर्वक सं. २०२१ वै० में प्रथम संस्करण तथा सं. २०३६ में द्वितीय संस्करण रामलाल कपूर ट्रस्ट (सोनीपत-हरियाणा) द्वारा प्रकाशित कराया है।

इन उपर्युक्त ग्रन्थों में संस्कृत तथा अंग्रेजी में भूमिकायें हैं, जिनका हिन्दी भाषा में रूपान्तर कर पाठकों की जिज्ञासा-पूर्ति के लिये परिशिष्ट में दे दिये गये हैं।

पाणिनीय लिंगानुशासन का पाठ

इस सम्बन्ध में आचार्य मीमांसक जी का कथन है कि लिंगानुशासन के उपलब्ध वृत्तियों के अवलोकन से विदित होता है कि पाणिनीय लिंगानुशासन का सूत्रपाठ अत्यधिक भ्रष्ट हो गया है। इसके शुद्ध पाठ के सम्पादन की महती आवश्यकता है[२]। सूत्रपाठ के भ्रष्ट होने का जहाँ तक प्रश्न है; पूर्ववर्त्ती (कलिकाता, मद्रास) प्राचीन संस्करणों में पाठ भ्रष्ट नहीं है। हाँ, नूतन संस्करण में यह स्थिति जरूर आ गयी है। जहाँ तक हो सका है, प्रस्तुत इस संस्करण में पूर्ववर्त्ती और पश्चाद्वर्त्ती संस्करणों का पाठान्तर संकलन कर शुद्ध पाठ स्थिर किया गया है। वस्तुतः पाठान्तर चेष्टित और अचेष्टित दोनों परिस्थितियों में हो जाया करते हैं।

---

१. संस्कृत व्याकरणशास्त्र का इतिहास, द्वितीय भाग, पृ० २९७ (लिंगानुशासन प्रकरण)

२. संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास- द्वितीय भाग, पृ०- २७९।

अब तक के अन्य संस्करणों से प्रस्तुत संस्करण की यह विशेषता है कि सूत्र-पाठ में आये शब्दों की व्याकरणसम्बन्धी व्युत्पत्ति (मूल धातु तथा प्रत्ययादि) तथा उन शब्दों के यथासम्भव प्रयोग (महाकवियों के द्वारा प्रयुक्त) दे दिये गये हैं, जिनसे सूत्रानुसारी प्रत्यय स्वरूप पुंल्लिङ्गादि लिंगों का ज्ञान स्पष्टतः हो जाता है।

यहाँ पर यह ध्यातव्य है कि मिथिला शोध संस्थान, दरभंगा से सं० २०११ वै० में महावैयाकरण पण्डित दीनबन्धु झा जी का 'लिंग-वचनविचार' नामक लिंग-वचनादिविषयक निबन्धाकार पाण्डित्यपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित हुआ, जिसमें मूलतः दो प्रकार के लिंग 'लौकिकं शास्त्रीयञ्च' कहे गये हैं। लौकिक से लोक में प्रचलित-व्यवहृत लिङ्ग और शास्त्रीय लिङ्ग से विभिन्न आचार्यों द्वारा प्रतिपादित लिङ्गों से तात्पर्य है। यह लिंग और वचन विचार के लिये उपयोगी ग्रन्थ है। म. म. डॉ० उमेश मिश्र जी (निदेशक) ने आंग्ल भाषा में संस्तुत्यात्मक प्रशंसा की है।

इस समीक्षात्मक संस्करण के प्रस्तुतीकरण में विश्वनाथ पुस्तकालय के पुस्तकालयाध्यक्ष पं० देवमणि याज्ञिक एम. ए, आचार्य का योगदान स्तुत्य है, जिन्होंने लिंगानुशासन के दुर्लभ संस्करणों को सुलभ कराया।

साथ ही चौखम्बा सुरभारती के अन्यतम सञ्चालक श्री नवनीतदास जी गुप्त का मैं आभार मानता हूँ, जिन्होंने इस कार्य के लिये मुझे बहुशः प्रेरित किया।

अपरञ्च— आदर्श रानी चन्द्रावती श्यामा महाविद्यालय के प्रबन्धक श्री राजेन्द्र झा एडवोकेट (पटना उच्च न्यायालय) तथा प्रभारी प्राचार्य पं० सत्यनारायण झा एम० ए० का भी मैं आभारी हूँ, जिन्होंने आवासीय व्यवस्था सुलभ कराकर लेखन-कार्य में सुविधा प्रदान की।

इस अवसर पर मैं अपने सुयोग्य शिष्य डॉ० चन्द्रभूषण झा, साहित्याचार्य को आशीर्वाद देता हूँ, जो समस्त शैक्षणिक कार्यों में सहयोग हेतु सदा-सर्वदा तत्पर रहते हैं।

अन्त में मैं उन सभी आदरणीय ज्ञाताज्ञात विद्वानों, लेखकों के प्रति विनीत भाव से हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापन करता हूँ, जिनके विचार एवं ग्रन्थों से मुझे कुछ भी सहयोग प्राप्त हुआ है। इत्यलं पल्लवितेन। 'भूतयेऽस्तु भवानीशः'। पर्यन्ते—

लिङ्गानुशासनस्येदं भाषा-विवृत्तिसंयुतम्।
अर्प्यते विदुषां मध्ये श्रीनरेशेन सादरम्॥

श्यामा छात्रावास
नीलकण्ठ, वाराणसी
सारस्वत-दिवस, श्रीपञ्चमी सं. २०५९

विद्वद्वशंवदः
डॉ० नरेश झा

विषयानुक्रम

***

।। श्रीवाग्देवतायै नमः ।।

मङ्गलाचरणम्

नत्वा साम्बसदाशिवं गणपतिं देवाधिदेवं तथा
ध्यात्वा पितृपदाम्बुजं गुरुवरं पूज्यां तां मातरम् ।
लिङ्गानामनुशीलनञ्च कुरुते दाक्षेयप्रोक्तं यथा
श्रौते शब्दनिरूपणे धृतमतिः शिष्टो नरेशो बुधैः ।।

चक्रेश्वरीं हृदि ध्यात्वा ध्यात्वा च कुलदेवताम् ।
शाण्डिल्येन नरेशेन क्रियते लिङ्गविवृतिः ।।

बह्वाचार्यमतं वीक्ष्य पाणिनेश्च ततोऽधिकम् ।
व्युत्पत्त्या सप्रयोगेण कृतं लिङ्गानुशासनम् ।।

व्याख्या नव्या कृता चात्र समीक्षा चापि विद्यते ।
पाठभेदो मुहुश्चापि शब्दविन्यासपूर्वकः ।।

लिङ्गानुशासनं क्वेदं क्व च स्वल्पा मतिर्मम ।
विदुषां दत्तमार्गेण एतत्सर्वं कृतं मया ।।

लिङ्गानुशासनञ्चेदं शब्दलिङ्गप्रवर्तकम् ।
भूयाच्छात्रहितार्थाय विदुषां तोषणाय च ।।

***

॥ श्रीः ॥

पाणिनीयलिङ्गानुशासन-मूलसूत्राणि

येनाक्षरसमाम्नायमधिगम्य महेश्वरात् ।
कृत्स्नं व्याकरणं प्रोक्तं तस्मै पाणिनये नमः ॥

अथ सूत्राणि

१. लिङ्गम् ।

अथ स्त्रीलिङ्गप्रकरणम्

२. स्त्री ।
३. ऋकारान्ता मातृदुहितृस्वसृयातृननान्दरः ।
४. अन्यूप्रत्ययान्तो धातुः ।
५. अशनिभरण्यरणयः पुंसि च ।
६. मिन्यन्तः ।
७. वह्नि-वृष्ण्यग्नयः पुंसि ।
८. श्रोणियोन्यूर्मयः पुंसि च ।
९. क्तिन्नन्तः ।
१०. ईकारान्तश्च ।
११. ऊङ्याबन्तश्च ।
१२. य्वन्तमेकाक्षरम् ।
१३. विंशत्यादिरानवतेः ।
१४. दुन्दुभिरक्षेषु ।
१५. नाभिरक्षत्रिये ।
१६. उभावप्यन्यत्र पुंसि ।
१७. तलन्तः ।
१८. भूमिविद्युत्सरिल्लतावनिताभिधानानि ।
१९. यादो नपुंसकम् ।
२०. भास्स्रुक्स्रग्दिगुष्णिगुपानहः ।
२१. स्थूणोर्णे नपुंसके च ।
२२. गृहशशाभ्यां क्लीबे ।
२३. प्रावृट्विप्रुट्रुट्तृट्विट्त्विषः ।
२४. दर्विविदिवेदिखनिखान्यश्रिवेशिकृष्योषधिकट्यङ्गुलयः ।
२५. तिथिनाडिरुचिविचिनालिधूलिकिकिकेलिच्छविरात्र्यादयः ।
२६. शष्कुलिराजिकुट्यशनिवर्तिभ्रुकुटित्रुटिबलिपङ्क्तयः ।
२७. प्रतिपदापद्विपत्संपच्छरत्संसत्परिषदुषःसंवित्क्षुत्पुन्मुत्समिधः ।
२८. आशीर्धूःपूर्गीर्द्वारः ।
२९. अप्सु मनस्समासिकताकर्षाणां बहुत्वं च ।
३०. स्रक्त्वग्ज्योग्वाग्यवागूनौस्फिजः ।
३१. तृटितटिसीमासम्बध्याः ।
३२. चुल्लिवेणिखार्यश्च ।

३३. ताराधाराज्योत्स्नादयश्च।

३४. शलाका स्त्रियां नित्यम्।

इति स्त्र्यधिकारः

अथ पुँल्लिङ्गप्रकरणम्

३५. पुमान्।

३६. घञबन्तः।

३७. घाजन्तश्च।

३८. भयलिङ्गभगपदानि नपुंसके।

३९. नङन्तः।

४०. याच्ञा स्त्रियाम्।

४१. क्यन्तो घुः।

४२. इषुधिः स्त्री च।

४३. देवासुरात्मस्वर्गगिरिसमुद्रनखकेशदन्त-स्तनभुजकण्ठखड्गशरपङ्काभिधानानि।

४४. त्रिविष्टपत्रिभुवने नपुंसके।

४५. द्यौः स्त्रियाम्।

४६. इषुबाहू स्त्रियां च।

४७. बाणकाण्डौ नपुंसके च।

४८. नान्तः।

४९. क्रतुपुरुषकपोलगुल्फमेघाभिधानानि।

५०. अभ्रं नपुंसकम्।

५१. उकारान्तः।

५२. धेनुरज्जुकुहूसरयुतनुरेणुप्रियङ्गवः स्त्रियाम्।

५३. समासे रज्जु पुंसि च।

५४. श्मश्रुजानुवसुस्वाद्वश्रुजतुत्रपुतालूनि नपुंसके।

५५. वसु चार्थवाचि।

५६. मद्गुमधुसीधुशीधुसानुकमण्डलूनि नपुंसके च।

५७. रुत्वन्तः।

५८. दारुकसेरुजतुवस्तुमस्तूनि नपुंसके।

५९. सक्तुर्नपुंसके च।

६०. प्राग्रश्मेरकारान्तः।

६१. कोपधः।

६२. चिबुकशालूकप्रातिपदिकांशुकोल्मुकानि नपुंसके।

६३. कण्टकानीकसरकमोदकचषकमस्तक-पुस्तकतडाकनिष्कशुष्कवर्चस्कपिनाक-भाण्डकपिण्डककटकशण्डकपिट-कतालकफलकपलाकानि नपुंसके च।

६४. टोपधः।

६५. किरीटमुकुटललाटवटवीटशृङ्गाटकराट-लोष्टानि नपुंसके।

६६. कुटकूटकपटकवाटकर्पटनटनिकटकीट-कटानि नपुंसके च।

६७. णोपधः।

६८. ऋणलवणपर्णतोरणोष्णानि नपुंसके।

६९. कार्षापणस्वर्णसुवर्णव्रणचरणवृषण-विषाणचूर्णतृणानि नपुंसके च।

७०. थोपधः।

७१. काष्ठपृष्ठसिक्थोक्थानि नपुंसके।

७२. काष्ठादिगर्था स्त्रियाम्।

७३. तीर्थप्रोथयूथगाथानि नपुंसके च।

७४. नोपधः।

७५. जघनाजिनतुहिनकाननवनवृजिनविपिन-

वेतनशासनसोपानमिथुनश्मशानरत्ननिम्नचिह्नानि नपुंसके ।

७६. मानयानाभिधाननलिनपुलिनोद्यानशयनासनस्थानचन्दनालानसमानभवनवसनसम्भावनविभावनविमानानि नपुंसके च ।

७७. पोपधः ।

७८. पापरूपोडुपतल्पशिल्पपुष्पशष्पसमीपान्तरापाणि नपुंसके ।

७९. शूर्पकुतपकुणपद्वीपविटपानि नपुंसके च ।

८०. भोपधः ।

८१. तलभं नपुंसकम् ।

८२. जृम्भं नपुंसके च ।

८३. मोपधः ।

८४. रुक्मसिध्मयुध्मेध्मगुल्माध्यात्मकुङ्कुमानि नपुंसके ।

८५. संग्रामदाडिमकुसुमाश्रमक्षेमक्षौमहोमोद्दामानि नपुंसके च ।

८६. योपधः ।

८७. किसलयहृदयेन्द्रियोत्तरीयाणि नपुंसके ।

८८. गोमयकषायमलयान्वयाव्ययानि नपुंसके च ।

८९. रोपधः ।

९०. द्वाराग्रस्फारतक्रवक्रवप्रक्षिप्रक्षुद्रनारतीरदूरकृच्छ्ररन्ध्राश्रश्वभ्रभीरगभीरक्रूरविचित्रकेयूरकेदारोदराजस्त्रशरीरकन्दरमन्दारपञ्जराजजठराजिरवैरचामरपुष्करगह्वरकुहरकुटीरकुलीरचत्वरकाश्मीरनीराम्बरशिशिरतन्त्रयन्त्रक्षत्रक्षेत्रमित्रकलत्रचित्रमूत्रसूत्रवक्त्रनेत्रगोत्राङ्गुलित्रभलत्रशस्त्रशास्त्रवस्त्रपत्रपात्रच्छत्राणि नपुंसके ।

९१. शुक्रमदेवतायाम् ।

९२. चक्रवज्रान्धकारसारावारपारक्षीरतोमरशृङ्गारभृङ्गारमन्दारोशीरतिमिरशिशिराणि नपुंसके च ।

९३. षोपधः ।

९४. शिरीषर्जीषाम्बरीषपीयूषपुरीषकिल्विषकल्माषाणि नपुंसके ।

९५. यूषकरीषमिषविषवर्षाणि नपुंसके च ।

९६. सोपधः ।

९७. पनसविसबुससाहसानि नपुंसके ।

९८. चमसांसरसनिर्यासोपवासकार्पासवासवासमासकासकांसमांसानि नपुंसके च ।

९९. कंसं चाप्राणिनि ।

१००. रश्मिदिवसाभिधानानि ।

१०१. दीधितिः स्त्रियाम् ।

१०२. दिनाहनी नपुंसके ।

१०३. मानाभिधानानि ।

१०४. द्रोणाढकौ नपुंसके च ।

१०५. खारीमानिके स्त्रियाम् ।

१०६. दाराक्षतलाजासूनां बहुत्वं च ।

१०७. नाड्यपजनोपपदानि व्रणाङ्गपदानि ।

१०८. मरुद्गरुत्तरदृत्विजाः ।

१०९. ऋषिराशिदृतिग्रन्थिक्रिमिध्वनिबलिकौलिमौलिरविकविकपिमुनयः ।

११०. ध्वजगजमुञ्जपुञ्जाः ।

१११. हस्तकुन्तान्तव्रातवातदूतधूर्तसूतचूतमुहूर्ताः ।

११२. षण्डमण्डकरण्डभरण्डवरण्डतुण्डगण्डमुण्डपाषण्डशिखण्डाः ।

११३. वंशांशपुरोडाशाः ।

११४. ह्रदकन्दकुन्दबुद्बुदशब्दाः ।
११५. अर्घपथिमथ्यृभुक्षिस्तम्बनितम्बपूगाः
११६. पल्लवपल्वलकफरेफकटाहनिर्व्यूहमठमणितरङ्गतुरङ्गगन्धस्कन्धमृदङ्गसङ्गसमुद्रपुङ्खाः ।
११७. सारथ्यतिथिकुक्षिवस्तिपाण्यञ्जलयः ।

इति पुंलिङ्गाधिकारः

अथ नपुंसकलिङ्गप्रकरणम्

११८. नपुंसकम् (अधिकारोऽयम्) ।
११९. भावे ल्युडन्तः ।
१२०. निष्ठा च ।
१२१. त्वष्यञौ तद्धितौ ।
१२२. कर्मणि च ब्राह्मणादिगुणवचनेभ्यः
१२३. यद्यढग्यगञण्वुञ्छाश्च भावकर्मणि
१२४. द्वन्द्वैकत्वम् ।
१२५. अभाषायां हेमन्तशिशिरावहोरात्रे च
१२६. अनञ् कर्मधारयस्तत्पुरुषः ।
१२७. अनल्पे छाया ।
१२८. राजाऽमनुष्यपूर्वा समा ।
१२९. सुरासेनाच्छायाशालानिशास्त्रियां च
१३०. परवत् ।
१३१. अपथपुण्याहे नपुंसके ।
१३२. संख्यापूर्वा रात्रिः ।
१३३. द्विगुः स्त्रियां च ।
१३४. इसुसन्तः ।
१३५. अर्चिः स्त्रियां च ।
१३६. छदिः स्त्रियामेव ।
१३७. मुखनयनलोहवनमांसरुधिरकार्मुकविवरजलहलधनान्नाभिधानानि ।
१३८. सीरार्थौदनाः पुंसि ।
१३९. वक्त्रनेत्रारण्यगाण्डीवानि पुंसि च ।
१४०. अटवी स्त्रियाम् ।
१४१. लोपधः ।
१४२. तूलोपलतालकुसूलतरलकम्बलदेवलवृषलाः पुंसि ।
१४३. शीलमूलमङ्गलसालकमलतलमुसलकुण्डलपललमृणालवालनिगलपलालबिडालखिलशूलाः पुंसि च ।
१४४. शतादिः संख्या ।
१४५. शतायुतप्रयुताः पुंसि च ।
१४६. लक्षा कोटिः स्त्रियाम् ।
१४७. शङ्कुः पुंसि (सहस्रः क्वचित्) ।
१४८. मन् द्व्यच्कोऽकर्तरि ।
१४९. ब्रह्मन् पुंसि च ।
१५०. नामरोमणी नपुंसके ।
१५१. असन्तो द्व्यच्कः ।
१५२. अप्सराः स्त्रियाम् ।
१५३. त्रान्तः ।
१५४. यात्रामात्राभस्त्रादंष्ट्रावरत्राः स्त्रियामेव ।
१५५. भृत्रामित्रछात्रपुत्रमन्त्रवृत्रमेढ्रोष्ट्राः पुंसि ।
१५६. पत्रपात्रपवित्रसूत्रच्छत्राः पुंसि च ।
१५७. बलकुसुमशुल्बयुद्धपत्तनरणाभिधानानि ।
१५८. पद्मकमलोत्पलानि पुंसि च ।
१५९. आहवसंग्रामौ पुंसि ।
१६०. आजिः स्त्रियामेव ।

१६१. फलजातिः ।

१६२. वृक्षजातिः स्त्रियामेव ।

१६३. वियज्जगत्सकृत्शकन् पृषच्छकृद्य-कृदुदश्वितः ।

१६४. नवनीतावनतानृतामृतनिमित्तवित्तचित्त-पित्तव्रतरजतवृत्तपलितानि ।

१६५. श्राद्धकुलिशदैवपीठकुण्डाङ्काङ्ग-दधिसक्थ्यक्ष्यास्यास्पदाकाश-कण्वबीजानि ।

१६६. दैवं पुंसि च ।

१६७. धान्याज्यसस्यरूप्यपण्यवर्ण्यधृष्ण्य-हव्यकव्यकाव्यसत्यापत्यमूल्यशिक्य-कुड्यमद्यहर्म्यतूर्यसैन्यानि ।

१६८. द्वन्द्वबर्हदुःखबडिशपिच्छबिम्बकुटुम्ब-कवचवरशरवृन्दारकाणि ।

१६९. अक्षमिन्द्रिये ।

इति नपुंसकाधिकारः

अथ स्त्रीपुंसाधिकारः

१७०. स्त्रीपुंसयोः ।

१७१. गोमणियष्टिमुष्टिपाटलिवस्तिशाल्मलि-त्रुटिमसिमरीचयः ।

१७२. मृत्युसीधुकर्कन्धुकिष्कुकण्डुरेणवः ।

१७३. गुणवचनमुकारान्तं नपुंसकं च ।

१७४. अपत्यार्थस्तद्धिते ।

इति स्त्री-पुंसाधिकारः

अथ पुन्नपुंसकाधिकारः

१७५. पुंनपुंसकयोः ।

१७६. घृतभूतमुस्तक्ष्वेलितैरावतपुस्तकबुस्त-लोहिताः ।

१७७. शृङ्गार्घनिदाघोद्यमशल्यदृढाः ।

१७८. व्रजकुञ्जकुथकूर्चप्रस्थदर्पार्भार्धर्चदर्भ-पुच्छाः ।

१७९. कबन्धौषधायुधान्ताः ।

१८०. दण्डमण्डखण्डशवसैन्धवपार्श्वाकाश-कुशकाशाङ्कुशकुलिशाः ।

१८१. गृहमेहदेहपट्टपटहाष्टापदाम्बुद-ककुदाश्च ।

इति पुं-नपुंसकाधिकारः

१८२. अविशिष्टलिङ्गम् ।

१८३. अव्ययं कतियुष्मदस्मदः ।

१८४. ष्णान्ता संख्या । (शिष्टा परवत्)

१८५. गुणवचनं च ।

१८६. कृत्याश्च ।

१८७. करणाधिकरणयोर्ल्युट् च ।

१८८. सर्वादीनि सर्वनामानि ।

इति लिङ्गानुशासनप्रकरणम्

इतिश्रीभट्टोजिदीक्षितविरचितायां वैयाकरणसिद्धान्तकौमुद्यां पाणिनीयलिङ्गानुशासनप्रकरणं समाप्तम् ।।

॥ श्रीः ॥

पाणिनिप्रणीतं

लिङ्गानुशासनम्

'शान्ति' संस्कृत-हिन्दीटीकाद्वयोपेतम्

१. लिङ्गम्। (लिङ्ग् + अच्) तत्र लिङ्गमित्यधिकृत्य पाणिनिनानुशिष्टम्। अधिकारसूत्रमिदम्। कथनस्याभिप्रायोऽयं यदितः परं 'सर्वादीनि सर्वनामानि' इति पर्यन्तमस्य सूत्रस्याधिकारः प्रवर्त्तते।

हिन्दी– महर्षि पाणिनि ने इसे अधिकारसूत्र के रूप में प्रवर्त्तित किया है। कहने का तात्पर्य यह है कि 'लिङ्गम्' इस सूत्र का अधिकारक्षेत्र लिङ्गानुशासन के अन्तिम सूत्र 'सर्वादीनि सर्वनामानि' तक प्रभावी है।

अथ स्त्रीलिङ्गप्रकरणम्

२. स्त्री। (स्त्यै + ड्रप् + ङीप्) स्त्यायेते शुक्रशोणिते यस्यां सा। अस्मात् स्थानादुत्तरं वक्ष्यमाणाः शब्दाः स्त्रीलिङ्गाः स्युरित्यधिकारः। तत्तदपवादस्तत्तत्सूत्रे वक्ष्यते; तथा च विशेषैरबाधिता एव स्त्रीलिङ्गाः बोध्याः।

हिन्दी– यह सूत्र भी अधिकारसूत्र के रूप में निर्दिष्ट है। यहाँ से लेकर स्त्री-लिङ्गाधिकार के 'शलाका स्त्रियाम्' सूत्र तक इसका अधिकार सुनिश्चित है। इसके अपवादस्वरूप तत् तत् सूत्र में कहा जायगा; क्योंकि विशेष सूत्रों से अबाधित ही स्त्रीलिङ्ग जानना चाहिये।

३. ऋकारान्ता मातृदुहितृयातृ[1]स्वसृननान्दरः। (मान् पूजायां तृच् नलोपः, दुह् + तृच्, यत् + ऋन्, वृद्धिश्च, सृ + अस् + ऋन् = स्वसृ, न नन्दति सेवयापि न तुष्यति न + नन्द् + ऋन् = ननान्दृ, ब०) द्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– ऋकारान्ता मातृ-दुहितृ-यातृ-स्वसृ-ननान्दृ अमी पञ्चैव पञ्चसङ्ख्यका

१. यातृस्थाने कलिकातासंस्करणे पोतृपाठः= तत्र पोता भविष्यति। अत्र 'पावयित्री' इत्यर्थो भविष्यति।

एव स्त्रीलिङ्गाः भवन्ति नान्ये । अन्येषामेतद्भिन्नानां 'ऋन्नेभ्यः' इति सूत्रेण ङीब्विधानेन ईकारान्तत्वात् स्वस्त्रादेरेव ङीब्निषेधेन ऋदन्तत्वात्, तिसृचतस्रोस्तु स्त्रियामादेशतया प्रकृतिरूपत्वाभावेन ऋदन्तत्वेऽपि न नियमव्याघातः । **उदाहरणम्–** इयं माता जननी, जन्मदात्री; इयं दुहिता = दूरे हिता, पुत्री, आत्मजा; इयं याता = ज्येष्ठस्य लघोर्वा भ्रातुः पत्नी; इयं स्वसा भगिनी; इयं ननान्दा = स्वपत्युर्भगिनी ।

हिन्दी– ऋकारान्त मातृ, दुहितृ, यातृ या पोतृ, स्वसृ और ननान्दृ— ये पाँच शब्द ही स्त्रीलिंग में होते हैं; दूसरे नहीं । इनके अतिरिक्त दूसरे शब्दों के 'ऋन्नेभ्यः' इस सूत्र के द्वारा ङीप् विधान से ईकारान्त होने से स्वस्त्रादि का ही ङीप्-निषेध से ऋदन्त होने से, तिसृ-चतसृ का तो स्त्रीलिंग में आदेश होने से प्रकृतिरूपत्व के अभाव से ऋदन्त होने पर भी नियम व्याघात नहीं होगा ।

४. अन्यूप्रत्ययान्ता धातुः । अत्र द्वन्द्वगर्भो बहुव्रीहिसमासः ।

व्याख्या– अनिप्रत्ययान्तः ऊप्रत्ययान्तश्च धातुः स्त्रीलिङ्गे स्यात् । यथा इयमवनिः, सरणिः, रजनिरित्यादि; अत्र च कृदिकारादक्तिनः इति पक्षे ङीप् अवनी, रजनी चेत्यादि । ऊप्रत्ययान्तस्य चमूः = सेना, वधूरित्यादि । प्रत्ययान्तः किम् ? दिव्यतेः क्विप् द्यूः; अयं विशेष्यलिङ्गः ।

हिन्दी– अनिप्रत्ययान्त तथा ऊप्रत्ययान्त धातु से निष्पन्न शब्द स्त्रीलिंग होते हैं । जैसे— अरणिः, सरणिः, धरणिः, धमनिः, अशनिः, अवनिः आदि शब्द । ऊप्रत्ययान्त; जैसे— चमू, वधू इत्यादि ।

५. अशनिभरण्यरणयः पुंसि च । (अश्नुते संहति अश् + अनि), इतरेतर-द्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– एते अशनि-भरणि-अरणिशब्दाः स्त्रीलिङ्गाः पुंलिङ्गाश्च भवन्ति । अनि-प्रत्ययान्ततया स्त्रीत्वे प्राप्ते पाक्षिकपुंस्त्वविधानार्थं सूत्रम् । इयमयं वा अशनिः, भरणिः, अरणिः । स्त्रीत्वपक्षे ङीप् वा अशनीत्यादि ।

हिन्दी– अशनि, भरणि और अरणि— ये शब्द स्त्रीलिङ्ग तथा पुंलिङ्ग होते हैं । अनिप्रत्ययान्त होने के कारण स्त्रीत्व प्राप्त होने पर पुंस्त्वविधान के लिये यह सूत्र प्रवर्त्तित है ।

६. मिन्यन्तः । (अस्मिन् सूत्रे द्वन्द्वगर्भात्मको बहुव्रीहिसमासः) ।

व्याख्या– धातुरित्यनुवर्तते । मिप्रत्ययान्तः, निप्रत्ययान्तश्च धातुः स्त्रियां स्यात् ।

यथा— भूमिः, ग्लानिः, हानिः, धुनिः । अत्रापि विकल्पेन ङीप् तदा भूमी, ग्लानी, हानी, धुनी इत्यादि । भूमिः (भवन्त्यस्मिन् भूतानि भू + मि किच्च वा ङीप्) ।

हिन्दी– मिप्रत्ययान्त और निप्रत्ययान्त धातु से निष्पन्न शब्द स्त्रीलिंग होते हैं। जैसे— भूमि, ग्लानि, हानि, धुनि आदि । यहाँ भी विकल्प से ङीप् करने पर भूमी, ग्लानी, हानी, धुनी आदि शब्द होते हैं ।

७. वह्निवृष्ण्यग्नयः पुंसि । (अस्मिन् सूत्रे इतरेतरद्वन्द्वमासः) । (वह् + निः) वह्निः । वृषेः निः किच्च वृष्णिः । अङ्गति ऊर्ध्वं गच्छति, अङ्ग + नि नलोपश्च । इत्यत्र इतरेतर द्वन्द्वः विद्यते ।

व्याख्या– निप्रत्ययान्तत्वेन स्त्रीत्वे प्राप्ते तदपवादार्थमिदं सूत्रं प्रवर्तते । निप्रत्ययान्ताः वह्नि-वृष्णि-अग्नि इत्येते शब्दाः पुंलिङ्गे भवन्ति । यथा— अयं वह्निः, अयं वृष्णिः, अयमग्निरिति ।

हिन्दी– निप्रत्ययान्त वह्नि, अग्नि, वृष्णि— ये शब्द पुंलिङ्ग में ही व्यवहृत होते हैं। यहाँ निप्रत्ययान्त होने स्त्रीत्व प्राप्त है; किन्तु अपवादस्वरूप उक्त सूत्र प्रवर्त्तित होने पर पुंलिङ्ग ही है।

८. श्रोणियोन्यूर्मय पुंसि च । (अस्मिन् सूत्रेऽपि इतरेतरद्वन्द्वसमासः) श्रोणिः— णी- श्रोण् + इन् वा ङीप्, 'श्रोणीभारादलसगमना' (मेघदूत-८२), यु + नि = योनि, ऋ + मि अर्तेरुच्च = ऊर्मि ।

व्याख्या– उपर्युक्ताः श्रोणि-योनि-ऊर्मिशब्दाः स्त्रीलिङ्गाः पुंलिङ्गाश्च स्युः । एतेषां यथायोग्यं मिन्यन्तत्वेन प्राप्तौ विकल्पः । यथा— अयमियं वा श्रोणिः, अयमियं वा योनिः, तथैवोर्मिरपि । स्त्रीत्वपक्षे वा ङीप्— श्रोणी, योनी, ऊर्मी भविष्यति ।

हिन्दी– उपर्युक्त श्रोणि, योनि और ऊर्मि शब्द स्त्रीलिंग तथा पुंलिङ्ग दोनों में व्यवहृत होते हैं।

९. क्तिन्नन्तः । (अत्र बहुव्रीहिसमासः) क्तिन् + अन्तः ।

व्याख्या– क्तिन्प्रत्ययान्तो धातुः स्त्रियां = स्त्रीलिङ्गे भवति । यथा— कृतिः = (कृ + क्तिन्) 'स्वकृतिं गापयामास कविप्रथमपद्धतिम्' (रघुवंश-१५।३३) । क्तिन्प्रत्ययान्तो धातुः स्त्रियां स्यात् । यथा— इयं कृतिः, इयं बुद्धिः, इयं दृष्टिः । विशेषरूपेणात्र 'अक्तिनः' इति निर्देशात् अत्र न पक्षे ङीप् । 'स्त्रियां क्तिन्' (३।३।९४) इत्युत्तरकृदन्तसूत्रेणोक्तेऽर्थे प्रसक्तिः । स्त्रीलिङ्गे भावादौ क्तिन् स्यात् घञोऽपवादः । अजपौ तु परत्वाद्बाधेते कृतिरित्यादौ ।

हिन्दी– क्तिन्-प्रत्ययान्त धातु से निष्पन्न शब्द स्त्रीलिङ्ग होता है। जैसे— यह कृति, यह बुद्धि, यह दृष्टि आदि। महर्षि पाणिनि ने अष्टाध्यायी में स्वतन्त्र रूप से भी 'स्त्रियां क्तिन्' कहकर क्तिन्नन्त शब्दों का स्त्रीत्व स्वीकार किया है।

१०. ईकारानतश्च। ईकारान्तः च (बहुव्रीहिसमासः)।

व्याख्या– ईप्रत्ययान्तो धातुः स्त्रियां (स्त्रीलिङ्गे) स्यात्। चकारो धात्वधिकार-निवृत्यर्थः। एतत्सूत्रपर्यन्तमेव धातुरनुवर्तते, नाग्रिमसूत्रे। यथा— इयम् अवीः = अवत्यात्मानं लज्जया इति अव् + ई- रजस्वला स्त्री, इयम् तन्त्रीः = तन्त्रि-तन्त्री = तन्त्र् + इ = तन्त्रि + ङीष् तन्त्रीः = वीणा(का)यास्तारः, 'तन्त्रीमार्द्रां नयनसलिलैः सारयित्वा कथञ्चित्' (मेघदूत-८६), इयं तरीः = तरिः-तरीः (तरति अनया- तृ + इ, तरि + ङीष्, नौका- 'जीर्णा तरिः सरिदतीव गभीरनीरा' (उद्भट, शि०-३।७६), इयं लक्ष्मीः— (लक्ष् + ई, मुट् + च) सौभाग्यम्, सा लक्ष्मीरुपकुरुते यया परेषाम्' (कि०-८।१८), 'अवीतन्त्रीतरीलक्ष्मी सुलोपो न कदाचन'।

हिन्दी– ई-प्रत्ययान्त धातु स्त्रीलिंग में होता है। यहाँ चकार धातु के अधिकारनिवृत्ति के लिये है। इसी सूत्र तक धातु का अनुवर्तन होता है, अग्रिम सूत्र में नहीं। जैसे— अवीः, तन्त्रीः, तरीः, लक्ष्मीः ये सभी स्त्रीलिंग में प्रयुक्त हैं।

११. ऊङ् ङ्याबन्तश्च। ऊङ् ङी आबन्तः च, (अत्र द्वन्द्वगर्भो बहुव्रीहिः)।

व्याख्या– अस्मिन् सूत्रे ङीब्-ङीष्-ङीनां ग्रहणाय ङीग्रहणं टाप्-चापोर्ग्रहणाय आपो ग्रहणम्। तथा च ऊङन्तः ङ्यन्तः आबन्तश्च शब्दः स्त्रीलिङ्गः स्यात्। अत्रायं निष्कर्षः— ऊङादीनां स्त्रियां विहितत्त्वेऽपि एकत्र सर्वेषां ग्रहणे लिङ्गज्ञानस्य सुगमतार्थमित्यत्र ग्रहणम्। एवमन्यत्रापि। ऊङन्तः शब्दो यथा— कुरूः (कृ + कु उकारादेश)। उदाहरणम्— 'श्रियः कुरूणामधिपस्य पालनीम्' (किरात-१।१), कर्कन्धूः (कर्कं कण्टकं दधाति) धा + कृ)। उदाहरणम्— 'कर्कन्धूफलपाकमिश्रपचनामोदः परिस्तीर्यते' (उत्तररामचरित-४।१)। ङीप्रत्यये यथा— कर्त्री (कर्तृ + ङीप्), इयं गौरी (गौर + ङीष्), 'अष्टवर्षा भवेद्गौरी' 'गौरीगुरोर्गह्वरमा-विवेश' (रघुवंश-२।२६), इयं ब्राह्मणी = (ब्राह्मण + ङीष्)। आबन्तस्य यथा— विद्या (इयं) (विद् + क्यप् + टाप्)। उदाहरणं— 'विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्नगुप्तं धनम्' (भर्तृहरि-२।२०)। एवमेव भिदा, त्वरा, जरादयः टाबन्ताः स्त्रीलिङ्गाः शब्दाः भविष्यन्ति।

हिन्दी– ऊङ् प्रत्ययान्त शब्द, जैसे— कुरू, कर्कन्धू; ङी (ङीप्-ङीष्-

ङीन्) प्रत्ययान्त शब्द, जैसे— कर्त्री, गौरी, ब्राह्मणी आदि तथा आबन्त— विद्या, भिदा, त्वरा, जरा आदि शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं ।

१२. य्वन्तमेकाक्षरम् । यू अन्तम् एकाक्षरम् । अत्र द्वन्द्वगर्भो बहुव्रीहिः, यथा— ई च ऊ चेति यू, यू अन्ते यस्य तत् = य्वन्तम् ।

व्याख्या– एकाक्षरः ईकारान्तः ऊकारन्तश्च असति विशेषे स्त्रीलिङ्गः स्यात् । तत्र ईकारान्तो यथा— श्रीः, 'साहसे श्रीः प्रतिवसति' (मृच्छ०-४), ऊकारान्तश्च यथा— भूः = भू + क्विप् = पृथ्वी, उदाहरणं यथा— 'मत्तेव कुम्भदलने भुवि सन्ति शूराः' । अत्र दीव्यतेः क्विपि तु विशेषलिङ्गता । एकाक्षरं किम् ? बहुव्रीहौ— पृथुश्रीः, प्राप्तभूः विशेष्यलिङ्ग एव ।

हिन्दी– एक अक्षर वाला, चाहे वह ईकारान्त हो अथवा ऊकारान्त, किसी विशेष सूत्र द्वारा विना निर्देश के भी स्त्रीलिङ्ग होता है । ईकारान्त यथा— श्री, ऊकारान्त यथा— भू आदि । सूत्र में एकाक्षर (एक अक्षर वाला) कहने का प्रयोजन यह है कि पृथुश्री, प्राप्तभू आदि बहुव्रीहि समास में विशेष्यलिङ्ग होगा ।

१३. विंशत्यादिरानवतेः । विंशतिः आदिर्यस्य स विंशत्यादिः (बहुव्रीहिः), आनवतेः = नवतिपर्यन्तम्, 'आङ् मर्यादाभिविध्योरि'ति बलात् ।

व्याख्या– विंशतिसंख्याप्रभृतयः नवतिसंख्यापर्यन्ताः सङ्ख्यासङ्ख्येयवाचकाः स्त्रियां (स्त्रीलिङ्गे) स्युरिति । यथा— इयं विशतिः = द्वे दश परिमाणमस्य नि० सिद्धिः । एवमेव त्रिंशत्, चत्वारिंशत्, पञ्चाशत्, षष्टिः, सप्ततिः, अशीतिः, नवतिः संख्याशब्दाः स्त्रीलिङ्गाः भवन्ति । कृदिकारान्तत्वाभावात् विंशत्यादिभ्यो न ङीप् । एकविंशत्यादेस्तु 'परवल्लिङ्गं द्वन्द्वतत्पुरुषयोः' इति स्त्रीत्वमेव एकनवत्यादेः नवतिलिङ्गानतिवृत्तेर्न विधित्व-व्याघातः । आनवतेः किम् ? शतं सहस्रम् । विंशत्यादयः किम् ? एकादशादेर्विशेष्य-लिङ्गत्वम् ।

हिन्दी– विंशति (बीस) से लेकर नवति (नब्बे) संख्यापर्यन्त संख्येय शब्द स्त्रीलिंग होते हैं । यथा- विंशति, त्रिंशत्, चत्वारिंशत् आदि शब्द ।

१४. दुन्दुभिरक्षेषु । दुन्दुभिः अक्षेषु (दुन्दु इत्यव्यक्तशब्देन भाति, भा + कि) ।

व्याख्या– अक्षार्थको दुन्दुभिशब्दः स्त्रीलिङ्गः स्यात् । यथा— इयं दुन्दुभिः, पक्षे ङी- दुन्दुभी इत्यपि । अक्षादन्यत्र न स्त्रीत्वं तत्र पुंस्त्वमेव, यथा— 'विजयदुन्दुभितां ययुरर्णवाः' (रघुवंश-९।११) । अत्र पुंस्त्वम् ।

हिन्दी– दुन्दुभि शब्द का यदि अक्ष (जुआ) अर्थ में प्रयोग किया जाय तो वह स्त्रीलिङ्ग होता है; लेकिन यदि उससे किसी भिन्न अर्थ में प्रयोग हो तो वहाँ वह पुंल्लिङ्ग ही होगा ।

१५. नाभिरक्षत्रिये । नाभिः अक्षत्रिये, (नह् + इञ् भश्चान्तादेशः = नाभिः) ।

व्याख्या– क्षत्रियार्थकभिन्नो नाभिशब्दः स्त्रीलिङ्गः स्यात् । एतावता सूच्यते यत् क्षत्रियार्थकभिन्नस्य नाभिशब्दस्य पुंस्त्वं सिद्ध्यति । कथनस्याभिप्रायोऽयं यदस्य शब्दस्य द्वयोर्लिङ्गयोः शक्तिः अक्षत्रिये नाभिशब्दे स्त्रीलिङ्गः, अन्यत्र पुंलिङ्ग इति भावः । यथा— इयं नाभिः (अक्षावयवः) वा ङीप्— नाभी । वैशिष्टयञ्चात्र— बहुव्रीहि-समासान्ते प्रयुक्तो नाभि-शब्दः परिवर्त्य 'नाभ' इति भवति । यथा— पद्मनाभः ।

हिन्दी– क्षत्रिय से भिन्न अर्थवाचक 'नाभि' शब्द स्त्रीलिंग होता है । इससे यह ज्ञात होता है कि क्षत्रियार्थक-भिन्न 'नाभि' शब्द पुंलिङ्ग सिद्ध होता है । कहने का अभिप्राय यह है कि इस शब्द का दोनों लिङ्गों में प्रयोग होता है । निष्कर्ष यह है कि— क्षत्रियार्थक नाभि शब्द स्त्रीलिङ्ग और अन्यत्र पुंलिङ्ग होता है । जैसे— इयं (स्त्रीवाचक) नाभिः । विकल्प से ङीप् होने पर 'नाभी' होता है । साथ ही इसकी एक विशेषता यह भी है कि बहुव्रीहि समास के अन्त में प्रयुक्त 'नाभि' शब्द बदल कर 'नाभ' हो जाता है, जैसे— पद्मनाभ ।

१६. उभावन्यत्र पुंसि । उभौ अन्यत्र पुंसि ।

व्याख्या– उभौ = दुन्दुभि-नाभिशब्दौ क्रमेण नाभिभिन्ने क्षत्रिये च वर्त्तमानौ पुंल्लिङ्गौ स्याताम् । यथा— अयं दुन्दुभिः (वाद्यभेदः असुरभेदो वा), अयं नाभिः (क्षत्रियः) । 'लिङ्गमशिष्यं लोकाश्रयत्वात्' इत्युक्तेः क्वचिद् व्यभिचारः । तेन अवयववाचकस्य पुंस्त्वमपि, यथा— 'समुल्लसत्पङ्कजपत्रकोमलैरुपाहितश्रोण्युपनीविनाभिभिः' । अत एव पुंस्त्वम् । अत एव रभसः = उग्रता-शीघ्रता-वेग-आतुरतादयः । तथा च 'आलीषु केलीरभसेन बाला मुहु-र्ममालापमपालयन्ती' (भामिनी०-२।१२) । 'मुख्यराट् क्षत्रिये नाभिः पुंसि प्राण्यङ्गके द्वयोः । चक्रमध्ये प्रधाने च स्त्रियां कस्तूरिका मदे' ॥ इति कथ्यते ।

हिन्दी– उपर्युक्त दोनों– दुन्दुभि और नाभि शब्द क्रम से नाभिभिन्न में तथा क्षत्रिय अर्थ में वर्तमान रहने पर पुंल्लिङ्ग होते हैं । जैसे— अयं दुन्दुभिः (वाद्यभेद अथवा असुर-भेद), अयं नाभिः (पुंल्लिङ्ग– क्षत्रिय) अर्थ में पुंल्लिङ्ग होते हैं ।

१७. तलन्तः । तल् + अन्तः = तलन्तः, तल् अन्ते यस्यासौ तलन्तः (बहुव्रीहिः) ।

व्याख्या– भावाद्यर्थे विहिततल्प्रत्ययान्तः शब्दः स्त्रीलिङ्गः स्यात् । यथा— शुभ्रस्य भावः शुभ्रता; एवमेव जडता, मृदुता । शुभ्रता = शुभ् + रक् + ता । जडता = जड + तल् + टाप्, मृदुता = मृद् + कु + तल् + टाप्; 'महर्षिमृदुतामगच्छत्' (रघुवंश-५।५४) । ब्राह्मणस्य कर्म भावो वा ब्राह्मणता, जनानां समूहो जनता, ग्रामता । देव एव देवता 'स्वार्थिका अपि प्रत्ययाः क्वचित्प्रकृतितो लिङ्गवचनान्यतिवर्त्तन्ते' इत्युक्ते प्रकृतिभिन्नलिङ्गत्वम्भवति ।

हिन्दी– भाव आदि अर्थ में प्रयुक्त तल् प्रत्ययान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं । जैसे— शुभ्र (सफेद) का भाव शुभ्रता = स्वच्छता । इसी प्रकार जड का भाव जडता, मृदु का भाव मृदुता, ब्राह्मण का कर्म अथवा भाव ब्राह्मणता, जनों का समूह जनता, ग्रामता, देव ही देवता होते हैं । सर्वत्र स्त्रीलिङ्ग होते हैं । 'स्वार्थिक प्रत्यय भी कहीं प्रकृति से लिङ्ग तथा वचन का अतिक्रमण कर जाते हैं' ऐसा कहने पर प्रकृतिभिन्न लिङ्गत्व होता है ।

१८. भूमिविद्युत्सरिल्लतावनिताभिधानानि । अत्र द्वन्द्वगर्भात्मकस्तत्पुरुषसमासः । भूमि— भवन्त्यस्मिन् भूतानि— भू + मि + किच्च वा ङीप्, विद्युत्— विशेषेण द्योतते— वि+ द्युत् + क्विप् 'वाताय कपिला विद्युत्' (महा०-५।१९), सरित्— सृ + इति 'अन्या सरितां शतानि हि समुद्रगाः प्रापयन्त्यब्धिम्' (माल०-५।१९), लता— लत् + अच् + टाप् 'लतेव सन्नद्धमनोज्ञपल्लवा'; वनिता— वन + क्त + टाप् 'वनेचराणां वनितासखानाम्' ।

व्याख्या– भूम्यादिपर्य्यायवाचकशब्दाः स्त्रीलिङ्गाः भवन्ति । इयमचला, अनन्ता, विश्वम्भरा आदयः । इयं विद्युत्, तडित्, सौदामनी, चपला, चञ्चलेत्यादयः । इयं सरित्, निम्नगा, आपगा । इयं लता, वल्ली, वल्लरी, व्रततिः । इयं वनिता, योषित्, अबलेत्यादयः शब्दाः स्त्रीलिङ्गाः भवेयुरिति ।

हिन्दी– भूमि आदि के पर्यायवाचक शब्द भी स्त्रीलिङ्ग होते हैं, जैसे— भूमि के पर्यायवाचक अचला, अनन्ता, विश्वम्भरा आदि । विद्युत् के तडित्, सौदामनी, चपला, चञ्चला आदि । सरित् के निम्नगा, आपगा । लता के वल्ली, वल्लरी, व्रतति और वनिता के योषित्, अबला आदि शब्द भी स्त्रीलिङ्ग होते हैं ।

१९. यादो नपुंसकम् । (यान्ति वेगेन— या + असुन् + दुगागमः, यादांसि जल-जन्तवः) 'वरुणो यादसामहम्' (गीता-१०।२९) ।

व्याख्या– यादस्-शब्दः सरिद्वाचकोऽपि नपुंसकलिङ्गः स्यात् । पूर्वसूत्रापवादः । यथा— इदं यादः (नदी) ।

हिन्दी– यादस् शब्द नदीवाचक भी नपुंसकलिङ्ग होता है । यह पूर्व सूत्र का अपवाद-स्वरूप है । जैसे— इदं (नपुंसक) यादः (नदी) ।

२०. भास्स्रुक्स्रग्दिग्दृगुष्णिगुपानहः । (अत्र इतेरतरद्वन्द्वसमासः) । भास् + क्विप् 'दृशां निशेन्दीवरचारुभासा' (नैषध-२२।४३) । भास् स्रुक स्रग् दिग् दृग् उष्णिक् उपानत् (हः) ।

व्याख्या– उपर्युक्ताः शब्दाः स्त्रीलिङ्गवाचकाः भवन्ति । इयं भाः = कान्तिः, स्रुक् = स्रुवः, दिक् = काष्ठा, उष्णिक् = वैदिकछन्दोविशेषः, उपानत् = पादत्राणम् ।

हिन्दी– उपर्युक्त भास्, स्रुक्, स्रग्, दिग्, दृग्, उष्णिक्, उपानत्— ये शब्द स्त्रीलिङ्ग में होते हैं ।

२१. स्थूणोर्णे नपुंसके च । स्थूणा-ऊर्णे-नपुंसके च; स्था + नक् उदन्तादेशः, पृषो०, ऊर्ण + टाप् ।

व्याख्या– स्थूणा-ऊर्णाशब्दौ स्त्रीलिङ्गे चात् नपुंसके च स्तः । यथा— इयं स्थूणा– इदं स्थूणम् (काष्ठमयी द्विकर्णिका), ऊर्णा (इयं), इदं स्थूणमिति । (मेषादि लोम) ।

हिन्दी– ऊपर निर्दिष्ट स्थूणा और ऊर्णा शब्द स्त्रीलिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

२२. गृहशशाभ्यां क्लीबे । (इतरेतरद्वन्द्वसमासः) । ग्रह + क = गृह, शश् + अचः = शशः) ।

व्याख्या– स्थूणाशब्दः गृहपूर्वकः शशपूर्वकश्च ऊर्णाशब्दः क्लीब(नपुंसक)लिङ्ग एव स्यात्, न तु स्त्रियाम् । परवल्लिङ्गतापवादः । यथा— गृहस्थूणम्, शशोर्णम् । 'न गृहं गृहमित्याहुः गृहिणी गृहमुच्यते' (पञ्च०-४।८१) ।

हिन्दी– गृहपूर्वक 'स्थूणा' शब्द तथा शशपूर्वक 'ऊर्णा' शब्द नपुंसकलिङ्ग में ही हो, स्त्रीलिङ्ग में नहीं । जैसे— गृहस्थूणम्, शशोर्णम् (नपुंसक) हैं ।

२३. प्रावृड्विप्रुड्रुड्विट्त्विषः । (इतरेतरद्वन्द्वसमासः) । प्रावृड्— प्र + आ + वृष् + क्विप् 'प्रावृट् प्रावृडिति ब्रवीति शठधी क्षारं क्षते प्रक्षिपत्' (मृच्छकटिक-५।१८) । विप्रुड्— वि + प्रुष् + क्विप् 'नवजलविप्रुषो गृहीत्वा' (शिशुपाल-

८।४०)। रुड्— रुष् + क्विप् 'निर्बन्धसञ्जातरुषा' (रघुवंश-५।२१)। विट्— विष् + क्विप्। त्विषः— त्विष् + क्विप् 'चयत्विषामित्यवधारितं पुरा' (शिशुपाल-१।३)।

व्याख्या– एते पूर्वोक्ताः शब्दाः स्त्रीलिङ्गे स्युः। यथा— इयं प्रावृट्, इयं विप्रुट्, इयं रुट्, इयं विट्, इयं त्विट् च।

हिन्दी– उपर्युक्त सूत्र में कथित प्रावृट् (प्रावृष्), विप्रुट् (विप्रुष्), रुट् (रुष्), विट् (विष्) और त्विट् (त्विष्) शब्द स्त्रीलिङ्ग में होते हैं।

२४. दर्विविदिवेदिखनिशाण्यभ्रिवेणिकृष्योषध्यङ्गुलयः। (अस्मिन् सूत्रे इतरेतर-द्वन्द्वसमासः) दर्वि, विदि, वेदि, खनि, शाणि, अभ्रि, वेणि, कृषि, ओषधि, अङ्गुलि—)।

व्याख्या– उपर्युक्ताः एते शब्दाः स्त्रीलिङ्गाः स्युरिति। पक्षे ङीप्। यथा— इयं दर्विः, विदिः, वेदिः, खनिः, शाणिः, अभ्रिः, वेणिः, कृषिः, ओषधिः, अङ्गुलिः (सर्वत्र पूर्वमियमिति योज्यम्)। पक्षे ङीप् सर्वत्र, यथा— दर्वीकरः, 'अङ्गुलीवोरगक्षता' इति कालिदासः।

व्युत्पत्तिः– दर्वि–दर्वी— दृ + विन् + वा ङीष्। विदि (श्)— दिग्भ्यो विगता, वेदिः–वेदी— विद् + इन्, पक्षे ङीप् 'मध्येन सा वेदिविलग्नमध्या' (कुमारसम्भव-१।३७)। खनिः–नी— खन् + इ, स्त्रियां ङीष्। शाणि— शण् + इण्। अभ्रि–भ्री— अभ्र + इन् ङीष् वा। अश्रि पाठे— अश् + क्रि, पक्षे ङीष् 'वृत्रस्य हन्तुः कुलिशं कुण्ठिताश्रीवलक्ष्यत' (कुमारसम्भव-२।३०)। वेणिः–णी— वेण् + इन् ङीप् वा, 'तरङ्गिणी वेणिरिवायता भुवः' (शिशुपाल-१२।७५)। कृषिः— कृष् + इक् 'चीयते बालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषिः' (मुद्राराक्षस-३)। ओषधिः–धी— ओष + धा + कि, स्त्रियां ङीष्। अङ्गुलि— अङ्ग + उलिः।

हिन्दी– उपर्युक्त दर्वि, विदि, वेदि, खनि, शाणि, अभ्रि, वेणि, कृषि, ओषधि और अङ्गुलि शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं; पक्ष में सर्वत्र ङीप् होता है। अतः 'दर्वीकर' आदि प्रयोग सिद्ध होते हैं।

२५. तिथिनाडिरुचिवीचिनालिधूलिकिकिकेलिच्छविरात्र्यादयः। अत्र बहुव्रीहि-सम्पृक्तो द्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– एते शब्दाः स्त्रीलिङ्गाः स्युः। तत्रादौ तिथिः— अत् + इथिन्, (पृषो०) पक्षे ङीप्। नाडि— नड् + णिच् + इन्। रुचि— रुच् + कि 'रुचिमिन्दुदले करोत्यजः परिपूर्णेन्दुरुचिर्महीपतिः' (शिशुपाल-१६।७१)। वीचि— वे + ईचि

डिच्च, वीचि + ङीष् 'समुद्रवीचीवचलस्वभावाः' (पञ्च०-१।१९४)। नालि— नल् + णिच् + इनि, नालि + ङीष्। धूलि— धू + लि वा०, धूलि + ङीष्, 'अनीत्वा पङ्कतां धूलिमुदकं नावतिष्ठते' (शिशुपाल-२।३४)। किकि— कक + इन् (पृषोदरादित्वात् इत्वम्)। केलि— केल् + इन्, 'केलिचलन्मणिकुण्डल' (गीत०-१)। छवि— छयति असारं छिनत्ति तमो वा— छो + वि + किच्च वा ङीप्। रात्रि— राति सुखं भयं वा, रा + त्रिप् वा ङीप् 'रात्रिर्गता मतिमतां वर मुञ्च शय्याम्' (रघुवंश-५।६३)।

हिन्दी– उपर्युक्त तिथि, नाडि, रुचि, वीचि, नालि, धूलि, किकि, केलि, छवि और रात्रि तथा उसके पर्यायवाचक शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं; जैसे— निशा, निशीथनी, क्षणदा, क्षपा आदि। साथ ही तिथि से रात्रिपर्यन्त शब्दों में ङीप् विधान से दीर्घ होकर रात्री, तिथी, वीची इत्यादि भी होते हैं।

२६. शष्कुलिराजिकुट्यवन्तिवर्त्तिभ्रुकुटित्रुटिबलिपङ्क्तयः। अस्मिन् सूत्रे इतरेतर-द्वन्द्वसमासः, शष्कुलिश्च पङ्क्तिश्चेति।

व्याख्या– शष्कुलि-ली— शष् (स्) + कुलच् + ङीष्, 'अवलम्बितकर्णशष्कुली कलसीकं रचयन्नवोचत्' (नैषध-२।८)। राजि-जी— राज् + इन् + ङीप्, 'सर्वं पण्डितराजराजितिलकेनाकारि लोकोत्तरम्' (भामिनी०-४।४४)। कुटि-टी— कुट् + इन्। अवन्ति-न्ती— अव + झिच्, पक्षे ङीष्। वर्त्ति-र्त्ती— वृत् + इन् वा ङीप्, 'कर्पूरवर्त्तिरिव लोचनतापहन्त्री' (भामिनी०-३।१६)। भ्रुकुटि-टी— भ्रुवः कुटिः कौटिल्यम् (षष्ठी तत्पुरुषः)। त्रुटि-टी— त्रुट् + इन् कित्, त्रुटि + ङीष्। बलि— बल् + इन्। पङ्क्ति— पंच् + क्तिन्, 'दृश्येत चारुपदपङ्क्तिरलक्तकाङ्का' (विक्रम०-४।६)।

एते शब्दाः स्त्रियां स्युः। इयं शष्कुलिः, राजि इत्यादि। सर्वेभ्यः शब्देभ्यः पक्षे ङीप्।

हिन्दी– सूत्रनिर्दिष्ट शष्कुलि-ली आदि सभी शब्द स्त्रीलिङ्गवाचक होते हैं।

२७. प्रतिपदापद्विपत्संपच्छरत्संसत्परिषदुषःसंवित्क्षुत्पुन्मुत्समिधः। 'प्रतिपदापद् ....समिधः' अत्रेतरेतरद्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– प्रतिपत्, आपत्, विपत्, संपत्, शरत्, संसत्, परिषत्, उषस्, संवित्, क्षुत्, पुत्, मुत्, समित् इत्येते शब्दाः स्त्रीलिङ्गवाचकाः भवन्ति। यथा— इयं प्रतिपत्— प्रति + पद् + क्विप् 'प्रतिपच्चन्द्रनिभोऽयमात्मजः' (रघुवंश-८।६५)। इयमापद्— आ + पद् + क्विप् 'दैवीनां मानुषीणाञ्च प्रतिहर्ता त्वमापदाम्' (रघुवंश-१।६०)। इयं सम्पद्— सम् + पद् + क्विप् 'नीताविवोत्साहगुणेन सम्पद्' (कुमार०-

१।२२)। अनेनैव प्रकारेण शरदादयः शब्दा अपि स्त्रियामेव स्युरिति । उषस्— उष् + असि 'प्रदीपार्चिरिवोषसि' (रघुवंश-१२।१), 'उषा' प्रातरधिष्ठात्री देवता, ओषत्यन्धकार- उष + क, 'उषा उशन्ति' इति वेदमन्त्रः ।

हिन्दी– इस सूत्र में कथित प्रतिपत्, आपत्, विपद्, संपत्, शरत्, संसत्, परिषत्, उषस्, क्षुत्, पुत्, मुत्, समित्— ये शब्द स्त्रीलिङ्गवाचक होते हैं ।

२८. आशीर्धूः पूर्गीर्द्वारः । (इत्यत्रेतरेतरद्वन्द्वसमासः)।

व्याख्या– आशीः, धूः, पूः, गीः, द्वाश्चेते शब्दाः स्त्रियां (स्त्रीलिङ्गवाचकाः) भवन्ति । यथा— इयमाशीः (शीः, शीभ्याम् आदि)— आ + शास् + क्विप्- इत्वम्) । धूः— धू + क्विप् । द्वार् (द्वाः)— द्वृ + णिच् + विच् ।

हिन्दी– आशीः, धूः, पूः, गीः और द्वाः— ये शब्द स्त्रीलिङ्गवाचक होते हैं।

२९. अप्सुमनस्समासिकता वर्षाणां बहुत्वञ्च । (सूत्रेऽस्मिन्नितरेतरद्वन्द्वसमासः)। अप्-सुमनस्-समा-सिकता-वर्षाणां बहुत्वं चेत्यन्वयः ।

व्याख्या– अप्प्रभृतीनां पञ्चानां स्त्रीत्वं बहुवचनान्तत्वञ्च स्यात् । अप्— आप् + क्विप् + ह्रस्वश्च । परिनिष्ठितभाषायां केवलं बहुवचने एव प्रयोगः, 'अप एव ससर्जादौ तासु बीजमवासृजत्' (मनु०-१।८) । सुमनस्— सु + डु + मनस्, 'किं सेव्यते सुमनसां मनसापि गन्धः कस्तूरिकाजननशक्तिभृता मृगेण' रस० (शिशुपाल-६।६६)। समा— सम् + अच् + टाप् । प्रायो बहुवचने एव प्रयोगः; किञ्च महर्षिणा पाणिनिना एकवचनेऽपि प्रयुक्तः, यथा— समां-समाम् (पा०-५।२।१२), 'तेनाष्टौ परिगमिताः समाः कथञ्चित्' (रघुवंश-८।१२) । सिकता— सिक + अतच् + टाप् । प्रायो बहुवचने प्रयोगः, 'लभेत् सिकतासु तैलमपि यत्नतः पीडयन्' (भर्तृहरिशतक-२।५)। वर्षा— वृष् + अच् + टाप् । प्रायः बहुवचने 'वर्षासु स्थण्डिलेशयः' (याज्ञ०-३।५२) । यथा— इमाः आपः, इमा सुमनसः, पुष्पसामान्यवाचित्व एवास्य बहुत्वं, तेन 'सुमना मालती जातिः' इत्यादावेकत्वम् । देववाचकस्य तु पुंस्त्वमेव । बहुत्वं चैषां प्रायिकम् । अत एव अर्थवत्सूत्रभाष्ये 'एकाच सिकता तैलदाने असमर्था' इति प्रयुक्तम् । 'विभाषा पाघ्राधेट्' इति सूत्रवृत्तिव्याख्यायाम् 'आघ्रासातां सुमनसौ' इति हरदत्तेन प्रयुक्तम् ।

हिन्दी– उपर्युक्त पाँच शब्द— अप्, सुमनस्, समा, सिकता और वर्षा नित्य बहु-वचनान्त तथा स्त्रीलिङ्ग में होते हैं । कहीं-कहीं पुष्पविशेष में 'सुमना' एकवचन भी प्रयुक्त है । देववाचकत्व में पुंस्त्व लिङ्ग होता है ।

३०. स्रक्त्वग्ज्योग्वाग्यवागूनौ स्फिचः । क्वचित् स्रुक्, स्फिजः इति पाठः । स्रक्....स्फिचः इत्यत्र इतरेतरद्वन्द्वसमासः । शुक त्वग् ज्योग् वाग् यवागू नौ स्फिचः(जः) इत्यपि पाठः ।

व्याख्या– शुक्-स्रुक्- (भ्वादि-परस्मैपद— शोकति), सृज्यते— सृज् + क्विन् + नि । त्वग्— त्वच् + क्विप् । वाग् (वाच्)— वच् + क्विप्, 'दीर्घोऽसम्प्रसारणञ्च' । यवागू— (यूयते = मिश्र्यते— यु + आगू) 'यवागू विरलद्रवा' (सुश्रुत) । नौः— नुद्यते अनया— नुद् + डौ 'महता पुण्यपण्येन क्रीतेयं कायनौस्त्वया' (शाकुन्तल-३।१) । स्फिचः (स्फिजः)— स्फाय + डिच् 'अंसस्फिक्पृष्ठपिण्डाद्यवयवसुलभान्युग्र-पूतानि जग्ध्वा' (मा०-५।१६) । अत्र विवृताः शब्दाः स्त्रियां = स्त्रीलिङ्गे स्युरिति ।

हिन्दी– उपर्युक्त विवेचित शुक् अथवा स्रुक्, त्वग्, ज्योग्, वाग्, यवागू, स्फिच् अथवा स्फिज् शब्द स्त्रीलिङ्गवाचक होते हैं ।

३१. तटिसीमासम्बध्याः । क्वचित् 'तृटि' इत्यपि पाठः । इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– तटि अथवा तृटि, सीमा, सम्बध्या एते शब्दाः स्त्रीलिङ्गवाचकाः भवन्ति । तद्यथा— तटिस्थाने कोशे 'तटिनी'शब्दः, तटमस्त्यस्या इति ङीप्; 'कदा वाराणस्याममरतटिनी रोधसि वसन्' (भर्तृ०-३।१२३) । सीमा— सीमन् + डाप्, 'सीमां प्रति समुत्पन्ने विवादे' (मनु०-८।२४५) । सम्बध्या— सम् + बंध + क्त + ल्यप् + टाप् ।

हिन्दी– उपर्युक्त तटि या तटिनी अथवा तृटि, सीमा और सम्बध्या शब्द स्त्रीलिङ्गी होते हैं ।

३२. चूल्लिवेणिखार्यश्च । क्वचित्पुस्तके 'चुल्लि' इति पाठः । चूल्लि (चुल्लि) वेणि खार्यः च (इतरेतरद्वन्द्वसमासः) ।

व्याख्या– चुल्लि— चुल्ल + इन्, वेणि-वेणी— वेण् + इन् ङीप् वा, 'तरङ्गिणी वेणिरिवायतो भुवः' 'वनान्निवृत्तेन रघूत्तमेन मुक्ता स्वयं वेणिरिवाबभासे' (रघुवंश-१४।१२) । खारः— खारिः-खारी (स्त्री)— खम् = आकाशम् आधिक्येन ऋच्छति— ख + ऋ + अण्, ख + आ + रा + क + ङीष् वा ह्रस्वः । एते चूल्लि-वेणि-खारि(री)शब्दाः स्त्रियां स्युः । इयं चूल्लिः, इयं वेणिः, इयं खारिः; पक्षे ङीष् ।

हिन्दी– उपर्युक्त चूल्लि (चुल्लि), वेणि और खारि (री) शब्द स्त्रीलिङ्ग में होते हैं अर्थात् स्त्रीलिङ्गवाचक होते हैं ।

३३. ताराधाराज्योत्स्नादयश्च । तारा, धारा, ज्योत्स्ना आदयः च (बहुव्रीहि-सम्पृक्तो द्वन्द्वसमासः) ।

व्याख्या– तारा— तार + टाप् 'हंसश्रेणीषु तारासु' (रघुवंश-४।१९) । धारा— धार + टाप् 'ध्रुवं स नीलोत्पलपत्रधारया शमीलतां छेत्तुमृषिर्व्यवस्यति' (शाकुन्तल-१।९८) । ज्योत्स्ना— ज्योतिरस्ति अस्याम्— ज्योतिस् + न, उपधालोपः 'स्फुरत्स्फार-ज्योत्स्नाधवलिततले क्वापि पुलिने' (भर्तृ०-३।४२) । एते तारा-धारा-ज्योत्स्ना-शब्दाः स्त्रियां (स्त्रीलिङ्गे) स्युः ।

हिन्दी– उपर्युक्त तारा, धारा और ज्योत्स्ना शब्द स्त्रीलिङ्गी होते हैं ।

३४. शलाका स्त्रियां नित्यम् ।

व्याख्या– शलाका (शल् + आकः टाप् 'अज्ञानान्धस्य लोकस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया । चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै पाणिनये नमः ॥' शिक्षा-५८) शब्दो नित्यस्त्रीलिङ्गः । यथा— इयं शलाका ।

विशेषनिर्वचनम्– स्त्रीत्यधिकारे पुनः स्त्रीग्रहणमधिकारनिवृत्त्यर्थम् । नित्यग्रहणमन्येषां व्यभिचारसूचनार्थम् । यत्र यत्र च व्यभिचारः तत्तत् पूर्वमुक्तम् ।

हिन्दी– 'शलाका' शब्द नित्य स्त्रीलिङ्ग होता है । यहाँ इस स्त्रीलिङ्गाधिकार में पुनः इस सूत्र में 'स्त्री' ग्रहण अधिकार के निवृत्ति को सूचित करता है और 'नित्य' ग्रहण व्यभिचार (अन्य लिङ्ग में नहीं) सूचनार्थ है । जहाँ कहीं व्यभिचार (अन्य लिङ्ग में प्रयोग) सम्भव है, वहाँ वह पूर्व में ही सूचित कर दिया गया है ।

विशेष– यहाँ सूत्रपाठ आदि के अनुसार कुछ अवशिष्ट विषय सूचित किया जाता है । 'स्त्रियां क्तिन् (३।३।९४) सूत्र के अधिकार में जो विहित क्यप् आदि प्रत्यय हैं, उनके अन्त वाले शब्द भी स्त्रीलिङ्ग में होते हैं; जैसे— व्रज और यज धातु से भाव में क्यप् प्रत्यय करने पर (३।३।९८ सूत्र) 'प्रव्रज्या' और 'इज्या' सिद्ध होते हैं, वे स्त्रीलिङ्ग होते हैं ।

'संज्ञायां समजनिषदनिपतमनविदषुञ्शीङ्भृञिणः' (३।३।९९) के प्रयोग से समज्या, समा, निषद्या, आपण, निषद्या— पिच्छिला भूमि, मन्या— गलपार्श्वशिरा, विद्या, सत्या— अभिषव, शय्या, भृत्या, शिविका आदि; 'कृञः श च' (३।३।१००)— क्रिया, इच्छा (३।३।१०१) इच्छा वहीं पठित 'परिचर्यापरिसर्य्यामृगयाटाट्या-नामुपसंख्यानम्' वार्त्तिक के अनुसार परिचर्या = पूजा, परिसर्या, मृगया, अटाट्या

आदि स्त्रीलिङ्ग होते हैं। इसी प्रकार 'जागर्त्तेरकारो वा' (वार्त्तिक)— जागरा, जागर्या। 'अप्रत्ययात्' (३।३।१०२) सूत्रोदाहरण— जिगमिषा, विविदिषा, पुत्रकाम्या। 'गुरोश्च हलः' (३।३।१०३)— ईहा, ऊहा, मूर्च्छा। 'षिद्भिदादिभ्योऽङ्' (३।३।१०४) सूत्रोदाहरण— जरा, त्रपा, लज्जा, भिदा, छिदा। 'चिन्तिपूजिकाथकुम्बिचर्चश्च' (३।३।१०५)— चिन्ता, पूजा, कथा, कुम्बा, चर्चा। 'आतश्चोपसर्गे' (३।३।१०६)— उपधा, उपमा, उपदा। 'श्रदन्तरोरुपसङ्ख्यानम्' (वार्त्तिक)— श्रद्धा, अन्तर्द्धा। 'ण्यास-श्रन्थो युच्' (३।३।१०७)— कारणा, यातना, पीड़ना, आसना, श्रन्थना। 'घट्टिवन्दि-विदिभ्यश्च' (वार्त्तिक)— घट्टना, वन्दना, वेदना। 'इषेरनिच्छार्थस्य' (वार्त्तिक)— अन्वेषणा। 'परेर्वा' (वार्त्तिक)— पर्येषणा। 'रोगाख्यायां ण्वुल् बहुलम्' (३।३।१०८)— प्रच्छर्दिका, प्रवाहिका, विचर्चिका। 'धात्वर्थनिर्देशे ण्वुल्वक्तव्यः' (वार्त्तिक)— आसिका, शायिका। 'संज्ञायाम्' (३।३।१०९)— उद्दालपुष्पभञ्जिका। 'विभाषाख्यानपरिप्रश्नयोरिञ् च' (३।३।११०)— 'कां कारिं, कारिकां, क्रियां, कृत्यां, कृतिं वा त्वम-कार्षीरिति' ऐसे प्रश्न में 'सर्वां कारिं कारिकां वाऽकार्षम्' उत्तर होगा। इसी प्रकार गणिं, गणिकां, गणनाम्। पाचिं पाचिकां, पचां, पंक्तिम्। (इत्यादयोऽनेके शब्दाः) इत्यादि अनेक शब्द सूत्रनिर्देशानुसार स्त्रीलिङ्ग में व्यवहृत हैं; जो यहाँ विस्तारभय से उल्लिखित नहीं किये गये हैं।

इनके अतिरिक्त कुछ अन्य शब्द भी स्त्रीलिङ्ग के रूप में अभिहित (कथित) हैं। जैसे— तिन्दुकी, कणिका, भङ्गि, सुरङ्गा, सूचि, गाति, काकिनी (णी), चूणि, शाणी, द्रुणि, दरत। कन्या, आसन्दी (आसन), झल्लरी, चर्चरी, पारी, होरा, लट्वा, सिध्मला, लाक्षा, लिक्षा, गण्डूषा, गृध्रसी, चमसी और मसी आदि शब्द स्त्रीलिङ्ग में चर्चित हैं।

इति स्त्रीलिङ्गानुशासनम्

***

अथ पुँल्लिङ्गप्रकरणम्

३५/१. पुमान् ।

व्याख्या– अधिकारसूत्रमिदं वर्तते । इतोऽनन्तरं 'सारथ्यतिथिकुक्षिबस्तिपाण्यञ्जलयः' इति पर्यन्तं ये शब्दाः विवेचिताः भविष्यन्ति, तेषु 'पुमान्' इत्यस्याधिकारः प्रवर्तते ।

हिन्दी– 'पुमान्' यह अधिकारप्रवर्त्तक सूत्र है । यहाँ से 'सारथ्यतिथि' सूत्र-पर्यन्त इसका अधिकार है ।

३६/२. घञबन्तः । (द्वन्द्वगर्भो बहुव्रीहिसमासः) घञ् + अबन्तः ।

व्याख्या– घञन्तः अबन्तश्च धातुः पुंल्लिङ्गः स्यात् । यथा— घञ् = पाकः, त्यागः । अप्— करः, गरः, तरः, शरः । घञादयो भावार्थका एवेह गृह्यन्ते । यथा— अयं पाकः इत्यादि ।

हिन्दी– घञ् प्रत्ययान्त तथा अप् प्रत्ययान्त धातुजन्य शब्द पुंलिङ्ग होते हैं । जैसे— पाकः आदि ।

३७/३. घाचन्तश्च । घ + अच् + अन्तः च, घाचौ अन्ते यस्य सः घाजन्तः (द्वन्द्व-बहुव्रीहिः) । घान्तः अच् प्रत्ययान्तश्च धातुजन्यः शब्दः पुंसि (पुंल्लिङ्गे) स्यात् । यथा— विस्तरः (वि + स्तृ + अप्), गोचरः, चयः, जयः, नयः (नी + अच्) इत्यादि ।

हिन्दी– घान्त तथ अच् प्रत्यय से निष्पन्न धातुशब्द पुंलिङ्ग होते हैं । जैसे— विस्तर आदि ।

३८/४. भयलिङ्गभगपदानि नपुंसके ।

व्याख्या– इतरेतरद्वन्द्वसमासोऽत्र । भय— विभेत्यस्मात्– 'भी' अपादाने अच् । लिङ्ग— लिङ्ग + अच् । भग— भज् + घ । पद— पद् + अच् । पदं हि सर्वत्र गुणैर्निधीयते । अजाद्यन्तत्वेन पुंस्त्वे प्राप्ते अपवादार्थं सूत्रम् । एते शब्दाः नपुंसकलिङ्गाः स्युः । इदं भयम् ।

हिन्दी– भय, लिङ्ग, भग और पद— ये सभी शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं । यह पूर्व सूत्र का अपवाद है ।

३९/५. नङन्तः ।

व्याख्या– नङ् अन्ते यस्याऽसौ नङन्तः बहुव्रीहिसमासः । नङ्प्रत्ययान्तः शब्दः पुंसि स्यात् । यथा- यत्नः— यत् + भावे नङ्, 'यत्ने कृते यदि न सिद्धयति कोऽत्र दोषः' (हि० प्र०-३१) । प्रश्नः ।

हिन्दी– नङ् प्रत्ययान्त शब्द पुंल्लिङ्ग होते हैं । जैसे- यत्न, प्रश्न, यज्ञ आदि ।

४०/६. याच्ञा स्त्रियाम् ।

व्याख्या– याञ्चा स्त्रियाम् । नङ्प्रत्ययान्तत्वेन पुंस्त्वे प्राप्ते अपवादोऽयम् । याच्ञा— (याच् + नङ् + टाप्) शब्दः स्त्रीलिङ्गे भवति । 'याच्ञा मोघा वरमधिगुणे नाधमे लब्धकामा' (मेघदूत-६) ।

हिन्दी– 'याञ्चा' शब्द में नङ् प्रत्ययान्त होने के कारण पुंस्त्व प्राप्त था, किन्तु बाधित होकर स्त्रीलिङ्ग हुआ ।

४१/७. क्यन्तो घुः ।

व्याख्या– कि + अन्तो घुः । किप्रत्ययान्तो घुः (दाधा) पुंसि स्यात् । यथा— आधिः उदधिः (घटः), व्याधिः, निधिः । घुः किम् ? चक्रिः, जज्ञिः विशेष्यलिङ्ग एव ।

हिन्दी– किप्रत्ययान्त घुसंज्ञक शब्द पुंलिङ्ग होते हैं । जैसे— आधि, उदधि, व्याधि आदि ।

४२/८. इषुधिः स्त्री च । क्यन्तत्वेन पुंस्त्वे प्राप्ते स्त्रीत्वार्थं सूत्रम् ।

व्याख्या– इषुधि (इषु + धा + कि) शब्दः स्त्रीलिङ्गे पुंलिङ्गे च भवति । यथा— इयमयं वा इषुधिः ।

हिन्दी– इषुधि (तरकस) शब्द स्त्रीलिङ्ग और पुंलिङ्ग दोनों में होता है । जैसे— यह 'इषुधि' है ।

४३/९. देवासुरात्मस्वर्गगिरिसमुद्रनखकेशदन्तस्तनभुजकण्ठखड्गशरपङ्का-भिधानानि । (द्वन्द्वतत्पुरुषः) ।

व्याख्या– देवादिपर्यायशब्दाः यथासम्भवं तद्भेदवाचिनश्चासति बाधके पुंल्लिङ्गाः स्युः । यथा— देवाः सुराः । भेदाः ब्रह्मा, विष्णुः, शिवः, शक्रः । असुराः दनुजाः । आत्मा क्षेत्रज्ञः । स्वर्गः नाकः । गिरिः नगः । समुद्रः उदन्वान् सिन्धुः । नखः करजः । केशः कचः । दन्तः दशनः । स्तनः कुचः । भुजः प्रकोष्ठः । कण्ठः गलः । खड्गः असिः । शरः सायकः । पङ्कः कर्दमः । एते शब्दाः पुंलिङ्गाः भवन्ति ।

हिन्दी– सूत्रोक्त देव, असुर, आत्म, स्वर्ग, गिरि, समुद्र, नख, केश, दन्त, स्तन, भुज, कण्ठ, खड्ग, शर और उनके पर्यायवाची शब्द पुंलिङ्ग होते हैं; यदि बाधक सूत्र न हो तो ।

४४/१०. त्रिविष्टपत्रिभुवने नपुंसके । (इतरेतरद्वन्द्वसमासोऽत्र) ।

व्याख्या– तृतीयभुवनवाचक'त्रिविष्टप' ('त्रिपिष्टप'शब्दो वा) क्लीबे स्यात् । यथा— इदं त्रिविष्टपं– स्वर्गः ।

हिन्दी– त्रिविष्टप (अथवा त्रिपिष्टप) तथा त्रिभुवन दोनों शब्द नपुंसकलिङ्ग में होते हैं ।

४५/११. द्यौः स्त्रियाम् । स्वर्गाभिधायित्वेन पुंस्त्वे प्राप्तेऽयमारम्भः ।

व्याख्या– द्योदिवोस्तन्त्रेण ग्रहणम् । द्योशब्दः दिन् शब्दश्च स्त्रियां स्यात् । इयं द्यौः, इमे भूदिवौ ।

हिन्दी– द्यो और दिव् शब्द एकतन्त्र से ग्रहण होता है । अतः द्यो और दिव् शब्द स्त्रीलिङ्गवाची हैं ।

४६/१२. इषुबाहू स्त्रियां च । अत्रेतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– इषु-बाहुशब्दौ पुंसि स्त्रियां च स्याताम् । शरवाचित्वेन भुजवाचित्वेन पुंस्त्वे प्राप्ते पक्षे स्त्रीत्वविधानार्थमारम्भः । यथा— इयमयं वा इषुः बाहुः ।

हिन्दी– इषु और बाहु शब्द पुंल्लिङ्ग और स्त्रीलिंग दोनों में होते हैं ।

४७/१३. बाणकाण्डौ नपुंसके च ।

व्याख्या– बाणश्च काण्डश्च बाणकाण्डौ (इतरेतरद्वन्द्वसमासः) । एतौ बाणकाण्डौ पुंसि नपुंसके च स्याताम् । शरवाचित्वेन पुंस्त्वे प्राप्ते पक्षे क्लीबत्वार्थमारम्भः । यथा— अयमिदं वा बाणः बाणं, काण्डः काण्डम् ।

हिन्दी– बाण और काण्ड— ये दोनों शब्द पुंलिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग में होते है अर्थात् द्विलिङ्गी हैं ।

४८/१४. नान्तः । न् अन्ते यस्य = बहुव्रीहिसमासः ।

व्याख्या– न् इत्येतदन्तः पुंसि स्यात् । यथा— श्वा, तक्षा, वृषा, उक्षा । चर्मवर्मादयस्तु 'मन् द्व्यच्कोऽकर्त्तरि' इति परसूत्रेणास्य बाधात् क्लीबलिङ्गाः । तत्र 'द्व्यच्कः' इत्युक्तेः पृथिमा, मृदिमा इत्यादयः नन्तत्वेन पुंस्येव ।

हिन्दी– न् अन्त में रहने वाले शब्द पुंलिङ्ग होते हैं। जैसे— श्वा, तक्षा, वृषा, उक्षा आदि।

४९/१५. क्रतुपुरुषकपोलगुल्फमेघाभिधानानि। अस्मिन् सूत्रे हि द्वन्द्वसहितः तत्पुरुषसमासः।

व्याख्या– क्रत्वादि (क्रतु-पुरुष-कपोल-गुल्फ-मेघ) पर्यायशब्दाः यथासम्भवं पुंसि स्युः। यथा— क्रतुः अध्वरः। भेदः— उक्थः, अग्निष्टोमः। पुरुषः नरः। कपोलः गण्डः। गुल्फः प्रपदः। मेघः नीरदः जलधरः, भेदः— पुष्करः, आवर्त्तकः।

हिन्दी– क्रतु, पुरुष, कपोल, गुल्फ और मेघ शब्द तथा उनके पर्यायवाची शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं।

५०/१६. अभ्रं नपुंसकम्।

व्याख्या– मेघवाचित्वेन पुंस्त्वप्राप्ते तदपवादः। अभ्र (अभ्र् + अच् अथवा अप्— भृ अपो बिभर्त्ति भृ + क) शब्दः नपुंसकलिङ्गे भवति। यथा— अभ्रम्।

हिन्दी– अभ्र' शब्द नपुंसकलिङ्गी होता है। जैसे— अभ्रम्।

५१/१७. उकारान्तः। उकार + अन्तः, बहुव्रीहिसमासः।

व्याख्या– उकारान्तः शब्दः पुंसि स्यात् , यथा— विभुः, विधुः, इक्षुः। इदञ्च विशेषैरबाधितविषयम्। अत एव 'हनुर्हट्टविलासिन्यां नृत्यारम्भे गदे स्त्रियाम् , द्वयोः कपोलावयवे' इति मेदिनिः।

हिन्दी– उकारान्त शब्द पुंल्लिङ्ग में व्यवहृत हैं। जैसे— विभु, विधु, इक्षु आदि।

५२/१८. धेनुरज्जुकुहूसरयूतनुरेणुप्रियङ्गवः स्त्रियाम्। इतरेतरद्वन्द्वसमासोऽत्र।

व्याख्या– उदन्तत्वेन पुंस्त्वे प्राप्ते तदपवादार्थं सूत्रम्। सूत्रस्थाः शब्दाः स्त्रियां स्युरिति। यथा— इयं धेनुः, रज्जुः कुहुः, सरयु, तनु, रेणु, प्रियङ्गुः। अत्र अप्राणिजातित्वात्पक्षे ऊङ्। कूहूः सरयूः तनूः रेणूः प्रियङ्गूः। धेनोः प्राणित्वात् रज्जोश्च पर्युदासान्नोङ्।

हिन्दी– सूत्रस्थ धेनु, रज्जु, कुहु, सरयू, तनु, रेणु एवं प्रियङ्गु शब्द स्त्रीलिंङ्ग हैं।

५३/१९. समासे रज्जुः पुंसि च।

व्याख्या– समासान्तस्थः रज्जुशब्दः पुंसि (पुंलिङ्गे) भवति, सूत्रस्थचकारात् स्त्रियाम् = स्त्रीलिङ्गेऽपि भवति। रज्जु = (सृज् + उ, असुमागमः धातोस्सलोपः आगमसकारस्य जश्त्वं दकारः, तस्यापि चुत्वं चकारः) कर्कशरज्ज्वा, कर्कशरज्जुना वा बध्नाति।

हिन्दी– समास में रज्जु शब्द पुंलिङ्ग तथा स्त्रीलिङ्ग दोनों होता है। जैसे— कर्कशरज्जुना रज्ज्वा वा।

५४/२०. श्मश्रुजानुस्वाद्वश्रुजतुत्रपुतालूनि नपुंसके। इत्यत्रेतरेतरद्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– उदन्तत्वेन पुंस्त्वे प्राप्ते तदपवादाय सूत्रमिदं प्रवर्त्तितम्। श्मश्रु-जानु-स्वादु-अश्रु-जातु-त्रपु-तालु— एते शब्दाः क्लीबे = नपुंसके स्युरिति। श्मश्रु— श्म पुं मुखं श्रूयते लक्ष्यतेऽनेन— श्रु + डु 'ज्योतिष्कणाहतश्मश्रु' (रघु०-१५।५२)। जानु— जन + ञुण् 'जानुभ्यामवनिं गत्वा'। स्वादु— स्वद् + उण् 'तृषा शुष्यत्यास्ये पिबति सलिलं स्वादु सुरभि' (भर्तृ०-३।९२)। अश्रु— अश्नुते व्याप्नोति नेत्रम-दर्शनाय— अश् + क्रुन्।

हिन्दी– उकारान्त श्मश्रु, जानु, स्वादु, अश्रु, त्रपु, और तालु— ये शब्द नपुंसकलिङ्गी हैं।

५५/२१. वसु चार्थवाचि।

व्याख्या– अर्थवाचि वसुशब्दः क्लीबे = नपुंसके स्यात्। वसु— वस् + उन् 'स्वयं प्रदुग्धेऽस्य गुणैरुपस्नुता वसूपमानस्य वसूनि मेदिनी' (कि०-१।१८)। अर्थवाचीत्युक्तेः 'वसुर्मयूखाग्निधनाधिपेषु देवभेदे च पुमान्'।

हिन्दी– धनवाची उकारान्त 'वसु' शब्द नपुंसकलिङ्गी होता है।

५६/२२. मद्गुमधुशीधुसानुकमण्डलूनि नपुंसके च। अत्र इतरेतरद्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– मद्गु-मधु-शीधु-सानु-कमण्डलु— एते शब्दाः पुंसि नपुंसके च भवन्ति। पुंस्त्वे प्राप्ते पक्षे क्लीबत्वार्थं सूत्रमिदं प्रवर्त्तितम्। यथा— अयं मद्गुः इदं वा मद्गुः (मस्ज् + उन्यङ् क्वा०), मधु (मन्यत इति मधु, मन् + उ, नस्य धः), शीधु (शी + धुक्), सानु (सन् + ञुण्), कमण्डलु (कस्य जलस्य मण्डं लाति, क + मण्ड + ला + कु)।

हिन्दी– उकारान्त मद्गु, मधु, शीधु, सानु और कमण्डलु शब्द पुंलिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग— दोनों में होते हैं।

५७/२३. रुत्वन्तः। अस्मिन् सूत्रे द्वन्द्वसहितो बहुव्रीहिसमासः।

व्याख्या– रुकारान्तः तुकारान्तश्च शब्दः पुंल्लिङ्गे स्यात्। उकारान्तत्वेनैवं प्राप्ते प्रपञ्चार्थः। यथा— मेरुः (मि + रु) 'विभज्य मेरुर्न यदर्थिसात्कृतः' (नै०-१।१६)।

सेतुः (सि + तुन्) 'वैदेहि पश्यामलयाद्विभक्तं मत्सेतुना फेनिलमम्बुराशिम्' (रघु०-१३।२) ।

हिन्दी– रुकारान्त और तुकारान्त शब्द पुंल्लिङ्ग होते हैं। जैसे— मेरु, सेतु, हेतु आदि ।

५८/२४. दारुकसेरुजतुवस्तुमस्तूनि नपुंसके । अत्र सूत्रे इतरेतरद्वन्द्वसमासः । क्वचित् 'जत्रु' इति पाठः ।

व्याख्या– पूर्वसूत्रापवादः । दारु, कसेरु, जतु (जत्रु), वस्तु, मस्तुशब्दाः क्लीबे (नपुंसके) स्युः । यथा— दारु (दृ + उण्), कसेरु-कशेरु (के देहे शीर्यते कं जलं वा शृणाति, क + शृ+ उ, एरङादेश; कस् + रुरुन् वा), जतु-जत्रु (जांयते वृक्षादिभ्यः, जन् + उ त आदेशः), वस्तु (वस् + तुन्) 'वस्तुनि अवस्त्वारोपोऽज्ञानम्, मस्तु (मस् + तुन्) एते शब्दाः नपुंसकलिङ्गे भवन्ति ।

हिन्दी– दारु, कसेरु, जतु (जत्रु), वस्तु और मस्तु शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं।

५९/२५. सक्तुर्नपुंसके च । सक्तुः + नपुंसके च ।

व्याख्या– त्वन्तत्वेन पुंस्त्वे प्राप्ते पक्षे क्लीबत्वार्थं सूत्रम्, चात् नपुंसके । यथा— सक्तुः (सञ्ज् + तुन् + किच्च) 'भिक्षा सक्तुभिरेव सम्प्रति वयं वृत्तिं समीहामहे' (भर्तृ०-३।६४) । अयं सक्तुः, इदं सक्तु ।

हिन्दी– 'सक्तु' शब्द पुंल्लिङ्ग तथा नपुंसकलिङ्ग दोनों में होते हैं ।

६०/२६. प्राग्रश्मेरकारान्तः । प्राक रश्मेः अकारान्तः, बहुव्रीहिसमासोऽत्र ।

व्याख्या– इत ऊर्ध्वं रश्मिशब्दघटितसूत्रपर्यन्तमकारान्तोऽधिक्रियते । अधिकारसूत्रमिदम् ।

हिन्दी– यह अधिकारप्रवर्तक सूत्र है । यहाँ से अग्रिम— आने वाला 'रश्मि-दिवसाभिधानानि' सूत्र के पूर्व तक इसका अधिकार है ।

६१/२७. कोपधः । अत्र बहुव्रीहिसमासः— क उपधायां यस्य स कोपधः ।

व्याख्या– ककार उपधाभूतो यस्य तथाभूतोऽकारान्तः पुंसि स्यात् । अत्र विशेषः— कारकपाठकादयस्तु विशेषणशब्दत्वेन त्रिलिङ्गाः । अत्र च प्रकरणे प्रायः विशेष्यशब्दाना-मेव लिङ्गमनुशिष्यते, न तु विशेषणशब्दानामिति न व्यभिचारः । यथा— अयं स्तबकः, करकः कोरकः ।

हिन्दी– ककार उपधा वाले शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं । जैसे— स्तबक, करक, कोरक आदि ।

६२/२८. चिबुकशालूकप्रातिपदिकांशुकोल्मुकानि नपुंसके । इतरेतरद्वन्द्व-समासोऽत्र ।

व्याख्या– कोपधतया पुंस्त्वे प्राप्तेऽपवादः । चिबुक— चिन् (ब्) + उ + कन् = पृषोदरादित्वात् ह्रस्वः । 'चिबुकं सुदृशः स्पृशामि यावत्' (भामि०-२।३४) । शालूका— शल् + ऊकण् । प्रातिपदिक— प्रतिपदा + ठञ्, 'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्' (पा० सू०-१।२।४५) । अंशुक— अंशु + क, अंशवः सूत्राणि विषया यस्य 'यत्रांशुकाक्षेपविलज्जितानाम्' (कु०-१।१४) । उल्मुक— उष् + मुक्, षस्य लः । एते शब्दाः क्लीबे स्युरिति ।

हिन्दी– 'क' उपधा वाले चिबुक, शालूक, प्रातिपादिक, अंशुक और उल्मुक— ये शब्द नपुंसकलिङ्गी हैं ।

६३/२९. कण्टकानीकसरकमोदकचषकमस्तकपुस्तकतडाकनिष्कशुष्क-वर्चस्कपिनाकभाण्डकपिण्डककटकशण्डकपिटकतालकफलककल्कपुलाकानि नपुंसके च । इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– सूत्रस्थाः शब्दाः पुंस्त्वे क्लीबे च सन्ति । तद्यथा— कण्टक— कण्ट + ण्वुल् 'पादलग्नं करस्थेन कण्टकेनैव कण्टकम् उद्धरेत्' (चाण०-२२) । अनीक— अन् + ईकन् 'दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकम्' (भग०-१।२) । सरक— सृ + वुन् 'चक्रुरथ सह पुरन्ध्रिजनैरयथार्थसिद्धिसरकं महीभृतः' (शिशुपाल-१५।८०) । मोदक— मोद-यति मुद् + णिच् + ण्वुल् । चषक— चष् + क्वुन्, 'च्युतैः शिरस्त्रैश्चषकोत्तरेव' (रघु०-७।४९) । मस्तक— मस्मति परिमात्यनेन मस् करणेत स्वार्थे क तारा० 'अतिलोभाभिभूतस्य चक्रं भ्रमति मस्तके' (पंच०-५।२२) । कण्टकः-कण्टकम् । इत्यादिशब्दाः उभयलिङ्गाः भवन्ति ।

हिन्दी– कण्टक, अनीक, सरक, मोदक, चसक, मस्तक, पुस्तक, तटाक, निष्क, शुष्क, वर्चस्क, पिनाक, भाण्टक, पिण्डक, कटक, दण्डक, पिटक, तालक, फलक, कल्क और पुलाक— ये शब्द पुंल्लिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग दोनों में होते हैं ।

६४/३०. टोपधः । बहुव्रीहिसमासोऽत्र ।

व्याख्या– टोपधः अकारान्तः पुंसि (पुंल्लिङ्गे) स्यात् । यथा— घटः पटः (घट् + अच्, पट् + अच्) । 'कूपे पश्य पयोनिधावपि घटो गृह्णाति तुल्यं जलम्' (भर्तृ०-२।४९) ।

हिन्दी– 'ट' उपधा वाला शब्द पुंल्लिङ्ग होता है । जैसे— घट, पट आदि ।

६५/३१. किरीटमुकुटललाटवटवीटशृङ्गाटकरटलोष्टानि नपुंसके । सूत्रेऽस्मिन्नितरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– किरीटादयो मुख्यशब्दाः नपुंसकलिङ्गे भवन्ति । पूर्वसूत्रापवादः । तत्रादौ **किरीटम्**— कृ + कीटन्, 'किरीटबद्धाञ्जलयः' (कु०-७।९२) । मुकुट— मंक + अटन् (पृषोदरादित्वात्) 'मुकुटरत्नमरीचिरस्पृशत्' (रघु०-९।१३) । ललाट— लड् + अच्, डस्य लः, ललमटति अट् अण् वा, 'लिखितमपि ललाटे प्रोज्झितुं कः समर्थः' (हि०-१।२१) । वट-वीट, शृङ्गाटक— शृङ्गं प्रधान्यमटति, शृङ्ग + अट् + अण् । करट, लोष्ट— लुष् + तन् 'परद्रव्येषु लोष्टवत्' ।

हिन्दी– यह पूर्व सूत्र का अपवादक सूत्र है । सूत्रोक्त किरीट, मुकुट, ललाट, वट, वीट, शृङ्गाट, करट और लोष्ट— ये शब्द नपुंसकलिङ्ग में होते हैं । जैसे— किरीटम्, मुकुटम्, ललाटम् इत्यादि ।

६६/३२. कुटकूटकपटकवाटकर्पटनटनिकटकीटकटानि नपुंसके च । अत्र सूत्रे इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– एते कुटादयः शब्दाः नपुंसके पुंसि च स्युः । तद्यथा— कुटं-कुटः— कुट् + कम् । कपट— के मूर्ध्नि पट इव आच्छादकः, 'कपटशतमयं क्षेत्रमप्रत्ययानाम्' (पंच०-१।१९१) । कवाट— कलं शब्दमटति, कु + अप् , अट् + अच् । कर्पट— कृ + विच् = कर, स च पटश्च (कर्मधारयसमास) । नट, निकट— नि समीपे कटति नि + कट् + अच् । कीट-कटप्रभृतयः ।

हिन्दी– उपर्युक्त कुट, कूट, कपट, कपाट, कर्पट, नट, निकट, कीट और कट शब्द नपुंसक तथा पुंल्लिङ्ग दोनों में होते हैं ।

६७/३३. णोपधः । ण उपधायां विद्यते यस्य सः णोपधः (बहुव्रीहिसमासोऽत्र) ।

व्याख्या– णोपधोऽकारान्तः पुंसि (पुंल्लिङ्गे) स्यात् । यथा– गुणः— गुण् + अच्, 'साधुत्वे तस्य को गुणः' (पंच०-४।१०८) । शणः— शण् + अच् । पाषाणः— पिनष्टि– पिष् सञ्चूर्णने आनच् (पृषो० तारा०) आदयः शब्दाः पुंल्लिङ्गे भवन्ति ।

हिन्दी– 'ण' उपधा वाले अकारान्त शब्द पुंलिङ्ग होते हैं। जैसे— गुण, शण, पाषाण आदि।

६८/३४. ऋणलवणपर्णतोरणरणोष्णानि नपुंसके। अस्मिन् सूत्रे इतरेतरद्वन्द्व-समासः।

व्याख्या– पूर्वसूत्रस्यापवादः। ऋणादयो नपुंसके भवन्ति शब्दाः। तत्रादौ ऋणम्— ऋ + क्त, अन्त्यमृणम्। लवणम्— लू + ल्युट् (पृषो० णत्वम्) 'आभाति वेलालवणाम्बुराशेः' (रघु०-१३।१५)। पर्णम्— पर्ण् + अच्; एवमेव तोरण, रण्, उष्णशब्दा अपि नपुंसके भवन्ति। अमरस्तु 'तोरणोऽस्त्री' इत्युक्तवान्, तन्मूलं मृग्यम्। उष्णशब्स्य स्पर्शवाचित्वे एव क्लीबता। तद्वति तु गुणवचनत्वेन त्रिलिङ्गत्वम्।

हिन्दी– 'ण' उपधा वाले ऋण, लवण, पर्ण, तोरण, रण और उष्ण शब्द नपुंसकलिङ्ग में होते हैं।

६९/३५. कार्षापणस्वर्णसुवर्णव्रणचरणवृषणविषाणचूर्णतृणानि नपुंसके च। सूत्रेऽत्रेतरेतरद्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– उपर्युक्ताः कार्षापणादयः शब्दाः पुंसि नपुंसकलिङ्गे च स्युरिति, चकारात् नपुंसके। तद्यथा– कार्षापण— कर्ष + अण् = कार्षः, आ + पण् + घञ् आपणः, कार्षस्य आपणः (बहुव्रीहिसमासः); स्वर्ण— सुष्ठु अर्णो वर्णो यस्य; सुवर्ण— सुष्ठु वर्णो यस्य; 'नन्वहं दशसुवर्णान् प्रयच्छामि' (मृच्छकटिक-२)। व्रण— व्रण् + अच्; चरण— चर + ल्युट्, 'शिरसि चरण एष न्यस्यते वारयैनम्; वृषण— वृष् + क्यु; विषाण— विष् + कानच्, 'साहित्यसंगीतकलाविहीनः साक्षात्पशुः पुच्छविषाणहीनः' (भर्तृ०-२।१२); चूर्ण— चूर्ण + अच्; तृण— तृह् + क्न, हलोपश्च।

हिन्दी– उपर्युक्त कार्षापण, स्वर्ण, सुवर्ण, व्रण, चरण, वृषण, विषाण, चूर्ण और तृण शब्द पुंल्लिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग दोनों में होते हैं।

७०/३६. थोपधः। 'थ' उपधायां यस्य शब्दस्य सः थोपधः (बहुव्रीहिसमासः)।

व्याख्या– थकारोपधः अकारान्तः पुंसि स्यात्। यथा– रथः— 'रम्यते अनेन अत्र वा' रम् + कथन्; अर्थः— ऋ + थन्, 'ज्ञातार्थो ज्ञानसम्बन्धः श्रोतुं श्रोता प्रवर्तते'।

हिन्दी– थकार उपधावाले अकारान्त शब्द पुंल्लिङ्ग होते हैं।

७१/३७. काष्ठपृष्ठसिक्थोक्थानि नपुंसके। अत्रेतरेतरद्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– पूर्वसूत्रापवादः । काष्ठ-पृष्ठ-सिक्थ-उक्थ इत्येते शब्दाः नपुंसके स्युः । तत्रादौ काष्ठम्— काश् + क्थन्; पृष्ठ— पृष् स्पृश् वा थक् नि० साधुः । सिक्थ— सिच् + थुक्, 'ग्रासोद्गलितसिक्थेन का हानिः करिणो भवेदि'त्यत्र पुंस्त्वमपि सूच्यते, सिक्थमपि भवति । उक्थम्— वच् + थक् । एते शब्दाः नपुंसकलिङ्गे भवन्ति ।

हिन्दी– 'थ' उपधा से संयुक्त अकारान्त काष्ठ, पृष्ठ, सिक्थ और उक्थ शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं । 'सिक्थ' शब्द पुंलिङ्ग में भी प्राप्त होता है ।

७२/३८. काष्ठा दिगर्था स्त्रियाम् । दिक् अर्थः यस्या सा दिगर्था (बहुव्रीहि-समासः) ।

व्याख्या– दिग्वाचककाष्ठाशब्दः स्त्रियां (स्त्रीलिङ्गे) स्यात् । काष्ठा— काश् + क्थन् + टाप्, 'स्वयं विशीर्णद्रुमपर्णवृत्तिता परा हि काष्ठा तपसः' (कु०-५।२८), 'दिशस्तु ककुभः काष्ठा' इत्यमरः । अत्र दिशि इत्यनेनेष्टसिद्धौ सीमार्थेऽपि स्त्रीत्वार्थमर्थग्रहणम् प्रयोगः ।

हिन्दी– दिशावाचक 'थ' उपधायुक्त 'काष्ठा' शब्द स्त्रीलिङ्ग होता है ।

७३/३९. तीर्थप्रोथयूथगूथानि नपुंसके च । अस्मिन् सूत्रे इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– चादधिकारात् पुंसीत्येवानुषज्यते, न तु स्त्रियामिति । तेन 'प्रोथमस्त्रियाम्' इत्यमरोक्तिः । तथा च पूर्वं तीर्थमिति— तृ + थक्, 'कृततीर्थः पयसामिवाशयः' (कि०-२।३); प्रोथ— प्रोथ् + घ; यूथ— यु + थक् (पृषो० दीर्घः); गूथ— गू + थक्; तीर्थम्-तीर्थः आदि ।

हिन्दी– 'थ' उपधावाले अकारान्त तीर्थ, प्रोथ, यूथ और गूथ शब्द पुंल्लिङ्ग तथा नपुंसकलिङ्ग में होते हैं ।

७४/४०. नोपधः । न उपधायां यस्य स नोपधः (बहुव्रीहिसमासोऽत्र) ।

व्याख्या– अदन्तो नोपधः पुंसि (पुंल्लिङ्गे) स्यात् । यथा– इनः— इण् + नक्, फेनः— स्फाय् + न, फेशब्दादेशपक्षे णत्वम्, फेणः-फेनः; 'गौरीवक्त्रभ्रुकुटिरचनां या विहस्येव फेनैः' (मेघ०-५०) ।

हिन्दी– अदन्त 'न' उपधा वाले शब्द पुंल्लिङ्गवाची होते हैं । जैसे— इन, फेन आदि ।

७५/४१. जघनाजिनतुहिनकाननवनवृजिनविपिनवेतनशासनसोपानमिथुनश्मशानरत्ननिम्नचिह्नानि नपुंसके । इतेरतरद्वन्द्वसमासोऽत्र— जघन....चिह्नानि ।

व्याख्या– पूर्वसूत्रस्यापवादभूतमिदं सूत्रम् । एषु शासनशब्द: परित्यक्तुं शक्यते, ल्युडन्तत्वेन क्लीबत्वस्य वक्ष्यमाणत्वात् । अवशिष्टा: जघनादय: शब्दा: क्लीबे स्युरिति । तथाच जघन— हन् + अच्, द्वित्वम् 'घटयजघने काञ्चीमञ्चस्रजा कबरीभरम्' (गीत०-१२); अजिनम्— अज् + इनच् 'अथाजिनाषाढधर:' (कुमार०-५।३०); तुहिनम्— तुह् + इनम्, ह्रस्वश्च ।

हिन्दी– 'न' उपधा वाले अकारान्त जघन, अजिन, तुहिन, कानन, वन, वृजिन, विपिन, वेतन, शासन, सोपान, मिथुन, श्मशान, रत्न, निम्न और चिह्न— ये शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

७६/४२. मानयानाभिधाननलिनपुलिनोद्यानशयनासनस्थानचन्दनालानसमानभवनवसनसम्भावनविभावनविमानानि नपुंसके च । अस्मिन् सूत्रे इतरेतरद्वन्द्वसमास: ।

व्याख्या– एते मान....विमानादय: शब्दा: पुंसि क्लीबे च स्यु: । मानादिषु केषाञ्चिन्नान्तत्वेन पुंस्त्वे केषाञ्चिच्च ल्युडन्ततया तद्बाधकसूत्रेण क्लीबत्वे प्राप्ते चोभयलिङ्गतार्थं सूत्रमिदं प्रवर्त्तितम् । यथा— मान: मानम्– मन् + घञ् 'मानद्रविणाल्पता' (पञ्च०-२।१५९), मानम्— 'रसधर्मत्वे किं मानम्' (रस०); यान— या + भावे ल्युट् 'समुद्रयानकुशला:' (मनु०-८।१५७); अभिधान— अभि + धा + ल्युट् 'एतावतामर्थानामिदमभिधानम्' (निरुक्त); नलिन— नल् + इनच्; पुलिन— पुल् + इनन् + किच्च; 'रमते यमुनापुलिनवने विजयी मुरारिरधुना' (गीत०-७); उद्यान— उद् + या + ल्युट् 'शयनस्थो न भुञ्जीत' (मनु०-४।७४); आसन— आस् + ल्युट् 'स वासवेनासनसन्निकृष्टम्' (कुमार०-१।२); स्थान— स्था + ल्युट्; चन्दन— चन्द + णिच् + ल्युट् । एवमेवालानादयोऽपि शब्दा: । वस्तुत: 'करणाधिकरणयोर्ल्युट्' इति वक्ष्यमाणसूत्रेण त्रिलिङ्गत्वप्राप्तौ पूर्वापवादेन नपुंसकत्वमेवेति तदपवादार्थं सूत्रमिदम् ।

हिन्दी– 'न' उपधा वाले अकारान्त 'मान' से लेकर 'विमान'पर्यन्त सभी शब्द पुंल्लिङ्ग तथा नपुंसकलिङ्ग में होते हैं ।

७७/४३. पोपध: । 'प' उपधायां यस्यैवम्भूतोऽकारान्त: शब्द: पुंल्लिङ्गे भवति ।

व्याख्या– अदन्त: पोपध: पुंसि स्यात् । यथा– धूप:— धूप् + अच् 'धूपोष्मणा त्याजितमार्द्रभावम्' (कुमार०-७।१४), दीप:— दीप् + णिच् + अच् 'नृपदीपो धनस्नेहं प्रजाभ्य: संहरन्नपि' (पञ्च०-१।२२१), यूप:— यू + पक् (पृषोदरादित्वाद्दीर्घ:), 'अपेक्ष्यते साधुजनेन वैदिकी श्मशानशूलस्य न यूपसत्क्रिया' (कुमार०-५।७३) ।

हिन्दी– 'प' उपधा वाले अकारान्त धूप, दीप और यूप शब्द पुल्लिङ्ग होते हैं।

७८/४४. पापरूपोडुपतल्पशिल्पपुष्पशष्पसमीपान्तरीपाणि नपुंसके । इतरेतरद्वन्द्व-समासोऽत्र ।

व्याख्या– पूर्वसूत्रापवादः । पाप-रूप-उडुप-ताप-(तल्प)-शिल्प-पुष्प-शष्प-समीप-अन्तरीप— एते शब्दाः क्लीबे (नपुंसके) स्युरिति । तद्यथा– पापम्— पाति रक्षति आत्मानमस्मात्) पा + प 'पापं पापाः कथयथ कथं शौर्यराशेः पितुर्मे' (वेणी०-३।५), रूपम्— रूप + क + भावे अच् वा 'विरूपं रूपवन्तं वा पुमानित्येव भुञ्जते' (पञ्च०-१।१४३), उडुपम्— उड् + कु वा 'तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्' (रघु०-१।२), तल्पम्— तल् + पक् 'सपदि विगतनिद्रस्तल्पमुज्झाञ्चकार' (रघु०-५।७५), तापः— तप् + घ० 'इतरतापशतानि तवेच्छया वितरितानि सहे चतुरानन' (उद्भट), शिल्पम्— शिल् + पक्, पुष्पम्— पुष् + अच्, शष्पम्— शष् + पक्, समीपम्— संगता आपो यत्र– अच् , आत ईत्वम् । अन्तरीप— अन्तर्मध्ये गता आपो यस्य– बहुव्रीहि-समासः, आत ईत्वम्, पुंस्त्वेऽपि शब्दकोशे ।

हिन्दी– 'प' उपधा वाले अकारान्त पाप, रूप, उडुप, तल्प (ताप), शिल्प, पुष्प, शष्प, समीप और अन्तरीप शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

७९/४५. शूर्पकुतपकुणपद्वीपविटपानि नपुंसके च । अत्रेतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– शूर्प-कुतप-कुणप-द्वीप-विटप— एते शब्दाः पुंसि क्लीबे च स्युरिति । तद्यथा शूर्पः— शृ + पः ऊश्च नित्, कुतप— कु + तप् + अच्—

अह्नो मुहूर्त्ता विख्याता दश पञ्च च सर्वदा ।
तत्राष्टमो मुहूर्त्तो यः सः कालः कुतपः स्मृतः ॥ (ज्योतिष)

हिन्दी– 'प' उपधा से युक्त अकारान्त शूर्प, कुतप, कुणप, द्वीप, विटप— ये शब्द पुंलिङ्ग तथा नपुंसकलिङ्ग में होते हैं ।

८०/४६. भोपधः । 'भ' उपधायां यस्य सः भोपधः (बहुव्रीहिसमासः) ।

व्याख्या– अदन्तः (अकारान्तः) भोपदः शब्दः पुंसि (पुंल्लिङ्गे) स्यात् । यथा करभः— कृ + अभच् 'करभोपमोरुः' (रघु०-६।८३), कुम्भः— कुं भूमिं कुत्सितं वा उम्भति पूरयति— उम्भ् + अच् शक० तारा० 'वर्जयेत्तादृशं मित्रं विषकुम्भं पयोमुखम्' (हि०-१।७७) ।

हिन्दी– 'भ' उपधा वाले अकारान्त शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं। जैसे— करभः, कुम्भः, शलभः।

८१/४७. तलभं नपुंसकम्।

व्याख्या– पूर्वसूत्रापवादः। भकारः उपधा यस्य, एवम्भूतोऽकारान्तस्तलभशब्दो नपुंसकलिङ्गे भवति। यथा— तलभम्।

हिन्दी– भकार उपधा वाला अकारान्त शब्द "तलभम्' नपुंसक लिङ्ग में होता है।

८२/४८. जृम्भं नपुंसके च।

व्याख्या– भकारोपधः अकारान्तः जृम्भशब्दः पुंल्लिङ्गे नपुंसके च लिङ्गे स्यात्। तद्यथा— अयं जृम्भः— जृम्भ् + घञ् ल्युट् वा, जृम्भ् + अ + टाप्— जृम्भा + कन्, इत्वम्। 'जृम्भारम्भप्रविततदलोपान्तजालप्रविष्टैः' (वेणी०-२।७)।

हिन्दी– भकार उपधा वाला अकारान्त 'जृम्भ' शब्द पुंल्लिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग दोनों होता है। जैसे— जृम्भः, जृम्भम्। अङि तु स्त्रीत्वात् जृम्भा।

८३/४९. मोपधः। 'म' उपधायां यस्य स मोपधः (बहुव्रीहिसमासोऽत्र)।

व्याख्या– अदन्तः मोपधः पुंसि (पुंल्लिङ्गे) स्यात्। तद्यथा सोमः— सू + मन्, स्तोमः— स्तु + मन् 'भस्मस्तोमपवित्रलाञ्छनमुरो धत्ते त्वचं रौरवीम्' (उत्तर०-४।२०), भीमः— विभेत्यस्माद्, भी अपादाने मक्, मध्यम पाण्डवः।

हिन्दी– 'म' उपधा वाले अकारान्त शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं। जैसे— सोम, स्तोम, भीम आदि।

८४/५०. रुक्मसिध्मयुध्मेध्मगुल्माध्यात्मकुङ्कुमानि नपुंसके। इतरेतरद्वन्द्वसमासोऽत्र।

व्याख्या– रुक्म, सिध्म, युध्म (क्वचित् 'युग्म' इति पाठः), इध्म, गुल्म, अध्यात्म, कुङ्कुम इत्येते अकारान्ताः शब्दाः नपुंसकलिङ्गे भवन्ति। पूर्वसूत्रापवादः। यथा— रुक्मम्, सिध्मम्, आत्मनीति विभक्त्यर्थेऽव्ययीभावे अनन्तत्वेनाच् समासान्ते टिलोपे अदन्तत्वम् तस्य चाव्ययत्वेऽपि नपुंसकत्वकथमदन्तमोपधत्वेन प्राप्तपुंस्त्वापवादार्थम्। वस्तुतः अध्यात्मशब्दः प्रत्याख्यातुं शक्यः।

हिन्दी– 'म' उपधा वाला अकारान्त रुक्म, सिध्म, युध्म (युग्म), इध्म, गुल्म, अध्यात्म, कुङ्कुम— ये शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं।

८५/५१. संग्रामदाडिमकुसुमाश्रमक्षेमक्षौमहोमोद्दामानि नपुंसके च।

व्याख्या– संग्राम....उद्दामान्यत्रेतरेतरद्वन्द्वसमासः । मोपधाः अकारान्ताः संग्राम-दाड़िम-कुसुम-आश्रम-क्षेम-क्षौम-होम-उद्दाम— एते शब्दाः पुंसि चात् नपुंसके च स्युः । यथा— संग्रामः-संग्रामम्— संग्राम + अच् 'सङ्ग्रामाङ्गणमागतेन भवता चापे समारोपिते' (काव्य०-१०); दाडिमः-दाडिमम्— दल् + घञ् + इमम्, डलयोरभेदः 'पाकारुण-स्फुटदाडिमकान्तिवक्त्रम्' (मा०-९।३१) । अत्रोद्दामशब्दः प्रचण्डवाची । उद्यतो दामाया इति विग्रहे तु विशेष्यलिङ्ग एव ।

हिन्दी– 'म' उपधा वाले अकारान्त संग्राम, दाडिम, कुसुम, आश्रम, क्षेम, क्षौम, होम और उद्दाम शब्द पुंल्लिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग दोनों में होते हैं ।

८६/५२. योपधः ।

व्याख्या– 'य' उपधायां यस्य स योपधः । अदन्तः योपधः पुंसि स्यात् । यथा हयः— हय् (हि) + अच्, गवयः— गो + अय् + अच् 'दृष्टः कथञ्चिद्गवयैर्विविग्नैः' (कुमार०-१।५६), समय सम् + इ + अच् 'मिथः समयात्' (श०) ।

हिन्दी– 'य' उपधा वाले अदन्त शब्द हय, गवय और समय पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

८७/५३. किसलयहृदयेन्द्रियोत्तरीयाणि नपुंसके । अत्रेतरेतरद्वन्द्वसमासः । पूर्वसूत्रापवादः ।

व्याख्या– किसलय-हृदय-इन्द्रिय-उत्तरीयाणि नपुंसके भवन्तीति । यथा– इदं किसलयम्— किञ्चित् शलति– किम् + शल् + क (कयन्) पृषोद्यरादित्वात्साधुः, 'अधरः किसलयरागः' (शा० १।२१); इदं इन्द्रियम्— इन्द्र + घ–इय्, पञ्च कर्मेन्द्रियाणि पञ्च ज्ञानेन्द्रियाणि च ।

हिन्दी– 'य' उपधा वाले अदन्त किसलय, हृदय और इन्द्रिय आदि शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

८८/५४. गोमयकषायमलयान्वयाव्ययानि नपुंसके च । अत्रेतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– योपधा अकारान्ताः गोमय-कषाय-मलय-अन्वय-अव्यय— एते शब्दाः पुंसि नपुंसके च भवन्ति । तद्यथा— अयं गोमयः-इदं गोमयम्— गो + मयट्, कषायः-कषायम्— कषति कण्ठं– कष् + आय, 'स्फुटितकमलामोदमैत्री कषायः' (मेघ०-३१) । मलयः-मलयम्— मलते धरति चन्दनादिकम्, 'ललितलवङ्गलतापरिशीलन-कोमलमलयसमीरे' (गीत०-१); अन्वय— अनु + इ + अच्; अव्यय— 'य एनमजमव्ययम्' (भग० २।२१) ।

हिन्दी– 'य' उपधा वाले अकारान्त गोमय, कषाय, मलय, अन्वय और अव्यय शब्द पुंल्लिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग में होते हैं।

८९/५५. रोपधः। यस्योपधायां 'र' इति स रोपधः (बहुव्रीहिसमासः)।

व्याख्या– अदन्तः रोपधः पुंसि (पुंल्लिङ्गे) स्यात्। यथा– अयं क्षुरः— क्षुर + क, अयमङ्कुरः— अङ्क + उरच् 'दर्भाङ्कुरेण चरणः क्षतः' (श०-२।१०)।

हिन्दी– 'र' उपधा वाले अदन्त शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं। जैसे— क्षुर, अङ्कुर आदि।

९०/५६. द्वाराग्रस्फारतक्रवक्रवप्रक्षिप्रक्षुद्रच्छिद्रनारतीरदूरकृच्छ्ररन्ध्राश्रश्वभ्र-भीरगभीरक्रूरविचित्रकेयूरकेदारोदराजस्रशरीरकन्दरमन्दरपञ्जराजरजठराजिरवैरचामर-पुष्करगह्वरकुहरकुटीरकुलीरचत्वरकाश्मीरनीराम्बरशिशिरतन्त्रयन्त्रक्षत्रक्षेत्रमित्रकलत्र-च्छत्रमूत्रसूत्रवक्त्रनेत्रगोत्राङ्गुलित्रभलत्रास्त्रशस्त्रशास्त्रवस्त्रपत्रपात्रनक्षत्राणि नपुंसके। द्वाराग्र.....(च्छत्राणि) नक्षत्राणि इत्यत्र इतरेतरद्वन्द्वसमासः। पूर्वसूत्रापवादः।

व्याख्या– प्रस्तुतसूत्रे प्रस्तुताः द्वार, अग्र, स्फार, तक्र, वक्र, वप्र, क्षिप्र, क्षुद्र, नार (क्वचित् पार), तीर, दूर, कृच्छ्र, रन्ध्र, अश्र (स्र), श्वभ्र (क्वचित् शुभ्र), भीर, गभीर, क्रूर, विचित्र, केयूर, केदार, उदर, अजस्र, शरीर, कन्दर, पञ्जर, अजर, जठर, अजिर, वैर, चामर, पुष्कर, गह्वर, कुहर (क्वचिन्न), कुटीर, कुलीर, चत्वर, काश्मीर, नीर, अम्बर, शिशिर, तन्त्र, यन्त्र, क्षत्र, क्षेत्र, मित्र, कलत्र, च्छत्र, मूत्र, सूत्र, वक्त्र, नेत्र, गोत्र, अङ्गुलित्र, भलत्र (क्वचित् तनुत्र + अस्त्र), शस्त्र, शास्त्र, वस्त्र, पत्र, पात्र, नक्षत्र (क्वचित् च्छत्र इत्यपि)— इमे 'र' उपधावन्त अकारान्ताः शब्दाः नपुंसक लिङ्गे भवन्ति। इदं द्वारम् इत्यादिः।

विशेषः– अत्र 'स्फार'शब्दो रोगभेदवाची, प्रकाशवाची तु विशेष्यलिङ्ग एव। 'वक्र' शब्दः नद्याः पुटभेदवाची, कुटिलवाची तु विशेष्यलिङ्गः। 'क्षिप्रः' शीघ्रार्थे तद्वति विशेष्यलिङ्गः। 'क्षुद्र'शब्दः उपद्रवभेदे तद्वति विशेष्यलिङ्गः। 'दूर'शब्दो दूरत्वे, 'कृच्छ्र'शब्दः कृच्छ्रत्वे, तद्वति तु विशेष्यलिङ्गः। 'क्रूरं' क्रौर्ये, क्रौर्यवति त्रिलिङ्गत्वम्। 'चित्रं' वर्णे तद्वति त्रिलिङ्गत्वम्। 'अजस्रं' सातत्ये तद्वति त्रिलिङ्गत्वम्। 'शिशिरं' शीतलस्पर्शे तद्वति त्रिलिङ्गत्वम्।

हिन्दी– 'र' उपधा वाले अकारान्त द्वार से लेकर नक्षत्र तक सभी शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं। विशेष अर्थ में अन्य लिङ्ग भी होते हैं। संस्कृत व्याख्या से अवगत करें।

९१/५७. शुक्रमदेवतायाम् । अत्र नञ्तत्पुरुषसमासः । तद्यथा— न देवतेत्यदेवता, तस्यामदेवतायामिति ।

व्याख्या– देवभिन्नार्थे शुक्रशब्दः क्लीबे (नपुंसके) स्यात् । यथा— इदं शुक्रं = रेतः । शुभ्रवर्णवाची तु गुणवचनत्वाद्विशेष्यलिङ्गः । देवे तु पुमान् । व्युत्पत्तिः प्रयोगश्च— शुक्रम्— शुच् + रक् नि० कुत्वम् 'पुमान् पुंसोऽधिके शुक्रे स्त्री भवत्यधिके स्त्रियाः' (मनु०-३।६९) ।

हिन्दी– देवताभिन्न अर्थ में अर्थात् 'वीर्य' अर्थ में 'र' उपधा वाला अदन्त 'शुक्र' शब्द नपुंसक लिङ्ग में 'शुक्रम्' होगा और देवता (ग्रहविशेष) अर्थ में 'शुक्रः' (पुंल्लिङ्ग) होता है ।

९२/५८. चक्रवज्रान्धकारसारावारपारक्षीरतोमरशृङ्गारभृङ्गारमन्दारोशीरतिमिरशिशिराणि नपुंसके च । चक्र....शिशिराणि— इतरेतरद्वन्द्वसमासोऽत्र ।

व्याख्या– 'र'-उपधावन्तः अकारान्ताः चक्र-वज्र-अन्धकार-सार-अवार-पार-क्षीर-तोमर-शृङ्गार-भृङ्गार-मन्दार-उशीर-तिमिर-शिशिर— एते शब्दाः क्लीबे चात् पुंसि च स्युः । अन्यत्र व्याख्यायां चकारात् क्लीबत्वस्य ग्रहणम् । तेन न कापि क्षतिः । यथा— इदं चक्रं, अयं चक्र इत्यादि सर्वत्रोह्यम् । शिशिरशब्दस्तु हिमे स्पर्शे च पुं-नपुंसकलिङ्गः, स्पर्शवति त्रिलिङ्गः ।

हिन्दी– 'र' उपधा वाले अकारान्त चक्र, वज्र, अन्धकार, सार, अवार, पार, क्षीर, तोमर, शृङ्गार, भृङ्गार, मन्दार, उशीर, तिमिर और शिशिर शब्द नपुंसक तथा पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

९३/५९. षोपधः । 'ष'-उपधायामस्ति यस्य शब्दस्य स षोपध इत्युच्यते (बहुव्रीहिसमासः) ।

व्याख्या– अदन्तः (अकारान्तः) षोपधः शब्दः पुंसि स्यात्, पुंल्लिङ्गे भवेदित्याशयः । तथा च— वृषः– वृष् + क 'असम्पदस्तस्य वृषेण गच्छतः' (कुमार०-५।८०) । वृक्षः— व्रश्च + क्स् 'आत्मापराधवृक्षाणां फलान्येतानि देहिनाम्' । यक्षः— यक्ष्यते यक्ष् + (कर्मणि) घञ् 'यक्षश्चक्रे जनकतनया स्नान' (मेघदूत) ।

हिन्दी– 'ष' उपधा वाले अकारान्त वृष, वृक्ष और यक्ष शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

९४/६०. शिरीषर्जीषाम्बरीषपीयूषपुरीषकिल्विषकल्माषाणि नपुंसके । शिरीष...... कल्माषाणि (इतरेतरद्वन्द्वसमासः) । पूर्वसूत्रापवादः ।

व्याख्या– 'ष'-उपधावन्त: अकारान्ता: शिरीष, ऋजीष (जोष), अम्बरीष, पीयूष, पुरीष, किल्विष, कल्माष— इमे शब्दा: नपुंसकलिङ्गे भवन्ति । तद्यथा– इदं शिरीषम्— शृ + ईषन् किच्च 'पुष्पं शिरीषपुष्पादपि सौकुमार्यौ बाहू तदीयाविति मे वितर्क:' । ऋजीषम्— ऋच् + ईषन्, जोषम्— जुष् + घञ् (अव्यय); एवमन्येऽपि शब्दा: ।

हिन्दी– 'ष' उपधा वाले अकारान्त शिरीष, ऋजीष (जोष), अम्बरीष, पीयूष आदि शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

९५/६१. यूषकरीषमिषविषवर्षाणि नपुंसके च । यूष....वर्षाणि— इतरेतरद्वन्द्व-समास: ।

व्याख्या– षकारोपधावन्त: अकारान्ता: यूष-करीष-मिष-विष-वर्षशब्दा: पुंसि, नपुंसकलिङ्गे च भवन्ति (नपुंसके पुंसि वा) । तद्यथा— यूष: यूषं वा— यूष् + क कविन् वा, करीष— कृ + ईषन्, मिष— 'स रोमकूपौघमिषाज्जगत्कृता कृताश्च किं दूषणशून्यबिन्दव:' (नैषध-१।२१) । विषम्-विष:— विष् + क 'विषं भवतु मा भूद्वा फटाटोपो भयङ्कर:' (पञ्च०-१।२०४) । वर्ष:-वर्षम्— वृष् भावे घञ् कर्तरि अच् वा 'इयन्ति वर्षाणि तया सहोग्रमभ्यस्यतीव' (रघु०-१३।६७) ।

हिन्दी– षकार उपधा वाले अकारान्त यूष, करीष, मिष, विष और वर्ष शब्द नपुंसक और पुंलिङ्ग में होते हैं ।

९६/६२. सोपध: । 'स' उपधा अस्ति यस्य शब्दस्य स: सोपध: ।

व्याख्या– अदन्त: (अकारान्त:) सोपध: शब्द: पुंसि स्यात् । यथा– अयं वत्स:— वद् + स: 'यं सर्वशैला: परिकल्प्य वत्सं' (कुमार०-१।२), वायस:— वयोऽसच् णित् 'बलिमिव परिभोक्तुं वायसास्तर्कयन्ति' (मृच्छ०-१०।३), महानस: आदि ।

हिन्दी– 'स' उपधा वाले अकारान्त शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं । जैसे— वत्स, वायस, महानस आदि ।

९७/६३. पनसबिसबुससाहसानि नपुंसके । पनस (क्वचित् 'मानस' इति पाठ:) । नपुंसके इतरेतरद्वन्द्वसमास: ।

व्याख्या– पनस (मानस)-बिस-बुस-साहस-(सोपधा:)-शब्दा: एते क्लीबे स्युरिति । तद्यथा– इदं पनसम्— पनाय्यते स्तूयतेऽनेन देव:– पन् + असच् (फलार्थे), इदं मानसम्— मन एव, मनस इदं वा अण् 'सपदि मदनानलो दहति मम मानसम्' (गीत०-१०), बिसम्— बिस् + क 'पाथेयमुत्सृज बिसं ग्रहणाय भूय:' (विक्रम०-

४।१५), बुसम्— बुस् + क, पक्षे— पृषोदरादित्वात् षत्वम् । साहसम्— सहसा बलेन निर्वृत्तम्- अण् 'तदपि साहसाभासम् ।

हिन्दी– 'स' उपधा वाले अकारान्त पनस, मानस, बिस, बुस और साहस शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

९८/६४. चमसांसरसनिर्यासोपवासकार्पासवासमासकासकांसमांसानि नपुंसके च । चमस-अंस-रस..(चमस-सरस इति क्वचित्पाठः)..मांसानि, इतरेतरद्वन्द्वसमासोऽत्र ।

व्याख्या– चमस-अंस-रस-(चमस-सरस)-निर्यास-उपवास-कार्पास-वास-भास-कास-कांस-मांस— एते शब्दाः पुं-नपुंसकयोः स्युरिति । तद्यथा– अयं चमसः-इदं चमसम्— चमत्यस्मिन् चम + असच् तारा०, अंसः-अंसम्— अंस् + अच्, रस— रस् + अच्, सरस (रसेन सह— बहुव्रीहिसमासः), निर्यासः-निर्यासम्— निर + यस् + घञ् 'शालनिर्यासगन्धिभिः' (रघु०-१।३८), उपवास— उपवस + घञ् 'सोपवास-स्त्र्यहं वसेत्' (याज्ञ०-१।१७५), कार्पासः-कार्पासम्— कर्पास + अण् । एवमन्येऽपि शब्दाः उभयलिङ्गिनः सन्ति ।

हिन्दी– 'स' उपधा वाले अकारान्त चमस, अंस, रस, सरस, निर्यास, उपवास आदि शब्द उभयलिङ्गी (पुंल्लिङ्ग-नपुंसकलिङ्ग) होते हैं ।

९९/६५. कंसं चाप्राणिनि ।

व्याख्या– न प्राणी = अप्राणी, तस्मिन् अप्राणिनि— नञ्तत्पुरुषसमासः । अ-प्राणिनि कंसशब्दः क्लीबे (नपुंसके) पुंसि (पुंल्लिङ्गे) च स्यात् । कंसं कंसः पानं भोजनम्, मथुरानृपे तु कंसः चकारोऽदन्ताधिकारसमाप्त्यर्थः । (कंस् + अ) निष्कर्षश्चात्र प्राणरहिते वस्तुनि कंसशब्दः नपुंसकलिङ्गे, एवञ्च प्राणिनि जीवे पुंल्लिङ्गः; यथा— श्रीकृष्णद्वेष्टा उग्रसेनपुत्रः कंसः ।

हिन्दी– 'स' उपधा वाला अकारान्त कंस शब्द अप्राणि (निर्जीव) अर्थात् पानपात्र के अर्थ में नपुंसक और 'मथुराधिपति उग्रसेनपुत्र कंस' के अर्थ में पुल्लिङ्ग होता है । 'च' शब्द अकारान्तनिवर्त्तक है ।

१००/६६. रश्मिदिवसाभिधानानि । अत्र द्वन्द्वगर्भस्तत्पुरुषसमासः ।

व्याख्या– रश्मि-दिवसशब्दयो; ये च पर्यायवाचकाः शब्दाः भवन्ति तेऽपि पुंसि (पुंल्लिङ्गे) भवेयुरिति । तद्यथा– रश्मिः— अश् + मि धाताष्ट्र, रश् + मि वा, 'मुक्तेषु रश्मिषु निरायतपूर्वकाया' (श०-१।८) । एवमेव मयूखः— मा + ऊख, मयादेशः;

दिवसः— दीव्यतेऽत्र दिव् + असच् किक् च; घस्रः— घस् + रक् 'घस्रो गमिष्यति' (सुभा०) ।

हिन्दी– पर्यायवाची सहि, रश्मि और दिवस शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं । जैसे— रश्मि, मयूख, दिवस, घस्र आदि ।

१०१/६७. दीधितिः स्त्रियाम् ।

व्याख्या– पूर्वसूत्रापवादः । दीधितिशब्दः स्त्रियां = स्त्रीलिङ्गे भवति । यथा– इयं दीधितिः— दीधी + क्तिन्, इट् ईकारलोपश्च ।

हिन्दी– 'दीधिति' शब्द स्त्रीलिङ्ग में होता है ।

१०२/६८. दिनाहनी नपुंसके । दिनं च अहश्चेति दिनाहनी— इतरेतरद्वन्द्व-समासोऽत्र ।

व्याख्या– दिवसाभिधानत्वे पुंस्त्वे प्राप्ते तदपवादः । दिन-अहन्-शब्दौ नपुंसकलिङ्गे भवतः । यथा– इदं दिनम्— द्युतितमः दो (दी) + नक्, ह्रस्वः 'दिनान्ते निहितं तेजः' (रघु०-४।१) ।

हिन्दी– दिन और अहन्— ये दोनों शब्द पुंस्त्व को बाध कर नपुंसक लिङ्ग में होते हैं।

१०३/६९. मानाभिधानानि । मानस्याभिधानानि = नामानि, तत्पुरुषसमासोऽत्र ।

व्याख्या– मीयतेऽनेनेति मानं, तद्विशेषाभिधानानि पुंसि (पुंल्लिङ्गे) स्युरिति । तद्यथा– अयं कुडवः (पः)— कुड् + कवन् कपन् वा, प्रस्थः— प्र + क, ३२ पलानां मानम् ।

हिन्दी– मान (परिमाण) वाचक शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं । यथा— कुडव, प्रस्थ ।

१०४/७०. द्रोणाढकौ नपुंसके च । द्रोणश्चाढकश्च द्रोणाढकौ, इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– मानविशेषवाचित्वेन पुंस्त्वे प्राप्ते पक्षे क्लीबतायै सूत्रम् । अतः द्रोण-आढकशब्दौ उभयोः (पुंस्त्वे क्लीबे च) लिङ्गयोर्भवतः । तद्यथा— द्रोणः-द्रोणम्, आढकः-आढकम् ।

हिन्दी– (परिमाणवाची) द्रोण और आढक शब्द पुंल्लिङ्ग तथा नपुंसक लिङ्ग दोनों में होते हैं ।

१०५/७१. खारीमानिके स्त्रियाम् । खारी च मानिका चेति, इतरेतरद्वन्द्वसमासोऽत्र ।

व्याख्या– पुंस्त्वापवादार्थं सूत्रम् । खारी-मानिकाशब्दौ स्त्रीलिङ्गे भवतः । यथा इयं खारी— खम् = आकाशम् आधिक्येन ऋच्छति– ख + ऋ + अण्, ख + आ + रा + क + ङीष्, षोडशद्रोणतुल्यं मानम् । इयं मानिका— मन् + णिच् + ण्वुल् + टाप्, मानम् ।

हिन्दी– परिमाणवाची खारी और मानिका शब्द स्त्रीलिङ्ग में होते हैं ।

१०६/७२. दाराक्षतलाजासूनां बहुत्वं च । दारा....लाजासूनां, इतरेतरद्वन्द्व-समासोऽत्र ।

व्याख्या– दारशब्दस्य स्त्रीत्वे प्राप्ते रोपधत्वेन पुंस्त्वसिद्धावपि बहुत्वार्थमन्ययोर-प्राप्तौ बहुत्वार्थञ्च सूत्रम् । दार-अक्षत-लाजा-असु— एते शब्दाः पुंसि नित्यबहुवचनान्ताश्च स्युरिति । अत्र असुशब्दः चिन्त्यः । प्राचीने नवीने च संस्करणेऽस्मिन् सूत्रे असुशब्दस्य ग्रहणं नास्ति, सिद्धान्तकौमुद्यां विद्यते । प्रयोगाश्च इमे दाराः, अक्षताः, लाजाः असवश्चेति ।

हिन्दी– नित्य बहुवचनान्त दार, अक्षत, लाजा और असु शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

१०७/७३. नाड्यपजनोपपदानि व्रणाङ्गपदानि । नाड्यप....व्रणाङ्गपदानि इत्यत्र द्वन्द्वात्मको बहुव्रीहिसमासः ।

व्याख्या– नाडीपूर्वपदः व्रणान्तशब्दः, अपपूर्वकोऽङ्गशब्दः जनपूर्वः पदशब्दश्च पुंसि (पुल्लिङ्गे) स्यात् । परवल्लिङ्गत्वेन क्लीबादिलिङ्गत्वे प्राप्ते नित्यपुंस्त्वार्थमारम्भः । तद्यथा— नाड़ीव्रणः, अपाङ्गः, जनपदः । व्युत्पत्तिः– नाड़ीव्रणः नड् + णिच् + इन्– नाडि + ङीष् + व्रणः; अपाङ्गः— अपाङ्गं = तिर्यक् चलति नेत्रं यत्र– अप् + अङ्ग + घञ् कन् च ।

हिन्दी– 'नाड़ी' पूर्वपदक व्रणान्त शब्द, अपपूर्वक अङ्ग शब्द और जनपूर्वक पद शब्द पुंल्लिङ्ग में होता है ।

१०८/७४. मरुद्गरुदुत्तरदृत्विजः । मरुद्-गरुद्-उत्तरद्-ऋत्विजः– इतरेतरद्वन्द्व-समासः ।

व्याख्या– मरुत्, गरुत्, उत्तरत्, ऋत्विज्— इत्येते शब्दाः पुंसि स्युः । यथा– अयं मरुत्— मृ + उति 'दिशः प्रसेदुर्मरुतो ववुः सुखाः' (रघु०-३।१४), अयं गरुत्— गृ (गु) + उति, उत्तरत्— उद् + तरप् वा उत्पूर्वात् तरतेरतिप्रत्ययान्तः । शतृप्रत्ययान्तस्तु त्रिलिङ्गः । तरन् तरन्तो तरत् । अयम् ऋत्विक्— ऋतु + अज् + क्विन् ।

हिन्दी– मरुत्, गरुत्, उत्तरत्, ऋत्विज— ये शब्द पुंलिङ्ग में होते हैं ।

१०९/७५. ऋषिराशिदृतिग्रन्थिक्रिमिध्वनिबलिकौलिमौलिरविकविकपिमुनयः ।

'ऋषिराशि....मुनय' इत्यत्र इतरेतरद्वन्द्वसमासः; कलिकातासंस्करणे च 'दृति'स्थाने 'धृति', 'ग्रन्थि'स्थाने 'ग्रहि' इति च पाठो विद्यते ।

व्याख्या– ऋषि-राशि-दृति-(धृति)-ग्रन्थि-(ग्रहि)-क्रिमि-बलि-कौलि-मौलि-रवि-कवि-कपि-मुनि— एते शब्दाः पुंसि स्युः । अयमृषिः राशिः— ऋष् + इन् + कित्, अश्नुते = व्याप्नोति– अश् + इञ्, धातोरुडागमश्च; बलिः पूजोपहारे, राजग्राह्ये करे दानवभेदे एव, पुमान् उदरावयवे तु स्त्रीलिङ्गाधिकारस्थेन (२५) सूत्रेण स्त्रीलिङ्ग इति भेदः ।

हिन्दी– ऋषि, राशि, दृति (धृति), ग्रन्थि (ग्रहि), क्रिमि, बलि, कौलि, मौलि, रवि, कवि, कपि और मुनि— ये शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

११०/७६. ध्वजगजमुञ्जपुञ्जाः । ध्वज.....पुञ्जाः– इतरेतरद्वन्द्वसमासोऽत्र ।

व्याख्या– ध्वज-गज-मुञ्ज-पुञ्ज— एते शब्दाः पुंसि स्युः । ध्वजः = पताका, 'ध्वजमस्त्रियाम्' (२।८।९९) इत्यमरोक्तिः अपाणिनीयतयोपेक्ष्या मूलं तस्य मृग्यम्; अयं ध्वजः— ध्वज् + अच्, इदं ध्वजमिति वा (अमर०) । अयं गजः— गज् + अच्, 'कचा-चितौ विश्वगिवागजौ गजौ' (कि०-१।३६) । अयं मुञ्जः— मुञ्ज + अच्, अयं पुञ्जः— पुस् + जि + ड, 'क्षीरोदवेलेव सफेनपुञ्जाः' (कुमार०-७।२६) ।

हिन्दी– ध्वज, गज, मुञ्ज और पुंज शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

१११/७७. हस्तकुन्तान्तवातव्रातदूतधूर्तसूतचूतमुहूर्ताः । हस्त...मुहूर्ताः– इतरेतर-द्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– हस्त-कुन्त-अन्त-वात-व्रात-दूत-धूर्त-सूत-चूत-मुहूर्त— एते शब्दाः पुंसि स्युः । हस्तः सूतः सारथौ प्रसूते तु त्रिलिङ्गः । 'मुहूर्त्तोऽस्त्रियाम्' इत्यमरोक्तिश्चिन्त्यमूला । अयं हस्तः— हस् + तन् ,न इट्, 'गौतमी हस्ते विसर्जयिष्यामि' (शा०-३); अयं कुन्तः— कु + उन्द + क्त वा० शाक० पररूपम्, 'कुन्ताः प्रविशन्ति' (काव्य०-२) । अन्तः— अम् + तन्, वातः— वा + क्त, व्रातः— वृ + अतच् (पृषोदरादित्वात्साधुः) 'श्वपाकानां व्रातैः' (गंगा०-२९) । दूतः— दु + क्त, दीर्घश्च, धूर्तः— धूर्व- धूर् + क्त, 'धूर्तोऽपरां चुम्बति', सूतः— सू + क्त, चूतः— चूष् + क्त, मुहूर्तः— हुर्छ् + क्त, धातोः पूर्वं मुट् च ।

हिन्दी– हस्त, कुन्त, अन्त, वात, व्रात, दूत, धूर्त, सूत, चूत और मुहूर्त— ये शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

११२/७८. षण्डमण्डकरण्डभरण्डवरण्डतुण्डगण्डमुण्डषण्डशिखण्डा: । षण्ड... शिखण्डा: (इतरेतरद्वन्द्वसमास:) ।

व्याख्या– षण्ड-मण्ड-करण्ड-भरण्ड-(रण्डविशेष:–पा० कलि०)-वरण्ड-तुण्ड-गण्ड-मुण्ड-पाषण्ड-शिखण्ड— एते शब्दा: पुंल्लिङ्गवाचका: सन्ति । अयं षण्ड:— सन् + ढ, पृषोदरादित्वात् षत्वम्; मण्ड:— मण्ड् + अच्, मन् + ड, तस्य नेत्वं वा; करण्ड:— कृ + अण्डन्, 'करण्डपीडिततनो: भोगिन:' (भर्तृ०-२।८४); भरण्ड— भृ + कण्डन्, रण्ड:— रम् + ड), वरण्ड:— वृ + अण्डच्, तुण्ड— तुण्ड + अच्, कोशे 'तुण्डमि'ति नपुंसक:; गण्ड:— गण्ड् + अंच्, मुण्ड:— मुण्ड् + अच् ।

हिन्दी– षण्ड, मण्ड, करण्ड, भरण्ड, वरण्ड, तुण्ड, गण्ड, मुण्ड, पाषण्ड और शिखण्ड शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

११३/७९. वंशांशपुरोडाशा: । वंशश्च अंशश्च पुरोडाशश्च, चार्थे द्वन्द्वसमास: ।

व्याख्या– वंश-अंश-पुरोडाश— एते शब्दा: पुंसि (पुंल्लिङ्गे) स्युरिति । तद्यथा– अयं वंश:— वमति उद्गिरति वम् + श, तस्य नेत्वम्; 'धनुर्वंशविशुद्धोऽपि निर्गुण: किं करिष्यति' (हि० प्र०-२३) । अयमंश:— अंश् + अच्, 'सकृदंशो निपतति' (मनु०-९।४७) । अयं पुरोडाश:— पुरोडाश्– डाश: ।

हिन्दी– वंश, अंश और पुरोडाश शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

११४/८०. ह्रदकन्दकुन्दबुद्बुदशब्दा: । ह्रद...शब्दा:- इतरेतरद्वन्द्वसमासोऽत्र ।

व्याख्या– ह्रद-कन्द-कुन्द-बुद्बुद-शब्द— एते शब्दा: पुंसि भवन्ति । तद्यथा– अयं ह्रद:— ह्लाद् + अच् नि०, अयं कन्द:— कन्द् + अच्, कुन्द:— कु + दै (दो) + क, नि० मुम् अथवा कु + दत् + नुम्, बुद्बुद:— 'सततं जातविनष्टा: पयसामिव बुद्बुदा: पयसि' । शब्द:— शब्द् + घञ्, 'विश्वासोपगमादभिन्नगतय: शब्दं सहन्ते मृगा:' (शा०-१।१४) ।

हिन्दी– ह्रद, कन्द, कुन्द, बुद्बुद और शब्द— ये शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

११५/८१. अर्घपथिमथ्यृभुक्षिस्तम्बनितम्बपूगा: । अर्घ....पुगा:– इतरेतरद्वन्द्व-समास: ।

व्याख्या– अर्घ-पथि(न्)-मथि(न्)-स्तम्ब-नितम्ब-पूग— इत्येते शब्दा: पुंसि भवन्ति । तद्यथा— अर्घ + घञ्, 'कुत्स्या: स्यु: कुपरीक्षका हि मणयो यैरर्घत: पातिता:' (भर्तृ०-२।१५) 'आप: क्षीरं कुशाग्रञ्च दधिसर्पि: सतुण्डलम् । यव: सिद्धार्थकश्चैव अष्टाङ्गोऽर्घ: प्रकीर्त्तित:' ।। एषोऽर्घ: । पथिन्— पथ् + आधारे इनि, मथिन्— मथ्

+ इनि, ऋभुक्षिन्— ऋभुक्षः वज्रं स्वर्गो वास्यास्ति– इनि, स्तम्बः— स्था + अम्बच् किच्च पृषो०, नितम्बः— 'निभृतं तभ्यते कामुकैः' तभु कांक्षायाम्, पूगः— पूं + गन्, कित्। अस्मिन् सूत्रे कलिकातासंस्करणे 'मथि'स्थाने 'सखि'शब्दो विद्यते।

हिन्दी– अर्घ, पथिन्, मथिन्, ऋभुक्षिन्, स्तम्ब, नितम्ब और पूग— ये शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं।

११६/८२. पल्लवपल्वलकफरेफकटाहनिर्व्यूहमठमणितरङ्गतुरङ्गगन्धस्कन्धमृदङ्गसङ्गसमुद्रपुङ्खाः। पल्लव......पुङ्ख– इतरेतरद्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– पल्लव-पल्वल-(पल्लल–क०)-कफ-रेफ-कटाह-निर्व्यूह-(निर्य्यूह–क०)-मठ-मणि-तरङ्ग-तुरङ्ग-गन्ध-स्कन्ध-मृदङ्ग-सङ्ग-समुद्र-पुङ्ख— एते शब्दाः पुंसि (पुंल्लिङ्गाः) स्युरिति। तद्यथा– अयं पल्लवः— पल् + क्विप् + ल + अप् = लव, पल् चासौ लवश्च (कर्मधारयसमासः) 'पल्लवोऽस्त्री' इत्यमरोक्तिश्चिन्त्यमूला कोशानुसारेण क्लीबे– पल्लवमित्यपि। पल्वलः— पल् + ववच्, कोशानुसारेण क्लीबे– पल्वलम्। कफः— केन जलेन फलति– फल् + ड तास, 'प्राणप्रयाणसमये कफवातपित्तैः' (उद्भट०)। रेफः— रिफ + अच्, कटाहः— कट + आ + हन् + ड, निर्व्यूह— निर् + वि + वह् + घञ्, निर्यूह— निर् + उह् + कः (पृषोदरादित्वात्साधुः), मठः— मठ् (घञर्थे) क।

हिन्दी– पल्लव, पल्वल (पल्लल), कफ, रेफ, कटाह, निर्व्यूह, निर्य्यूह आदि शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं।

११७/८३. सारथ्यतिथिकुक्षिबस्तिपाण्यञ्जलयः। सारथि...अञ्जलयः– इतरेतरद्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– सारथि-अतिथि-कुक्षि-बस्ति-पाणि-अञ्जलि— एते शब्दाः पुंसि स्युरिति। क्वचित् पुस्तके (कलिकातासंस्करणे पाणिशब्दस्य ग्रहणं नास्ति। तद्यथा– अयं सारथिः— सृ + अथिण्, सह रथेन सरथः घोटकः, तत्र नियुक्तः इञ् वा) 'मातलिसारथिर्ययौ' (रघु०-३।६७)। अतिथिः— अतति गच्छति, न तिष्ठति– अत् + इथिन्, 'एकरात्रन्तु निवसन्नतिथिर्ब्राह्मणः स्मृतः' (मनु०-३।१०२)। कुक्षिः— कुक् + क्सि। वस्तिः— वस् + तिः। पाणिः— पण् + इण्, 'दानेन पाणिर्न तु कङ्कणेन' (भर्तृ०-२।७१)। अञ्जलिः— अञ्ज + अलि, 'सुपूरो मूषिकाञ्जलिः' (पञ्च०१।२५)।

हिन्दी– सारथि, अतिथि, कुक्षि, वस्ति, पाणि और अञ्जलि शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं।

इति पुंल्लिङ्गप्रकरणम्

अथ नपुंसकलिङ्गप्रकरणम्

११८/१. नपुंसकम् । अधिकारोऽयम्, न पुमान् न स्त्री नि० स्त्रीपुंसकयोः पुंसक आदेशः ।

व्याख्या– इत ऊर्ध्वं 'अक्षमिन्द्रिये' इति सूत्रान्तं यावत् वक्ष्यमाणाबाधमन्तरेण क्लीबलिङ्गाः स्युरित्यधिकारसूत्रमिदम् । यथास्थानमुदाहरणं द्रष्टव्यम् । पुंस्त्वादिलिङ्गलक्षणविषये— लिङ्गवचनविचारे— उक्तमस्ति यत्—

पुंस्त्वं तु लौकिकं मेढ्रवत्त्वं स्त्रीत्वं सयोनिता ।
अयोग्येन्द्रिययोगित्वं क्लीबत्वमवधार्यताम् ।।६।।

हिन्दी– 'नपुंसकम्' यह अधिकार है । यहाँ से लेकर 'अक्षमिन्द्रिये' इस अन्तिम सूत्र तक इसका अधिकार है, यदि बाधक सूत्र न हो तो ।

११९/२. भावे ल्युडन्तः । ल्युट्-प्रत्ययोऽन्ते यस्यासौ ल्युडन्तः (बहुव्रीहिसमासः) ।

व्याख्या– भावार्थकस्य ल्युट् प्रत्ययान्तो धातुः क्लीबे (नपुंसके) स्यादिति । तद्यथा गमनम्— गम् + ल्युट्, हसनम्— हस् + ल्युट् । भावे किम् ? पच्यतेऽनेनेति करणे ल्युट् पचनो दहनोऽग्निः । इध्मप्रव्रश्चनः कुठारः पाषाणदारणः टङ्कः ।

हिन्दी– भावार्थक ल्युट् प्रत्ययान्त धातु नपुंसकलिङ्ग में होता है । जैसे— गमनम्, हसनम् आदि ।

१२०/३. निष्ठा च । क्तप्रत्ययान्तस्य बोधको निष्ठाप्रत्ययः— क्तक्तवतु निष्ठेति ।

व्याख्या– भावार्थकनिष्ठाप्रत्ययान्तो धातुः क्लीबे (नपुंसक लिङ्गे) स्यादिति । हसितम्— हस् + क्त, गीतम्— गै + क्त, 'आर्ये साधु गीतम्' (शाकुन्तलम्-१); वृत्तम्— वृत् + क्त, 'सतां वृत्तमनुण्ठिताः' (मनु०-१०।१२७) ।

हिन्दी– 'क्त' प्रत्यय का बोधक निष्ठा है, भावार्थक निष्ठा प्रत्ययान्त धातु नपुंसक लिङ्ग में होता है ।

१२१/४. त्वष्यञौ तद्धितौ । त्व-ष्यञौ-तद्धितौ— इतरेतरद्वन्द्वसमासोऽत्र ।

व्याख्या– भावे इत्यनुवर्तते पूर्वसूत्रात् । अर्थात् भावे विहिता ये त्व-ष्यञौ तद्धितौ, तदन्ताः क्लीबे स्युः । यथा— भावे शुभ्रत्वं शौभ्रयम्— शुभ् + रक्, इदं जडत्वं

जाड्यम्— जड + त्व, जड + ष्यञ्, 'तज्जाड्यं वसुधाधिपस्य' (भर्तृ०-२।१५); शुक्लत्वं शौक्ल्यम्— शुच् + लुक् + कुत्वम्, शुक्ल + ष्यञ्, ष्यञः षित्वसामर्थ्यात्पक्षे स्त्रीत्वमपि, तेन 'षिद्गौरादि-भ्यश्च' इति ङीषि, यलोपे, औचिती—औचित्यं, माधुरी—माधुर्य, चातुरी—चातुर्य्यम् ।

हिन्दी– भाव में विहित 'त्व' और 'ष्यञ्' प्रत्ययान्त तद्धित शब्द नपुंसक लिङ्ग वाले होते हैं । जैसे— शुभ्रत्व, शौभ्रय आदि ।

१२२/५. कर्मणि च ब्राह्मणादिगुणवचनेभ्यः । बहुव्रीहिगर्भो द्वन्द्वसमासोऽत्र ।

व्याख्या– ब्राह्मणादिभ्यो गुणवचनेभ्यश्च कर्मणि चात् भावे यौ विहितौ त्व-ष्यञौ तदन्ताः क्लीबे स्युः । ब्राह्मणस्य कर्म भावो वा ब्राह्मणत्वं-ब्राह्मण्यम्— 'ब्रह्म वेदं शुद्धं चैतन्यं वा वेत्त्यधीते वा अण् + त्व, ब्राह्मण + ष्यञ् वा यत्, 'सत्यं शपे ब्राह्मण्येन' (मृच्छ०-५)। 'चातुर्वर्ण्यादीनां स्वार्थे उपसंख्यानम्' इति वार्त्तिकोक्तेः स्वार्थे ष्यञ्— चातुर्वण्यं, त्रैलोक्यमित्यादि । क्वचित् स्वार्थिका अपि प्रत्यया प्रकृतितो लिङ्गवचनान्यतिवर्तन्ते इति भाष्योक्तेः ।

हिन्दी– कर्म तथा भाव में कृत त्व और ष्यञ् प्रत्यय वाले ब्राह्मणादि एवं गुणवचन शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

१२३/६. यद्यढग्यगञण्वुञ्छाश्च भावकर्मणि । यद्य...ञ्छाश्च— इतरेतरद्वन्द्व-समासः ।

व्याख्या– भावे कर्मणि चार्थे विहिता ये यद्यदादयस्तदन्ताः क्लीबे (नपुंसके) स्युरिति । भावकर्मणीति ग्रहणं स्वार्थनिवृत्त्यर्थम् । स्तेनस्य भावः कर्म वा 'स्तेनाद्यत् नलोपश्च' (५।१।१२५) इति यति स्तेयम् । सख्युर्भावः कर्म वा 'सख्युर्य' (५।१।१२६) इति ये सख्यम् । कपेर्ज्ञातेः वा भावादि 'कपिज्ञात्योर्ढक्' (५।१।१२७) इति ढकि कापेयम्, ज्ञातेयम् । एवमेवान्यगृहीतप्रत्ययानां तत्तत्सूत्रैः उदाहरणानि ज्ञेयानि ।

हिन्दी– भाव तथा कर्म में प्रयुक्त तद्धित यत्, य, ढक्, यक्, अञ्, अण्, वुञ् और छ प्रत्यय से निष्पन्न शब्द नपुंसकलिङ्ग में होते हैं ।

७. अव्ययीभावः (सू० सं०-६५९–अ०-२।४।१८) ।

व्याख्या– अव्ययीभावसमासनिष्पन्नः शब्दः क्लीब-(नपुंसक)-लिङ्गः स्यात् । यथा— अधिस्त्रि स्त्रियामिति विग्रहे विभक्त्यर्थेऽव्ययीभावे तदन्तस्य क्लीबतया ह्रस्वः । उपनदिपक्षे अच् समासान्ते उपनदम्, यथाशक्ति इति ।

हिन्दी– अव्ययीभाव समास से निष्पन्न शब्द नपुंसक लिङ्ग वाला होता है। जैसे— अधिस्त्रि, उपनदम्, यथाशक्ति।

१२४/८. द्वन्द्वैकत्वम्। द्वन्द्व + एक त्वम्— षष्ठीतत्पुरुषसमासः।

व्याख्या– समाहारद्वन्द्वसमासनिष्पन्नाः शब्दाः क्लीबे (नपुंसकलिङ्गे) स्युरिति। यथा– पाणिपादम्— पण् + इण्, पद + घञ्; पाणी च पादौ चेति, धवखदिरम्— धु + अप् खद् + किरच्; धवश्च खदिरश्चेति। अत्र 'द्वन्द्वश्च प्राणितूर्यसेनाङ्गानाम्' (२।४।२) इति सूत्रस्थोदाहरणमपि बोध्यम्।

हिन्दी– समाहार द्वन्द्व समास से निष्पन्न शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं; जैसे— पाणिपादम्, धवखदिरम् आदि।

१२५/९. अभाषायां हेमन्तशिशिरावहोरात्रे च। अभाषायामित्यत्र नञ्समासः, ततः परं द्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– संस्कृतभाषाभिन्ननियामके वेदे हेमन्तशिशिररूपो द्वन्द्वसमाहारः नैकवत् क्लीबलिङ्गो वा। किन्तु 'परवल्लिङ्गं द्वन्द्वतत्पुरुषयोः' इत्युक्ते परवल्लिङ्गता द्विवचनान्तता च तथा अहोरात्रशब्दो द्वन्द्वनिष्पन्नः क्लीब एव, 'रात्राह्नाहाः पुंसि' इति सूत्रपुंल्लिङ्गापवादः। अभाषायामित्युक्तेः भाषायां— हेमन्तशिशिरम्, अहोरात्र इत्येव।

हिन्दी– भाषाभिन्न वेद में हेमन्त-शिशिर तथा अहन् रात्रि में इनमें द्वन्द्व समासपूर्व शब्द के समान लिङ्ग होता है।

१२६/१०. अनञ्कर्मधारयस्तत्पुरुषः। अस्मिन्नधिकारसूत्रे द्वन्द्वगर्भो बहुव्रीहिसमासः।

व्याख्या– नञ् च कर्मधारयश्च, तौ नञ्कर्मधारयौ, नास्ति नञ्कर्मधारयौ यत्र स अनञ् कर्मधारयः। इतः परं नञ्कर्मधारयभिन्नस्तत्पुरुषोऽधिक्रियते। अर्थात् अधिकार-सूत्रत्वाद् नञ् भिन्नः कर्मधारयभिन्नश्च तत्पुरुषो नपुंसकलिङ्गो भवतीत्यर्थः। द्विगुः स्त्रियां चेति व्यवस्थया।

हिन्दी– यह अधिकारनिर्देशक है। नञ्भिन्न और कर्मधारयभिन्न तत्पुरुष शब्द नपुंसक लिङ्ग में होता है।

१२७/११. अनल्पे छाया। न अल्पम् अनल्पं, तस्मिन् अनल्पे— नञ् तत्पुरुषसमासोऽत्र।

व्याख्या– बहुसम्बन्धिनी या छाया तदन्तस्तत्पुरुषः क्लीबे (नपुंसकलिङ्गे) स्यात्।

नपुंसकत्वेन आपो ह्रस्वः । यथा— इक्षूणां छाया इक्षुच्छायम् । 'इक्षुच्छाया निषादिन्य' इति तु आनिषादिन्य इत्याङ् प्रश्लेषेण समर्थनीयम् । शराणां छाया शरच्छायमिति ।

हिन्दी– बाहुल्य अर्थ में जो छाया शब्द (तत्पुरुष), वह नपुंसक लिङ्ग में होता है ।

१२८/१२. राजाऽमनुष्यपूर्वा सभा । अत्र नञ्द्वन्द्वगर्भो बहुव्रीहिसमासो विज्ञेयः ।

व्याख्या– राजपर्य्यायपूर्वः मनुष्यभिन्नमनुष्यसदृशतुल्यपूर्वश्च छायान्तस्तत्पुरुषः क्लीबे स्यात् । यथा— नृपाणां सभा नृपसभम् । इनसभम् । राजपर्यायपूर्वस्यैवेष्यते, न तु राजस्वरूपविशेषपूर्वस्य । तेन राजसभा, चन्द्रगुप्तसभा । भाष्यकृता चन्द्रगुप्तसभेति प्रत्युदाहरणात् चन्द्रगुप्तस्य भाष्यकारसमकालत्वं ततः प्राक्कालत्वं वा प्रतीयते । अमनुष्येति पर्य्युदासात् तत् सदृशरक्षःपिशाचादिपूर्वकस्यैव, तेन रक्षःसभम्, पिशाचसभम् । तत्पूर्वकस्य किम् ? श्वसभा, मृगसभेत्यादि ।

हिन्दी– जहाँ राजपर्याय पूर्व में हो मनुष्यभिन्न अथवा मनुष्यसदृश पूर्व छायान्त तत्पुरुष शब्द नपुंसक लिङ्ग में हो । यथा— नृपसभम् इत्यादि में ।

१२९/१३. सुरासेनाच्छायाशालानिशाः स्त्रियां च । अत्रेतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– उपर्युक्तशब्दान्तः तत्पुरुषः स्त्रियां चात्क्लीबे च स्यात् । यथा— यव-सुरं-यवसुरा, ब्राह्मणसेनम्-ब्राह्मणसेना । अबहुसम्बन्धार्थं छायाशब्दग्रहणम्— कुड्य-च्छाया-कुड्यच्छायम्— कु + यक्, डुगागमः । गोशालम्-गोशाला । तत्पुरुष इत्यधिकारात् **बहुव्रीहौ त्रिलिङ्गः**— दृढसेनः, दृढसेना, दृढसेनम् ।

हिन्दी– सुरा-सेना-छाया-शाला और निशाशब्दान्त तत्पुरुष स्त्रीलिङ्ग तथा नपुंसक लिङ्ग में होते हैं । जैसे— यवसुरं, यवसुरा आदि ।

१३०/१४. परवत् । इत्यस्मात्पूर्वं क्वचित् शिष्टमित्यपि पाठ उपलभ्यते ।

व्याख्या– यत्र शिष्टमिति पाठस्तत्र उक्तात्पूर्वकथितादन्यदिति शिष्टम् । उक्तभिन्नः तत्पुरुषः परवल्लिङ्गः स्यात् । यथा— राज्ञः पुरुषः राजपुरुषः— राज् + कनिन्, रञ्ज-यति— रञ्ज् + कनिन् नि. वा + पुरुषः । राजमहिषी— राज्ञः महिषी (ज्येष्ठा राज्ञी), षष्ठीतत्पुरुषसमासः, राजधनमित्यादि ।

हिन्दी– पूर्व सूत्र में उक्त भिन्न तत्पुरुष पर शब्द के समान लिङ्ग होता है । जैसे— राजपुरुष आदि ।

१५. रात्राह्नाहाः पुंसि । सूत्रमिदमष्टाध्याय्यां २।४।२९ स्थाने विद्यते, क्वचिदत्रापि गृहीतमस्ति ।

व्याख्या– कृतसमासान्तरात्राद्यन्तस्तत्पुरुषः पुंस्येव स्यात् । परवल्लिङ्गतापवादः । तदन्तद्वन्द्वोऽपि पुंसि स्यात् । सूत्रपाठे परवल्लिङ्गं द्वन्द्वतत्पुरुषयोरित्युपक्रमेण एतदपवादसूत्रे द्वन्द्वपदस्याप्यनुवर्त्तनात् । तद्यथा– पूर्वरात्रः— पूर्व + अच्, अपररात्रः, पूर्वाह्णः, अपराह्णः, द्व्यहः । द्वन्द्वे— अहश्च रात्रिश्च अहोरात्रः ।

हिन्दी– समास होने पर रात्र, अह्न और अह शब्दन्त तत्पुरुष पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

१३१/१६. अपथपुण्याहे नपुंसके । अपथञ्च पुण्याहञ्चेति— द्वन्द्वसमासोऽत्र ।

व्याख्या– अपथ-पुण्याहशब्दौ नपुंसके स्तः (भवतः) । यथा— अपथम् । तत्पुरुष इत्येव अन्यत्र— अपथो देशः 'अपथे पदमर्पयन्ति हि श्रुतवन्तोऽपि रजोनिमीलिताः' (रघु०-१।७४) । पुण्याहस्य तु पुंस्त्वे प्राप्तेऽयमारम्भः स तु तत्पुरुष एव । बहुव्रीहौ समासान्ता प्रसक्तेः वार्त्तिके पुण्यसुदिनामह्नः क्लीबता इत्युक्तेः । सुदिनाहम् । अपथेति निर्देशात् कृतसमासान्त एव सूत्रं प्रवर्त्तते नेह अपन्थाः ।

हिन्दी– अपथ और पुण्याह— ये दोनों शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

१३२/१७. संख्यापूर्वा रात्रिः । सङ्ख्या पूर्वा यस्याः रात्र्याः सा संख्यापूर्वा रात्रिः (बहुव्रीहिसमासः) ।

व्याख्या– संख्यावाचकपूर्वपदः रात्रान्तस्तत्पुरुषः क्लीबे स्यात् । पुंस्त्वापवादः । यथा– त्रिरात्रं, पञ्चरात्रं, गणरात्रम् । संख्यापूर्व इति किम् ? सर्वरात्रः ।

हिन्दी– संख्यावाचक पूर्वपद रात्रान्त तत्पुरुष समासयुक्त शब्द नपुंसक लिङ्ग में होता है । जैसे— त्रिरात्रम् आदि ।

१३३/१८. द्विगुः स्त्रियां च ।

व्याख्या– द्विगुसमासनिष्पन्नः शब्दः स्त्रियां चात् नपुंसके च स्यात् । व्यवस्थितविभाषेयं व्यवस्था च सूत्रपाठेन वार्त्तिकपाठेन दर्शिता यथा स नपुंसकम् स समाहारद्विगर्नपुंसकलिङ्गः स्यात् । परवल्लिङ्गतापवादः । यथा— पञ्चगवम् । व्यवस्थया— इयं पञ्चमूली । एवमेव त्रिलोकी, पञ्चखट्वी, पञ्चतक्षी-प्रभृतिशब्दाः ।

हिन्दी– द्विगु समास से निष्पन्न शब्द स्त्रीलिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

१३४/१९. इसुसन्तः । इस् + उस् + अन्तः— द्वन्द्वात्मको बहुव्रीहिः ।

व्याख्या– इस्-प्रत्ययान्तः उस्-प्रत्ययान्तश्च शब्दः क्लीबे (नपुंसके) स्यात् ।

यथा- इदं हविः— हूयते हु कर्मणि असुन्, 'वहति विधिहुतं या हविः' (शा०-१।१)। इस्-प्रत्ययस्य उस्-प्रत्ययस्य तु धनुः— धन् + उसि, 'धनुष्यमोघं समधत्त बाणम्' (कु०-३।६६) ।

हिन्दी– इस्-प्रत्ययान्त तथा उस्-प्रत्ययान्त शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं। जैसे— हवि, धनु आदि ।

१३५/२०. अर्चिः स्त्रियां च ।

व्याख्या– इसन्तत्वेन क्लीबत्वे प्राप्ते वचनम् । अतोऽर्चिशब्दो नपुंसके चात् स्त्रियां च लिङ्गे भवति । यथा- इदमियं वा अर्चिः— अर्च् + इसि, 'प्रदक्षिणार्चिर्हविराददे' (रघु०-३।१४) ।

हिन्दी– अर्चिस् शब्द नपुंसक और स्त्रीलिङ्ग में होता है ।

१३६/२१. छदिः स्त्रियामेव ।

व्याख्या– इसन्तत्वेऽपि छदिःशब्दः स्त्रियां स्यान्न तु क्लीबे (नपुंसके) । यथा– इयं छदिः— छद् + कि इस् वा । क्वचिन्नपुंसकेऽपि भवति आप्टेकोशानुसारेण । एवमनुशासने स्थिते पटलं छदि रित्यमरव्याख्यातारः पटलसाहचर्यात् छदिषः क्लीबतां वदन्तः उपेक्ष्याः ।

हिन्दी– इस्-प्रत्ययान्त होने पर भी छदिस् शब्द स्त्रीलिङ्ग में होता है, न कि नपुंसक में ।

१३७/२२. मुखनयनलोहवनमांसरुधिरकार्मुकविवरजलहलधनान्नाभिधानानि ।
मुख.....धनान्नाभिधानानि— इत्यत्र द्वन्द्वगर्भस्तत्पुरुषसमासः ।

व्याख्या– सूत्रोक्तशब्दानां तद्वाचकानि च नपुंसके लिङ्गे स्युरिति । यथा— इदं मुखम्, आननम्, नयनं, लोचनम्, लोहं कालं अयः, वनं गहनं विपिनम्, मांसमामिषं पलम्, रक्तं रुधिरं शोणितम् अस्रम्, कार्मुकं शरासनम्, विवरं छिद्रं बिलम्, जलं सलिलं वारि, हलं लाङ्गलम्, धनं द्रविणं वसु, अन्नमशनम् इत्यादि । व्युत्पत्तिः– मुखम्— खन् + अच्, डित् धातोः पूर्वं मुट् च, नयनम्— नी + ल्युट्, लोह— लूयतेऽनेन लू + ह, वन— वन् + अच् ।

हिन्दी– उपर्युक्त मुख आदि शब्द तथा उनके पर्यायवाची शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

१३८/२३. सीरार्थौदनाः पुंसि । सीर + अर्थ + ओदनाः— इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– पूर्वसूत्रापवादः । सीर-अर्थ-ओदन— एते शब्दाः पुंसि (पुंल्लिङ्गे) स्युः । यथा– सीरः— सि + रक् (पृषो०), 'सद्यः सीरोत्कषणसुरभिक्षेत्रमारुह्य मालम्' (मेघ०-२) । अर्थः— ऋ + थन्, 'ज्ञातार्थो ज्ञानसम्बन्धः' । रायो हलि (पा० सू०-७।२।८५) इतिसूत्रनिर्देशात् रैशब्दस्य धनवाचित्वेऽपि पुंस्त्वमेव । क्लीबत्वे रैशब्दस्य ह्रस्वे रिण इति स्यात् । ओदनः— उन्द् + युच्, दध्योदन ।

हिन्दी– सीर, अर्थ और ओदन शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

१३९/२४. वक्त्रनेत्रारण्यगाण्डीवानि पुंसि च । वक्त्र-नेत्र-अरण्य-गाण्डीवानि— इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– वक्त्र-नेत्र-अरण्य-गाण्डीवश्चैते शब्दाः पुंसि (पुंल्लिङ्गे), चकारात् क्लीबे (नपुंसके) लिङ्गे च स्युरिति । तद्यथा– अयं वक्त्रः, इदं वक्त्रम्— वक्ति अनेन वच्– करणे ष्ट्रन्, 'यद्वक्त्रं मुहुरीक्षते न धनिनां ब्रूषे न चाटून् मृषा' (भर्तृ०-३।१४७) । नेत्रो, नेत्रम्— नयति नीयते वा अनेन नी + ष्ट्रन्, 'प्रायेण गृहिणी नेत्राः कन्यार्थेषु कुटुम्बिनः' (कु०-६।८५) । अरण्यः, अरण्यम्— अर्यते गम्यते शेषे वयसि ऋ + अन्य, 'प्रियानाशे कृत्स्नं किल जगदरण्यं हि भवति' (उत्तर०-६।३०) । गाण्डीवः, गाण्डीवम्— गाण्डिरस्त्यस्य संज्ञायां च पूर्वपददीर्घो विकल्पेन, 'गाण्डीवं स्रंसते हस्तात्' (गी०-१।२९) ।

हिन्दी– वक्त्र, नेत्र, अरण्य और गाण्डीव शब्द पुंल्लिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग दोनों में होते हैं ।

१४०/२५. अटवी स्त्रियाम् ।

व्याख्या– वनवाचित्वेऽपि अटवीशब्दः स्त्रियां (स्त्रीलिङ्गे) स्यात् । यथा– इयमटवी— अट् + अवि + ङीष् वा, 'आहिंड्यते अटव्या अटवीं' (श०-२) ।

हिन्दी– अटवी शब्द वनवाची होने पर भी स्त्रीलिङ्ग में होता है ।

१४१/२६. लोपधः । 'ल' उपधा यस्य स लोपधः— बहुव्रीहिसमासः ।

व्याख्या– तूलादीनामदन्तानामपवादतया परसूत्रे (अग्रिमे) निर्देशेन अदन्ता एवेह प्रकरणे गृह्यन्ते । एवं सर्वत्र । अदन्तो लोपधः क्लीबे स्यात् । यथा– इदं कुलं-कूलम् स्थलम् — कुल् + क, कूल् + अच्, 'निदानमिक्ष्वाकुकुलस्य सन्ततेः' (रघु०-३।१), 'यमुनाकूले' (गीत-१) । स्थानमात्रे अकृत्रिमभूमौ तु ङीब्विधानसामर्थ्यात्

स्त्रीत्वमेव । तेन स्थली अकृत्रिमा भूमिः, 'सैषा स्थली यत्र विचिन्वता त्वाम्' (रघु०) ।

हिन्दी– अदन्त 'ल' उपधा वाले शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं । जैसे— कुलम्, कूलम्, स्थलम् ।

१४२/ २७. तूलोपलतालकुसूलतरलकम्बलदेवलवृषलाः पुंसि । तुलो...वृषलाः— इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– पूर्वसूत्रापवादः । तूल-उपल-ताल-कुसूल-तरल-कम्बल-देवल-वृषल— एते शब्दाः पुंसि (पुंल्लिङ्गे) भवन्ति । यथा– अयं तूलः— तूल् +क, उपलः— उप् + ला + क, 'कान्ते कथं घटितवानुपलेन चेतः' (शृंगार-३), तालः— तल् + अण्, 'करकिसलयतालैर्मुग्धया नर्त्यमानम्' (उत्तर०-३।१९), कुसूलः— कुस् + उलच्, 'को धन्यो बहुभिः पुत्रैः कुशला पूरणाढकैः' (हि. प्र.-२०), तालः गानक्रियामानम् । वृक्षवाचकस्य जातित्वात् द्विलिङ्गता, अत एव हिन्तालस्यापि परत्वात् द्विलिङ्गता न विरुध्यते । तरलः हारमध्यगमणिः, चञ्चलपर्यायस्तु त्रिलिङ्ग, क्रियोपाधित्वात्— तृ + अलच्, 'मुक्तामयीऽप्यतरल-मध्यः' (वासव०-३५) । कम्बलः— कम् + कल् + बुगागमः, 'कम्बलवन्तं न बाधते शीतम्' (सुभा०) । देवलः— देव + ला + क, वृषलः— वृष + कलच् ।

हिन्दी– तूल, उपल, ताल, कुसूल (कुशूल), तरल, कम्बल, देवल और वृषल शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

१४३/ २८. शीलमूलमङ्गलसालकमलतलमुसलकुण्डलपललमृणालबालनिगल-पलालबिड़ालखिलशूलाः पुंसि च । शील....शूलाः— इत्यत्रेतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– शील-मूल-मङ्गल-साल-कमल-तल-मुसल-कुण्डल-पलल-मृणाल-बाल-निगल-पलाल-बिड़ाल-खिल-शूल— एते शब्दाः पुंसि (पुंल्लिङ्गे) चात् नपुंसके स्युरिति । लोपधत्वेन क्लीबत्वे प्राप्ते पक्षे पुंस्त्वार्थं सूत्रमिदं प्रवर्त्तितम् । यथा– शीलः-शीलम्— शील् + अच्, अजगरसर्पविशेषः, 'शीलं परमभूषणम्' (भर्तृ०-२।८२) । मूलः-मूलम्— मूल् + क, 'तरुमूलानि गृही भवन्ति तेषाम्' (श०-७।२०), 'शाखिनो धौतमूलाः' (१।२०), मङ्गलः-मङ्गलम्— मङ्ग् + अलच्, 'जनकानां रघूणाञ्च यत्कृत्स्नं गोत्रमङ्गलम्' (उत्तर०-६।४२), सालः-सालम्— सल् + घञ्, कमलः-कमलम्— कं जलं मलति भूषयति कम् + अल् + अच्, 'कमलमनम्भसि कमले च कुवलये तानि कनकलतिकायाम्' (काव्य०-१०) ।

हिन्दी– शील, मूल, मङ्गल, साल, कमल, तल, मुसल आदि शब्द पुंल्लिङ्ग तथा क्लीब में होते हैं ।

१४४/२९. शतादिः संख्या । अत्र बहुव्रीहिसमासः ।

व्याख्या– शतादिशब्दाः संख्यासंख्येययोः क्लीबे (नपुंसके) स्युरिति । शतं, सहस्रम्— दश-दशतः परिमाणमस्य— दशन् + त श आदेशः नि० साधुः । 'शतमेकोऽपि सन्धत्ते प्रकारस्थो धनुर्धरः' (पञ्च०-१।२२९), सहस्रम्— समानं हसति— हस् + र । शतादिः किम् ? एको द्वौ बहवः; संख्या किम् ? शतः (शतशृङ्गः पर्वतः) ।

हिन्दी– संख्यावाचक शत और सहस्र शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

१४५/३०. शतायुतप्रयुताः पुंसि च । इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– शत-अयुत-प्रयुत— एते शब्दाः पुंसि चकारात् नपुंसके भवन्ति । यथा- अयं शतः, इदं शतम्, व्युत्पत्तिरुपरि विद्यते । अयुतः-अयुतम्— वि० न० त० । प्रयुतः-प्रयुतम्— प्रा० + स०, दशलक्षमिता संख्या । संख्यावाचकत्वेन क्लीबत्वे प्राप्ते पक्षे पुंस्त्वार्थे सूत्रमिदं प्रवर्त्तितम् ।

हिन्दी– शत, अयुत और प्रयुत शब्द पुंल्लिङ्ग तथा नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

१४६/३१. लक्षाकोटी स्त्रियाम् ।

व्याख्या– लक्षा-कोटिशब्दौ स्त्रियां (स्त्रीलिङ्गे) स्तः (भवतः) । तद्यथा- इयं लक्षा— शतसहस्रात्मिका, कोटिः-कोटी— कुट् + इञ्, कोटि + ङीष्, 'भूमिनिहितैककोटिकार्मुकम्' (रघु०-११।८१) । लक्षशब्दस्य क्लीबत्वमपि विप्रतिषेधे परं कार्यमिति परिभाषया तथात्वम्; अत एव वा लक्षा नियुतञ्च तत्— इत्यमरः ।

हिन्दी– लक्षा और कोटि— ये दोनों शब्द स्त्रीलिङ्ग में होते हैं ।

१४७/३२. शङ्कुः पुंसि । कलिकातासंस्करणे नैतत्सूत्रम् ।

व्याख्या– शङ्कुशब्दः पुंल्लिङ्गे भवति, संख्यावाचकः कीलवाचको वा । संख्यायां शङ्कुः 'नील'संख्यावाचकः । यथा- अयं शङ्कुः— शङ्क् + उण् ।

हिन्दी– शङ्कु शब्द चाहे संख्यावाचक हो या कीलवाचक, वह पुंल्लिङ्ग में होता है ।

३३. सहस्रः क्वचित् । कलिकातासंस्करणे क्वचित् स्थाने पुंसि च पाठः ।

व्याख्या– सहस्रशब्दः क्वचित् पुंसि भवति चकारात् इति पक्षे नपुंसकलिङ्गोऽपि भवति । क्वचिदित्यनेन संख्यावाचके सहस्रशब्दे ग्राह्यम् । यथा— अयं सहस्रः-इदं

सहस्रम् — समानं हसति- हस् + र । क्लीबत्वे प्राप्ते पक्षे पुंस्त्वार्थं सूत्रम् ।

हिन्दी– सहस्र शब्द (संख्यावाचक) पुंल्लिङ्ग तथा नपुंसक लिङ्ग (दोनों में) होता है ।

१४८/३४. मन् द्व्यच्कोऽकर्त्तरि । बहुव्रीहिः नञ्तत्पुरुषश्च ।

व्याख्या– कर्तृभिन्नार्थकमन्-प्रत्ययान्तः द्व्यच्कः चेत् (शब्दः) क्लीबे (नपुंसकलिङ्गे) स्यात् । यथा— कर्म, वर्म, शर्म, नर्म । कर्म— कृ + मनिन्, 'सम्प्रति विषवैद्यानां कर्म' (माल०-४), वर्म— आवृणोति अङ्गम्- वृ + मनिन्, 'स्वहृदयमर्मणि वर्म करोति' (गीत०-४), शर्म— पुंस्त्वेऽपि भवति- विष्णुशर्मा) नपुंसकलिङ्गः । 'त्यजन्त्यसून् शर्म च मानिनो' (नै० १।५०) । द्व्यच्कः किम् ? अणोर्भावः अणिमा, एवं लघिमा । नान्तत्वेन पुंस्त्वम्, अकर्त्तरि किम् ? ददातीति दामा ।

हिन्दी– कर्तृभिन्नार्थक मन् प्रत्ययान्त दो अच् (स्वर) वाला शब्द नपुंसक लिङ्ग में होता है ।

१४९/३५. ब्रह्मन्पुंसि च । कलिकातासंस्करणे ब्रह्म पुंसि चेति पाठः ।

व्याख्या– ब्रह्मन् शब्दः पुंसि चकारात् क्लीबे (नपुंसके) च स्यात् । व्यवस्थित-विभाषेयम् । वेदे सत्ये तपसि परात्मनि च क्लीबम्, चतुर्मुखे पुमानिति ब्रह्मा । ब्रह्मन्— बृंह् + मनिन्, नकारस्याकारे ऋतोरत्वम्, 'समीभूता दृष्टिस्त्रिभुवनमपि ब्रह्म मनुते' (भर्तृ०-३।८४) ।

हिन्दी– ब्रह्मन् शब्द पुंल्लिङ्ग तथा नपुंसक लिङ्ग दोनों में होता है । यहाँ व्यवस्थित विभाषा के अनुसार वेद, सत्य, तपस्या और परमात्मा में नपुंसक तथा ब्रह्मा में पुंल्लिङ्ग होता है ।

१५०/३६. नामरोमणी नपुंसके । इतरेतरद्वन्द्वसमासोऽत्र ।

व्याख्या– मनन्तौ नामन्, रोमन् एते क्लीबे (नपुंसके) भवतः । यथा– इदं नाम— म्नायते अभ्यस्यते नभ्यते अभिधीयते अर्थोऽनेन वा म्ना + मनिन् नि० साधुः । 'किं नु नामैतदस्याः' (मुद्रा०-१), इदं रोम— रु + मनिन् ।

हिन्दी– मनन्त (मन् है अन्त में जिसके) नामन् और रोमन् शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं । जैसे— नाम और रोम ।

१५१/३७. असन्तो द्व्यच्कः । असन्तः द्वि अच् कः— बहुव्रीहिसमासः ।

व्याख्या– अकर्त्तरीत्यनुवर्तते । अकर्त्त्वर्थकास्-प्रत्ययान्तः (असन्तः) द्व्यच्कश्चेत् क्लीबे स्यात् । यथा– इदं यशः— अश् स्तुतौ असुन् धातोर्युट् च, 'यशस्तु रक्ष्यं परतो यशोधनैः' (रघु०-३।४८) । इदं तपः— तप् + असुन्, 'तपः किलेदं तदवाप्तिसाधनम्' (कु०-५।६४) । अकर्त्तरीत्यनुवृत्तेर्नेह— वेधाः । द्व्यच्कः किम् ? पुरोधाः, चन्द्रमाः ।

हिन्दी– अस्-प्रत्ययान्त दो अच् (स्वर) वाले शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

१५२/३८. अप्सराः स्त्रियाम् । नित्यं बहुवचनान्तः ।

व्याख्या– अप्सराः शब्दः स्त्रियां (स्त्रीलिङ्गे) भवति । यथा– इमाः अप्सरसः— अद्भ्यः सरन्ति उद्गच्छन्ति— अप् + सृ + असुन्, 'अप्सु निर्मथनादेव रसात्तस्माद्वरस्त्रियः उत्पेतुर्मनुजश्रेष्ठ तस्मादप्सरसोऽभवत्' (रामा०) ।

हिन्दी– अप्सरा या अप्सरस् शब्द नित्य बहुवचनान्त तथा स्त्रीलिङ्ग में होता है ।

१५३/३९. त्रान्तः । त्र अन्तो यस्य स त्रान्तः— बहुव्रीहिसमासः ।

व्याख्या– रोपधत्वेन पुंस्त्वे प्राप्ते तदपवादार्थं सूत्रम् । त्रप्रत्ययान्तः क्लीबे स्यात् । इदं पत्रम्, छत्रम्, कलत्रम्, गोत्रम् । गोत्राशब्दस्य भूमिपर्यायतया स्त्रीत्वमेव, गोत्रशब्दस्य तु गिरिपर्यायतया पुंस्त्वमेव, नेत्रशब्दस्य विशेषविधानात् पुं-नपुंसकता ।

हिन्दी– रोपध होने से पुंस्त्व प्राप्त होने पर यह सूत्र प्रवर्तित है । त्र-प्रत्ययान्त शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं । जैसे— पत्र, छत्र, कलत्र, गोत्र आदि ।

१५४/४०. यात्रामात्राभस्त्रादंष्ट्रावस्त्राः स्त्रियामेव । इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– यात्रा-मात्रा-भस्त्रा-दंष्ट्रा-वस्त्रा— एते शब्दाः स्त्रियां स्युः । त्रान्तत्वेन क्लीबताप्राप्तौ तदपवादार्थं सूत्रम् । दंश्यतेऽनया दंशेः ट्रन्, तस्य षित्वेऽपि न ङीष् सूत्रे दष्ट्रेति निर्देशात् । इयं यात्रा— या + ष्ट्रन् + टाप् ।

हिन्दी– उपर्युक्त यात्रा, मात्रा, भस्त्रा, दंष्ट्रा और वस्त्रा— ये शब्द स्त्रीलिङ्ग में होते हैं ।

१५५/४१. भृत्रामित्रच्छात्रपुत्रमन्त्रवृत्रमेढ्रोष्ट्राः पुंसि । भृत्रा....मेढ्रोष्ट्राः— इतरेतर-द्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– भृत्र-अमित्र-छात्र-पुत्र-मन्त्र-वृत्र-मेढ्र-उष्ट्र— एते शब्दाः त्रान्ताः पुंल्लिङ्गे भवन्ति । कलिकातासंस्करणे 'मेढ्र-उष्ट्र'स्थाने 'मैत्र'शब्दस्य निवेशः । अत्र त्रान्तत्वेन क्लीबत्वे प्राप्ते तदपवादार्थं सूत्रमिदम् । अयं भृत्रः । न मित्रम् अमित्रः, मित्रशब्दस्य

त्रान्ततया क्लीबत्वेन नञ्तत्पुरुषे परवल्लिङ्गतया तल्लिङ्गत्वापत्तौ ग्रहणसामर्थ्यात् पुंस्त्वम्। 'तस्य मित्राण्यमित्रास्ते' 'स्यातामममित्रौ मित्रे च' इति च माघः (२।१०१, ३६)। मित्रशब्दस्य सूर्यार्थे पुंस्त्वमेव भवति।

हिन्दी– उपर्युक्त भृत्र, अमित्र, छात्र, पुत्र, मन्त्र, वृत्र, मेढ्र, उष्ट्र, मैत्र आदि शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं।

१५६/४२. पत्रपात्रपवित्रसूत्रच्छत्राः पुंसि च। पत्र...च्छत्राः— इतरेतरद्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– त्रान्तत्वेन क्लीबत्वे प्राप्ते पक्षे पुंस्त्वार्थं वचनम्। तस्मात् पत्र-पात्र-पवित्र-छत्र— एते शब्दाः नपुंसके पुंसि च भवन्ति। पत्रं-पत्रः— पत् + ष्ट्रन्, 'नीलोत्पलपत्रधारया' (श०-१।१७), पात्रम्-पात्रः— पा + ष्ट्रन्, 'पात्रे निधायार्घ्यम्' (रघु०-५।२), पवित्रम्-पवित्रः— पू + इत्र, 'त्रीणि श्राद्धे पवित्राणि दौहित्रः कुतपस्तिलाः' (मनु०-३।२३६), 'अपवित्रः पवित्रो वा' इत्यादि।

हिन्दी– पत्र, पात्र, पवित्र, सूत्र, छत्र— ये शब्द नपुंसक तथा पुंल्लिङ्ग में होते हैं।

१५७/४३. बलकुसुमशुल्बपत्तनरणाभिधानानि। बल....धानानि— द्वन्द्वगर्भस्तत्पुरुषः।

व्याख्या– बल-कुसुम-शुल्ब-पत्तन-रण— एतेषां शब्दानां पर्य्यायशब्दाः क्लीबे स्युः। तद्यथा— बलं सह वीर्य्यम्, सामर्थ्यम्। कुसुमं पुष्पम्। सुमनःशब्दस्य विशेषाभिधानात् स्त्रीत्वम्। रणं युद्धम् आयोधनम्। युत् समिधोर्विशेषाभिधानात् स्त्रीत्वम्।

हिन्दी– बल, कुसुम, शुल्ब, पत्तन और रण— इन शब्दों के पर्यायवाची भी नपुंसक लिङ्ग में होते हैं।

१५८/४४. पद्मकमलोत्पलानि पुंसि च। इतरेतरद्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– पद्म-कमल-उत्पल— एते शब्दाः क्लीबे पुंसि च भवन्ति। यथा— पद्मं पद्मः। 'भाति पद्मः सरोवरे' इत्यादावालङ्कारिकैस्तु अप्रयुक्तदोषोदाहरणतयाऽस्य पुंस्त्वमनुशासनसिद्धमित्यभ्युपगतम्। अत एव अर्द्धर्चादिसूत्रे पद्मं नपुंसकमेवेति। पद्मम्— पद् + मन्, 'पद्मपत्र-स्थितं तोयं धत्ते मुक्ताफलश्रियम्'। कमलम्— कं जलमलति भूषयति, कम् + अल् + अच्, उत्पलम्— उद् + पल् + अच्, 'नवावतारं कमलादिवोत्पलम्' (रघु०-३।३६)।

हिन्दी– पद्म, कमल और उत्पल शब्द नपुंसक तथा पुंल्लिङ्ग में होते हैं।

१५९/४५. आहवसंग्रामौ पुंसि । इतरेतरद्वन्द्वसमासोऽत्र ।

व्याख्या– रणपर्य्यायतया क्लीबत्वे प्राप्ते तद्बाधनार्थमिदं सूत्रं प्रवर्त्तितम् । आहव-संग्राम शब्दौ पुंसि भवतः । आहवः— आङ् + ह्वे + अप्, संग्रामः— संग्राम् + अच् ।

हिन्दी– आहव और संग्राम शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

१६०/४६. आजिः स्त्रियामेव । आजिः स्त्रियाम् एवेत्यन्वयः ।

व्याख्या– रणवाचित्वेन प्राप्तक्लीबताबाधनार्थं सूत्रम् । आजिशब्दः स्त्रियामेव भवति । यथा– इयम् आजिः, पक्षे ङीप्– आजी— अजन्त्यस्याम्, अज् + इण्, 'ते तु यावन्त एवाजौ तावान् स ददर्श परैः' (रघु०-१२।४५) ।

हिन्दी– आजि शब्द को रणवाची होने से नपुंसकत्व प्राप्त था; परन्तु इस सूत्र के बाधक होने से वह स्त्रीलिङ्ग में होगा ।

१६१/४७. फलजातिः । तत्पुरुषसमासः ।

व्याख्या– फलप्रधानवृक्षजातिवाची शब्दः क्लीबे स्यात् । आमलक्याः फलम्— मयट्, 'फले लुक्' (पा० सू०-४।३।१६३) इति लुकि, 'लुक्तद्धितलुकि' (१।२।४९) इति ङीषो लुकि क्लीबत्वम् । आमलकम्, आम्रम्— अम् + रन् दीर्घः ।

हिन्दी– फलप्रधान वृक्षजातिवाची शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं, जैसे— आम-लकम्, आम्रम् ।

१६२/४८. वृक्षजातिः स्त्रियामेव । वृक्षजातिः स्त्रियाम् एव— षष्ठीतत्पुरुषः ।

व्याख्या– क्वचिदित्याहार्यम् । हरीतक्यादिप्रसववाचकशब्दः स्त्रियामेव भवति । हरीतक्याः फलम् 'हरीतक्यादिभ्यश्च' (पा०-४।३।१६७) इति फलार्थकप्रत्ययस्य लुपि स्त्रीत्वम् । 'हरीतक्यादिषु व्यक्तिः' इति वार्त्तिके हरीतक्यादीनां प्रकृतिलिङ्गोक्तेः । 'वृक्षजातिरि'त्युक्तेः फलप्राधान्याभावेऽपि पुष्पप्रधानवाचिनः पुष्पपरत्वेऽपि स्त्रीत्वम् । मालती, मल्लिका ।

हिन्दी– वृक्ष जातिविशेष हरीतकी आदि शब्द स्त्रीलिङ्ग में ही होते हैं, जैसे— हरीतकी, पुष्पविशेष मालती, मल्लिका आदि ।

१६३/४९. वियज्जगत्सकृच्छकन्पृषच्छकृद्यकृदुदश्वितः । इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– वियत्-जगत्-सकृत्-शकत्-(कृषत्)-पृषत्-शकृत्-यकृत्-उदश्वित्— एते शब्दाः क्लीबे (नपुंसके) स्युरिति— भवन्तीत्यर्थः । यथा– वियत्— वियच्छति

न विरमति, वि + यम् + क्विप्, मलोपः, तुकागमः, 'पश्योदग्रप्लुतत्वाद्वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति' (शा०-१।७)। जगत्— गम् + क्विप्, नि० द्वित्वं तुगागमः, 'इदं विश्वं जगत्सर्वं' (महा०), सकृत्— एक् + सुच् सकृत् आदेशः, सुचो लोपः, 'सकृदंशो निपतति' (मनु०-९।४७), पृषत्— पृष् + अति, शकृत्— शक् + ऋतन्, 'शकृत् करिः वत्सः', यकृत्— यं संयमं करोति, कृ + क्विप् तुक च, उदश्वित् = तक्रम्।

हिन्दी– वियत्, जगत्, सकृत्, शकत् (कृषत्), पृषत्, शकृत्, यकृत् और उदश्वित् शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं।

१६४/५०. नवनीतावनतानृतामृतनिमित्तवित्तचित्तपित्तव्रतरजतवृत्तपलितानि। इतरेद्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– नवनीत-अवनत-('अवत'– कलिकातासंस्करणे)-अनृत-अमृत-निमित्त-वित्त-चित्त-पित्त-व्रत-रजत-वृत्त-पलितश्चैते शब्दाः क्लीबे (नपुंसके) स्युरिति। यथा– इदं नवनीतम्— नु + अप् + क्त, 'अहो नवनीतकल्पहृदयः आर्यपुत्रः' (मालविका०-३)। अवनतम्— अव + नम् + क्त, 'अद्यप्रभृत्यवनताङ्गि तवास्मि दासः' (कुमार०-५)। अनृतम्— न ऋतमनृतम्, 'प्रियञ्च नानृतं ब्रूयात्' (मनु०-४।५), अमृतम्— न मृतम्– न० त०, 'स श्रिये चामृताय च' (अमर०), निमित्तम्— नि + मिद् + क्त, 'निमित्तनैमित्तकयोरयं क्रमः' (शा०-७।३०), वित्तम्— विद् + क्त, चित्तम्—चित् + क्त, पित्तम्— अपि + दो + क्त, अपेः अकारलोपः, 'पित्तं यदि शर्करया शाम्यति कोऽर्थः पटोलेन' (पञ्च०-१।३७८)।

हिन्दी– नवनीत, अवनत, अनृत, अमृत, निमित्त, वित्त, चित्त, पित्त आदि शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं।

१६५/५१. श्राद्धकुलिशदैवपीठकुण्डाङ्काङ्गदधिसक्थ्यक्ष्यस्स्थ्यास्पदाकाश-कण्वबीजानि। श्राद्धकुलिश....कण्वबीजानि— इतरेतरद्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– श्राद्ध-कुलिश-दैव-पीठ-कुण्ड-अङ्क-अङ्ग-दधि-(क्वचित् भाण्डोऽपि)-सक्थि-अक्षि-अस्थि-(आस्य)-आस्पद-आकाश-कण्व-बीज— एते शब्दाः क्लीबे स्युरिति तदर्थः। इदं श्राद्धम्— श्रद्धाहेतुत्वेनास्त्यस्य अण्, 'श्रद्धया दीयते यस्मात्तस्माच्छ्राद्धं निगद्यते'। कुलिशम्— कुलि + शी + ड, पक्षे– पृषोदरादित्वाद्दीर्घः, 'वृत्रस्य हन्तुः कुलिशं कुण्ठिता श्रीव लक्ष्यते' (कु०-२।२०)। देवम्— देव + अण्, 'दैवमविद्वांसः प्रमाणयति' (मुद्रा०-३)। कुण्डम्— कुण् + ड, अग्निकुण्डम्। अङ्कम्— अङ्क +

अच्, 'अङ्काद्ययावङ्कमुदीरिताशी' (कु०-७।५) । अङ्गम्— अङ्ग + अच्, 'शेषाङ्गनिर्माणविधौ विधातुः' (कु०-१।३३) । दधि— दध + इन्, 'क्षीरं दधिभावेन परिणमते' (शारी०) । एवमन्येऽपि ।

हिन्दी– श्राद्ध, कुलिश, दैव, पीठ, कुण्ड, अङ्क, अङ्ग, दधि (भाण्ड), सक्थि, अक्षि, अस्थि (आस्य), आस्पद, आकाश, कण्व और बीज— ये शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

१६६/५२. दैवं पुंसि च ।

व्याख्या– दैवशब्दः पुंल्लिङ्गे, चकारात् नपुंसकेऽपि भवति । यथा– अयं दैवः, इदं दैवम्— देव + अण्, 'यज्ञस्य ऋत्विजे दैवः' (याज्ञ०-१।५९), 'दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्त्या' (पञ्च०-१।३६१) । पुंस्त्वार्थं प्रवर्त्तितमिदं सूत्रम् ।

हिन्दी– दैव शब्द पुंल्लिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग दोनों में होते हैं । जैसे— दैवः, दैवम् ।

१६७/५३. धान्याज्यसस्यरूप्यपण्यवर्ण्यधिष्ण्यहव्यकव्यकाव्यसत्यापत्य-मूल्यशिक्यकुड्यमद्यहर्म्यतूर्यसैन्यानि । धान्याज्य....सैन्यानि— इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– योपधत्वेन पुंस्त्वे प्राप्तेऽपवादार्थं सूत्रमिदं प्रवृत्तम् । धान्य-आज्य-सस्य-रूप्य-(क्वचित्कुप्य)-पण्य-वर्ण्य-धिष्ण्य-हव्य-कव्य-काव्य-सत्य-अपत्य-मूल्य-शिक्य-कुड्य-मद्य-हर्म्य-तूर्य-सैन्यञ्च— एते शब्दाः क्लीबे (नपुंसके) भवन्तीति । यथा– इदं धान्यम्— धान् + यत्, आज्यम्— आज्यते- आ + अञ्ज् + क्यप्, 'मन्त्रोऽहमेवाज्यम्' (शा०-१), 'सर्पिर्विलीनमाज्यं स्यात् घनीभूतं घृतं भवेत्' । सस्यम्— सस् + यत्, 'एतानि सस्यैः पूर्णे जठरपिठरे प्राणिनां सम्भवन्ति' (पञ्च०-५।९७), शस्यमपि । रूप्यम्— रूप् + यत्, कुप्यम्— गुप् + क्यप्, पण्यम्— पण् + यत्, 'पण्यानां गान्धिकं पण्यम्' (पञ्च०-१।११) । वर्ण्यम्— वर्ण + ण्यत्, धिष्ण्यम्— धृष् + ण्य, निपातनाद् ऋकारस्य इकारः, 'न भौमान्येव धिष्ण्यानि हित्वा ज्योतिर्मयान्यपि' (रघु०-१५।३९) ।

हिन्दी– यहाँ सभी शब्दों में 'य' उपधा प्राप्त होने से पुंल्लिङ्ग के अपवादस्वरूप यह प्रवृत्त है । धान्य, आज्य, सस्य, रूप्य, कुप्य, पर्ण्य, वर्ण्य आदि शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

१६८/५४. द्वन्द्वबर्हदुःखबडिशपिच्छविम्बकुटुम्बकवचकबरवृन्दारकाणि । इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– द्वन्द्व-बर्ह-दुःख-बडिश-पिच्छ-विम्ब-(क्वचिद्विश्व)-कुटुम्ब-कवच-कवर-वृन्दारक— एते शब्दाः नपुंसकलिङ्गे भवन्ति । यथा– इदं द्वन्द्वम्— द्वौ द्वौ सहाभियुक्तौ– द्विशब्दस्य द्वित्वम्, पूर्वपदस्य अम्भावः उत्तरपदस्य नपुंसकत्वम्- नि० । 'न चेदिदं द्वन्द्वमयोजयिष्यत्' (कु०-७।६६) । बर्हम्— बर्ह + अच्, दुःखम्— दुष्टानि खानि यस्मिन्, दुष्टं खनति– खन् + ड - दुःख् + अच्, 'सिंहानां निनदा दुःखाः श्रोतुं दुःखमतो वनम्' (रामा०) । बडिशम्— मत्स्यवेधी कण्टकम् । पिच्छम्— पिच्छ् + अच्, मयूरस्य पुच्छम् (शिशु०-४।५०) । बिम्बम्— बी + वन्, 'बदनेन निर्जितं तव नीलीयते चन्द्रबिम्बमम्बुधरे' (सुभा०) । विश्वम्— विश् + व, 'इदं विश्वं पाल्यम्' (उत्तर०-३।३०) । कुटुम्बम्-कुटुम्बकम्— कुटुम्ब् + अच्, कुटुम्ब + कन्, 'उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्' (हितो०-१।७०), कवचम्— कु + अच्, रक्षाकवचम् ।

हिन्दी– द्वन्द्व, बर्ह, दुःख, बडिश, पिच्छ, बिम्ब (विश्व), कुटुम्ब, कवच, कबर, और वृन्दारक— ये सभी शब्द नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

१६९/५५. अक्षमिन्द्रिये । अक्षम् इन्द्रिये ।

व्याख्या– इन्द्रियार्थे अक्षशब्दः नपुंसकलिङ्गे भवति । यथा– इदमक्षम्— अक्ष् + अच्, अश् + सः वा । अक्षम् इन्द्रिये किम् ? रथाङ्गे वृत्तभेदादौ मा भूत् ।

अत्र नपुंसकावशिष्टमुच्यते; तत्र भावे ल्युडन्तः इत्युपलक्षणकृत्यादीनाम्; तेन भावार्थककृत्या- घन्ताः नपुंसके स्युः । भवितव्यम्, भवनीयम्, भव्यं, भाव्यं कृत्यं ब्रह्मभूयम् । भावे इत्युक्तेः कर्मणि कर्त्तरि च त्रिलिङ्गा एव, कर्मणि— चेतव्यः, चयनीयः, चेय इत्यादि । कर्त्तरि— गेयः भव्य इत्यादि । एवमन्येऽपि शब्दाः ऊह्याः ।

हिन्दी– 'इन्द्रिय' अर्थ का वाचक अक्ष शब्द नपुंसक लिङ्ग में होता है; जैसे— इदमक्षम् । इस सूत्र में 'इन्द्रिय में' ऐसा कहने का तात्पर्य यह है कि रथाङ्ग (चक्का), वृत्त आदि में नपुंसक लिङ्ग न हो ।

इति नपुंसकलिङ्गप्रकरणम्

***

अथ स्त्री-पुँल्लिङ्गप्रकरणम्

१७०/१. स्त्रीपुंसयोः ।

व्याख्या– स्त्री च पुमांश्चेति विग्रहे स्त्रीपुंमासौ, तयोः स्त्रीपुंसयोः— अत्र इतरेतरद्वन्द्व-समासः । अस्याधिकरोऽयम्। अतः परं वक्ष्यमाणाः स्त्रीपुंसकलिङ्गाः स्युः शब्दा इति । अर्थात् 'अपत्यार्थस्तद्धिते' इति सूत्रपर्यन्तं ये शब्दाः सन्ति, तेषु 'स्त्रीपुंसयोरि'ति सूत्र-स्याधिकारः प्रवर्त्तते ।

हिन्दी– 'स्त्री-पुंसयोः' यहाँ इतरेतरद्वन्द्व समास है । यह अधिकारसूत्र के रूप में प्रवर्त्तित है । यहाँ से लेकर 'अपत्यार्थस्तद्धिते' इस सूत्रपर्यन्त जो शब्द आयेंगे, वे सभी शब्द स्त्रीलिङ्ग तथा पुंल्लिङ्ग दोनों में होंगे । उदाहरण— आगे द्रष्टव्य ।

१७१/२. गोमणियष्टिमुष्टिपाटलिबस्तिशाल्मलित्रुटिमसिमरीचयः । इतरेतरद्वन्द्व-समासः ।

व्याख्या– गो-मणि-यष्टि-मुष्टि-पाटलि-बस्ति-शाल्मलि-त्रुटि-मसि-मरीचि— एते शब्दाः पुंसि स्त्रियां च स्युरिति । तत्र गोशब्दस्य पशुविशेषवाचित्वे स्त्रीपुरुषलिङ्गता, स्वर्ग-बाण-किरण-नेत्रवाचित्वे पुंल्लिङ्गता । भूमि-दिग्वाग्वाचित्वे स्त्रियामिति व्यवहारः । तद्यथा– इयं गौः, अयं गौः— गच्छत्यनेन गम् करणे डो तारा०; 'जुगोप गोरूपधरामि-वोर्वीम्' (रघु०-२।३), 'क्षीरिण्यः सन्तु गावः' (मृच्छ०-१०।६०) । इयमयं वा मणिः, स्त्रीत्वपक्षे वा ङीप्— मणी; एवं सर्वत्र । मण् + इन्, स्त्रीत्वपक्षे ङीप्; 'मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः' (रघु०-१।४) ।

हिन्दी– गो, मणि, यष्टि, मुष्टि, पाटलि, बस्ति, शाल्मलि, त्रुटि, मसि और मरीचि शब्द पुंल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग में होते हैं ।

१७२/३. मृत्युसीधुकर्कन्धुकिष्कुकण्डुरेणवः । मृत्यु....रेणवः— इत्यत्रेतरेतर-द्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– मृत्यु-सीधु-कर्कन्धु-किष्कु-कण्डु-रेणु— एते शब्दाः स्त्रियां पुंसि च स्युः । कलिकातासंस्करणे 'मृत्यु'स्थाने 'मन्यु', 'किष्कु'स्थाने 'सिन्धु' इति विद्येते । यथा— इय-मयं वा मन्युः सी(शी)धुः, कर्कन्धुः; अप्राणिजातित्वात् स्त्रीप्रत्यये ऊङ्— कर्कन्धू ।

हिन्दी– मृत्यु (मन्यु), सीधु, कर्कन्धु, किष्कु (सिन्धु), कण्डु और रेणु शब्द स्त्रीलिङ्ग और पुंल्लिङ्ग में होते हैं ।

१७३/४. गुणवचनमुकारान्तं नपुंसकं च । गुणवचनम् उकारान्तं— बहुव्रीहि-समासः, नपुंसकं च ।

व्याख्या– गुणवचना उकारान्ताः शब्दाः नपुंसके चकारात् स्त्रीपुंसयोः स्युः । तेन त्रिलिङ्गाः । यथा— पटुः, पट्वी, पटु— पटु + णिच् + उ, पटादेशः, वाचि पटुः । मृदुः, मृद्वी, मृदु— मृद् + कु । उदन्तत्वविशेषणात्तद्भिन्नानां गुणवचनानां गुणपरत्वे पुंस्त्वम्, गुणिपरत्वे त्रिलिङ्गता । एतत्सूत्रं परित्यक्तुं शक्यते, गुणवचनञ्चेति त्रिलिङ्गसूत्रेण बाधात् ।

हिन्दी– गुणवाची उकारान्त शब्द तीनों लिङ्गों में होते हैं ।

१७४/५. अपत्यार्थस्तद्धिते । तत्पुरुषसमासः ।

व्याख्या– अपत्यस्यार्थे विहिता ये तद्धितास्तदन्ताः स्त्रीपुंसयोः स्युः । यथा— औपगवः-औपगवी । दाक्षः-दाक्षी— दक्ष + इञ् + ङीष् । गार्ग्यः-गार्गी, वैदः-वैदी ।

हिन्दी– अपत्य अर्थ में विहित जो तद्धितान्त शब्द, वे स्त्रीलिङ्ग तथा पुंल्लिङ्ग दोनों में होते हैं ।

इति स्त्री-पुंसलिङ्गानुशासनम्

***

अथ पुं-नपुंसकलिङ्गप्रकरणम्

१७५/१. पुंनपुंसकयोः । पुमांश्च नपुंसकञ्चेति पुंनपुंसके, तयोः— इतरेतर-द्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– पुंनपुंसकयोः अधिकारोऽयम् । इतः परं वक्ष्यमाणाः शब्दाः पुं-नपुं-सकलिङ्गाः स्युरिति । अर्थात् 'गृहमेह०' सूत्रपर्यन्तमस्याधिकार इति ।

हिन्दी– 'पुं-नपुंसकयोः' यह अधिकारवाचक है । यहाँ से लेकर अग्रिम 'गृहमेह०' सूत्रपर्यन्त सभी शब्द पुंल्लिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग में होते हैं । उदाहरण अग्रिम सूत्रों के साथ निर्दिष्ट हैं ।

१७६/२. घृतभूतमुस्तक्ष्वेलितैरावतपुस्तबुस्तलोहिताः । घृत....लोहिताः— इतरेतर-द्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– घृत-भूत-मुस्त-क्ष्वेलित-ऐरावत-पुस्त-(पुस्तक)-बुस्त-लोहित— एते शब्दाः पुं-नपुंसकयोः स्युः । इदं घृतं-अयं घृतः— घृ + क्त, भूतम्-भूतः— भू + क्त, मुस्तम्-मुस्तः— मुस्त + क, स्त्रियां टाप्; क्ष्वेलितम्-क्ष्वेलितः, ऐरावतम्-ऐरावतः— इरा आपः, तद्वान् इरावान् समुद्रः, तस्मादुत्पन्नः (अण्) । पुस्तं-पुस्तः— पुस्त + घञ्, पुस्त + कन् ङीप् वा ।

विशेषः– भूतशब्दस्य अतीते भवनकर्त्तरि च त्रिलिङ्गता, पिशाचे जन्तुमात्रे च पुंसि । पृथिव्यादिषु पञ्चसु क्लीबता, युक्ते यथार्थे नपुंसकतेति व्यवस्था । तथा च भूतशब्दस्य त्रिलिङ्गताविषयभिन्ने एवास्य सूत्रस्य विषयः । लोहितम्-लोहितः— रुह + इतन्, रस्य लः ।

हिन्दी– घृत, भूत, मुस्त, क्ष्वेलित, ऐरावत, पुस्त, बुस्त और लोहित— ये सभी शब्द पुंल्लिङ्ग एवं नपुंसक लिङ्ग में होते हैं ।

१७७/३. शृङ्गार्धनिदाघोद्यमशल्यदृढाः । शृङ्गार्ध....दृढाः— इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– शृङ्ग-अर्ध-निदाघ-उद्यम-शल्य-दृढ— एते शब्दाः पुं-नपुंसकयोः स्युः । यथा– अयं शृङ्गः-इदं शृङ्गम्— शृ + गन्, पृषोदरादित्वात् मुम् ह्रस्वश्च; 'गाहन्तां महिषा निपानसलिलं शृङ्गैर्मुहुस्ताडितम्' (शा०-२।६) । अधः-अर्धम्— ऋध् + णिच् + अच्, 'सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः' । निदाघः-

निदाघम्— नितरां दह्यते अत्र– नि + दह् + घञ्, 'निदाघमिहिरज्वालाशतैः' (भामि०-१।१६)। उद्यमः-उद्यमम्— उद् + यम् + घञ्, 'निशम्य चैनां तपसे कृतोद्यमाम्' (कु०-५।३)।

हिन्दी– शृङ्ग, अर्ध, निदाघ, उद्यम, शल्य और दृढ— ये शब्द पुंल्लिङ्ग एवं नपुंसक लिङ्ग में होते हैं।

१७८/४. व्रजकुञ्जकुथकूर्चप्रस्थदर्पार्भार्धर्चदर्भपुच्छाः। व्रज....पुच्छाः— इतरेतरद्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– व्रज-कुञ्ज-कुथ-कूर्च-प्रस्थ-दर्प-अर्भ-अर्धर्च-दर्भ-पुच्छ— एते शब्दाः पुं-नपुंसकलिङ्गा स्युः। यथा– अयं व्रजः-इदं व्रजम्— व्रज् + क, 'नेत्रव्रजाः पौरजनस्य तस्मिन् विहाय सर्वान्नृपतीन् निपेतुः' (रघु०-६।७)। कुञ्जः-कुञ्जम्— कु + जन् + ड, पृषोदरादित्वात् साधुः। 'चल सखि कुञ्जं सतिमिरपुञ्जं शीलय नीलनिचोलम्' (गीत०-५) इत्यादयः।

विशेषः– 'अर्द्धर्चाः पुंसि च' (२।४।३१) इति सूत्रे अर्द्धर्चादीनां प्राप्तत्वेऽपि पुनरर्द्धर्चग्रहणं तद्गणपठितानां केषाञ्चिद्वैदिकविषयत्वसूचनाय; अत एव इह घृतादीनां केषाञ्चित् पाठो लौकिकप्रयोगेऽपि पुं-नपुंसकतार्थः। अर्द्धर्चाः— गोमय-कषाय-कार्षापण-कुतप-कुणप-कपाट-शङ्ख-गूथ-यूथादयः सन्ति।

हिन्दी– व्रज, कुञ्ज, कुथ, कूर्च, प्रस्थ, दर्प, अर्भ, अर्धर्च, दर्भ और पुच्छ— ये शब्द पुंल्लिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग दोनों में होते हैं।

१७९/५. कबन्धौषधायुधान्ताः। इतरेतरद्वन्द्वसमासः।

व्याख्या– कबन्ध-औषध-आयुध-अन्त— एते शब्दाः पुं-नपुंसकयोर्लिङ्गयोर्भवन्ति। तद्यथा– अयं कबन्धः-इदं कबन्धम्— कं = मुखं बध्नाति, क + बन्ध् + अण्, 'नृत्यत् कबन्धं समरे ददर्श' (रघु०-७।५१), औषधः-औषधम्— औषधि + अण्, आयुधः-आयुधम्— आ + युध् + घञ्, 'न मे त्वदन्येन विशोढमायुधम्' (रघु०-३।६३)।

हिन्दी– कबन्ध, औषध, आयुध और अन्त शब्द पुंल्लिङ्ग एवं नपुंसक लिङ्ग दोनों में होते हैं।

१८०/६. दण्डमण्डखण्डशवसैन्धवपार्श्वाकाशकुशकाशाङ्कुशकुलिशाः। इतरेद्वन्द्वसमासः। कलिकातासंस्करणे तु 'दण्डमण्डखण्डशवसैन्धवपार्श्वकाशाङ्कुराकाशकुशकुलिशाः' इति पाठः।

व्याख्या– दण्ड-मण्ड-खण्ड-शव-सैन्धव-पार्श्व-आकाश-कुश-काश-अङ्कुश-कुलिश— एते शब्दाः पुं-नपुंसकयोः स्युः । अयं दण्डः-इदम् दण्डम्— दण्ड् + अच्, पततु शिरस्य-काण्डयमदण्ड इवैष भुजः' (मा०-५।३१), मण्डः-मण्डम्— मण्ड् + अच्, मन् + ड, तस्य नेत्वं वा; 'नीवारौदनमण्डमुष्णमधुरम्' (उत्तर०-४।१), खण्डः-खण्डम्— खण्ड + घञ्, 'दिवः कान्तिमत्खण्डमेकम्' (मेघ०-३०) इत्यादि ।

विशेषः– 'कुशो रामसुते दर्भे योक्त्रे द्वीपे कुशस्थले' इत्युक्तार्थेषु पुमान् शलाकावाची तु स्त्रियां जानपदादित्वात् (४।१।४२) अयोविकारे ङीष्-विधानात् कुशी । अयोविकारभिन्ने तु टाप्— कुशा । अत एव 'अतः कृकमी'त्यादि (३।३।४८) सूत्रे कुशाकर्णीति, शारीरकसूत्रे च हानौ तूपायनशब्दशेषत्वात् 'कुशा' शब्दः कुशाच्छन्दः इति स्त्रीत्वप्रयोगः ।

हिन्दी– दण्ड, मण्ड, खण्ड, शव, सैन्धव, पार्श्व, आकाश, कुश, काश, अङ्कुश और कुलिश— ये सभी शब्द पुंल्लिङ्ग एवं नपुंसक लिङ्ग दोनों में होते हैं ।

१८१/७. गृहमेहदेहपट्टपटहाष्टापदार्बुदककुदाश्च । इतरेतरद्वन्द्वसमासः ।

व्याख्या– गृह-मेह-देह-पट्ट-पटह-अष्टापद-अर्बुद-ककुद— एते शब्दाः पुं-नपुंसकलिङ्गयोर्भवन्ति । अयं गृहः-इदं गृहम्— ग्रह + क, 'न गृहं गृहमित्याहुः गृहिणी गृहमुच्यते' (पञ्च०-४।८१), 'इमे नो गृहाः' (मुद्रा०-१) । मेहः-मेहम्— मिह + घञ्, देहः-देहम्— दिह + घञ्, 'देहं दहन्ति दहना इव गन्धवाहाः' (भामिनी०-१।१०४), पट्टः-पट्टम्— पट् + क्त, इडभावः, 'शिलापट्टमधिशयाना' (शि०), पटहः-पटहम्— पटेन हन्यते- पट् + हन् + ड, 'पटुपटहध्वनिभिर्विनीतनिद्रः' (रघु०-९।७१), अष्टापदः-अष्टापदम्— अंश् + कनिन् तुट् च + पद, 'आवर्जिताष्टापदकुम्भतोयैः' (कु०-७।१०) । अर्बुदः-अर्बुदम्— अर्ब (र्व) + विच् - उद् + इ + ड, ककुदः-ककुदम्— कस्य देहस्य सुखस्य वा कुं भूमिं ददाति- दा + क, 'ककुदं वेदविदां तपोधनश्च' (मृच्छ०-१।५), 'इक्ष्वाकुवंश्यः ककुदं नृपाणाम्' (रघु०-६।७१) ।

हिन्दी– गृह, मेह, देह, पट्ट, पटह, अष्टापद, अर्बुद, ककुद— ये शब्द पुंल्लिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग दोनों में होते हैं । जैसे— अयं गृहः, इदं गृहम् ।

इति पुं-नपुंसकाधिकारः

***

अथावशिष्टलिङ्गप्रकरणम्

१८२/१. अविशिष्टलिङ्गम्। नञ्सम्पृक्तः कर्मधारयसमासोऽत्र। क्वचित्पुस्तके (कलिकातासंस्करणे) अवशिष्टलिङ्गमिति पाठः।

व्याख्या– (अधिकारोऽयम्) नस्ति विशिष्टं लिङ्गं तत् कार्यञ्च यस्य। इत ऊर्ध्वं वक्ष्यमाणाः शब्दाः विशिष्टलिङ्गकार्यशून्याः विशिष्टलिङ्गशून्या च, तेन त्रिलिङ्गाः स्युः।

हिन्दी– नहीं है विशिष्ट लिङ्ग और कार्य जिसका— इसके आगे कहे जाने वाले शब्द विशिष्ट लिङ्ग-कार्यशून्य होंगे और विशिष्ट लिङ्गशून्य वे शब्द त्रिलिङ्गी होंगे। यह अधिकार-प्रवर्त्तक है। उदाहरण आगे दृष्ट होंगे।

१८३/२. अव्ययम् कतियुष्मदस्मदः। कलिकातासंस्करणे 'अव्ययडतियुष्मदस्मदः' इति पाठः। इतरेतरद्वन्द्वसमासोऽत्र।

व्याख्या– अव्ययसंज्ञकाः कति-युष्मद्-अस्मद्— इत्येते शब्दाः चाविशिष्टलिङ्गाः भवन्ति। अपरत्र— चादयोऽव्ययशब्दाः डतिप्रत्ययान्ताः, युष्मदस्मच्छब्दौ च विशिष्ट-लिङ्गकार्यशून्याः स्युरिति। यथा– उच्चैः स्त्री, उच्चैः नरः, उच्चैः कुलम्— उद् + चि + डैस्, 'विपद्युच्चैः स्थेयम्' (भर्तृ०-२।२८)। तरुः— तृ + उन्, 'नवसंरोहण-शिथिलस्तरुरिव सुकरः समुद्धर्त्तुम्' (मालवि०-१।८)। लता— लत् + अच् + टाप्, 'लताभावेन परिणत-मस्या रूपम्' (विक्रम०-४), मन्दिरं— मन्द्यतेऽत्र मन्द् + किरच्। कति पुरुषाः, स्त्रियः, बलानि वा— किम् + इति। त्वं पुमान्, त्वं स्त्री, त्वं कुलम् + अहं पुमान्, स्त्री, कुलं वा (सर्व० अस्मद् शब्दस्य कर्तृकारके एकवचनम्; अह-महमिकया प्रणामलालसानाम् (का०-१४)।

हिन्दी– अव्ययसंज्ञक कति, युष्मद्, अस्मद् और डति प्रत्ययान्त शब्द अवि-शिष्ट लिङ्ग वाले अर्थात् पुंल्लिङ्ग, नपुंसक लिङ्ग एवं स्त्रीलिङ्ग— तीनों होते हैं।

१८४/३. ष्णान्ता संख्या। ष्ण अन्ता ष्णान्ता— द्वन्द्वगर्भो बहुव्रीहिसमासः।

व्याख्या– षान्त-नान्तसंख्यावाचकाः शब्दाः अवशिष्टलिङ्गकार्याः स्युः। यथा— पञ्च-षट् पुरुषाः, स्त्रियः, कुलानि वा। ष्णान्तेति विशेषणात् शिष्टाः संख्या त्रिलिङ्गाः विशिष्टलिङ्गकार्यवन्तः। एकः पुमान्, एका स्त्री, एकं कुलम्; द्वौ, द्वे, द्वे, त्रयः, तिस्रः, त्रीणि।

हिन्दी– 'ष' अन्त वाले और 'न' अन्त वाले शब्द संख्यावाचक अवशिष्ट लिङ्ग (तीनों लिङ्गों में) होते हैं ।

१८५/४. गुणवचनं च ।

व्याख्या– गुणवाचकाः शब्दाः गुणिपरत्वे त्रिलिङ्गाः स्युः । यथा— शुक्लः पटः, शुक्ला शाटी, शुक्लं वस्त्रम् । गुणपरत्वे तु यथाप्राप्तं शुक्ल इत्याद्येव, अत एव 'गुणे शुक्लादयः पुंसि गुणि लिङ्गास्तु' इत्यमरः ।

हिन्दी– गुणवाचक शब्द गुणिपरत्व में त्रिलिङ्गी होते हैं ।

१८६/५. कृत्याश्च । कृत्याः च ।

व्याख्या– 'कृत्या' इति बहुवचनं कृत्सामान्योपलक्षणम्, तच्चासति बाधके कर्त्राद्यर्थे त्रिलिङ्गाः स्युः । तथा च भावे विहिते क्तिन्नादेः स्त्रीत्वस्य, घञादेश्च पुंस्त्वस्य, विशिष्योक्तेस्तेनास्य बाधः । तत्र कर्त्तरि— गेयः, पाठकः, गायक इत्यादयः त्रिलिङ्गाः । कर्मणि— स्तोतव्य, स्तवनीयः, स्तुत्य इत्यादयः ।

हिन्दी– कृत्य-प्रत्ययान्त शब्द अविशिष्ट (तीनों लिङ्गों) में होते हैं ।

१८७/६. करणाधिकरणयोर्ल्युट् । करण-अधिकरणयोः ल्युट्— इतरेतरद्वन्द्व-समासः ।

व्याख्या– करणे अधिकरणे च विहितल्युडन्तास्त्रिलिङ्गाः स्युः । ल्युडन्तत्वेन क्लीबत्वे प्राप्ते त्रिलिङ्गतार्थं सूत्रम् । तत्र करणे— देवयजनः, प्रमाणी, साधनम्, प्रमाणम् ।

हिन्दी– करण और अधिकरण में विहित ल्युट् प्रत्ययान्त शब्द त्रिलिङ्ग में होते हैं ।

१८८/७. सर्वादीनि सर्वनामानि ।— बहु० तत्पुरुषसमासः ।

व्याख्या– सर्व-विश्वेत्यादीनि सर्वनामसंज्ञकानि त्रिलिङ्गानि स्युः । यथा— सर्वः, सर्वा, सर्वम्; विश्वः, विश्वा, विश्वम् । युष्मदस्मदोस्तु सर्वनामत्वेऽपि विशेषाभिधानात्र लिङ्गविशेषकार्यमिति भेदः ।

हिन्दी– सर्व, विश्व इत्यादि सर्वनामसंज्ञक शब्द तीनों लिङ्गों में होते हैं ।

इत्यव(वि)शिष्टलिङ्ग-त्रिलिङ्गानुशासनम्

इति महामुनिपाणिनिप्रणीतं लिङ्गानुशासनं सम्पूर्णम्

***

स्त्री-नपुंसकलिङ्गानुशासनम्

सूत्रकृता पाणिनिना स्त्री-नपुंसकलिङ्गं विशिष्य नोक्तम्, अमरसिंहेन तु सूत्रस्वरसात् तदवशिष्टतयाऽभिहितं तदिहाभिधीयते।

'स्त्री-नपुंसकयोर्भावक्रिययो ष्यञ् क्वचिच्च वुञ्' इति भावकर्मणोर्विहितष्यञन्तस्य स्त्री-नपुंसकलिङ्गत्वं, तच्च पूर्वमुक्तमपि अवसरप्राप्ततया ज्ञानसौकर्य्यार्थमिह पुनरुच्यते। 'गुण-वचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च' (५।१।१२४) इति चकारात् भावे विहितः ष्यञ् वुञ् च क्वचित् स्त्री-नपुंसकयोः स्यात्। उचितस्य भावः कर्म वा औचित्यम्, औचिती एव चातुर्य्यं-चातुरी, माधुर्य्यं-माधुरी। क्वचिदित्युक्तेः अर्हतो भावः आर्हन्तीत्येव तत्र अर्हतो नुम् चेति नुम्। वुञ्— आहोपुरुषिका, चौरिका, शैष्योपाध्यायिका, गार्गिकया श्लाघते इति। क्वचिदित्युक्तेः रामणीयकम् कामनीयकमित्यादौ 'योपधाद्गुरुपोत्तमात्' (५।१।१३२) इति वुञन्तस्य क्लीबत्वमेव। भावकर्मणोरित्युक्तेः स्वार्थे ष्यञ् क्लीबे एव चातुर्वर्ण्यं त्रैलोक्यम्।

'षष्ठान्तप्राक्पदाः सेनाच्छायाशाला-सुरानिशा' इति। षष्ठीसमासनिष्पन्नाः सेनाद्यन्ताः स्त्री-नपुंसकलिङ्गाः स्युः। मनुष्यसेना-मनुष्यसेनम्, वृक्षच्छाया-वृक्षच्छायम्, यवसुरा-यवसुरं, गोशाला-गोशालम्, श्वनिशा-श्वनिशम्।

'आबन्तोत्तरपदो द्विगुश्चापुंसि नश्च लुक्' इति च। आबन्तम् अनन्तञ्च उत्तरपदं यस्य तादृशो द्विगुः स्त्रीनपुंसकयोः तत्र च अनन्तस्य नस्य लुक् च। त्रिखट्टं-त्रिखट्टी। त्रितक्षं-त्रितक्षी। एतच्च पूर्वं प्रायेणोक्तम्; प्रपञ्चार्थमिहोपन्यस्तम्।

इति स्त्री-नपुंसकलिङ्गानुशासनम्

इति बिहारप्रदेशे वैदुष्यमण्डिते मिथिलान्तर्गते द्वारवङ्ग-
(सीतामढ़ी)-मण्डले चकौतीग्रामे निवासिना
स्वर्गीयरामेश्वरात्मजेन श्रीनरेशेन झोपाह्वेन
शास्त्रचूडामणिना 'शान्ति'व्याख्यया
समन्वितं पाणिनीयं लिङ्गानुशासनं
पूर्णतामगादिति।

***

पाणिनीय लिङ्गानुशासन में गृहीत शब्दों की अनुक्रमणिका

साङ्केतिक शब्द —
- स्त्री० = स्त्रीलिङ्गम्
- पुं० = पुंल्लिङ्गम्
- न० = नपुंसकलिङ्गम्
- श० = शब्द
- लि० = लिङ्गम्
- सू० = सूत्राङ्क

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
अन्धकार	९२	पुं०-न०
अन्न	१३७	न०
अन्वय	८८	पुं०-न०
अप्	२९	स्त्री०
अपगा	१८	स्त्री०
अपत्य	१६७	न०
अपाङ्ग	१०७	पुं०
अप्सरस्	१५२	स्त्री०
अबला	१८	स्त्री०
अब्धि	४३	पुं०
अभया	१६२	स्त्री०
अभिधान	७६	पुं०-न०
अभ्र	५०	न०
अभनि:	४	स्त्री०
अमित्र	१५५	पुं०
अमूल्य	१६७	न०
अमृत	१६४	न०
अम्बर	९०	न०
अम्बरीष	९४	न०
अम्बुद	१८१	पुं०-न०
अयस्	१३७	न०
अयुत	१४५	न०-पुं०
अरणि	४	स्त्री०
अरणि	५	स्त्री०-नं०
अरण्य	१३९	न०-पुं०
अर्ध०	११५	पुं०
अर्ध	१७७	पुं०-न०
अर्चिस्	१३५	न०-स्त्री०
अर्थ	७०	पुं०
अर्थ	१३८	पुं०
अर्द्धपिप्पली	१३०	स्त्री०
अर्धर्च	१७८	पुं०-न०
अर्भ	१७८	पुं०-न०
अलाबू	४	स्त्री०
अलाबू	११	स्त्री०
अवनत	१६४	न०
अवनि:	४	स्त्री०
अवनि	१८	स्त्री०
अवन्ति	२६	स्त्री०
अवार	९२	पुं०-न०
अवी	१०	स्त्री०
अव्यय	८८	पुं०-न०
अशन	१३७	न०
अशनि	४	स्त्री०
अशनि	५	स्त्री०-पुं०
अशीति	१३	स्त्री०
अश्र	९०	न०
अश्रि	२४	स्त्री०
अश्रु	५४	न०
अष्टापद	१८१	पुं०-न०
असुर	४३	पुं०
अस्मद्	१८३	स्त्री०पुं०न०
अहन्	१०२	न०
अहोरात्रे	१२५	न०
	आ	
आकर	३७	पुं०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
आकाश	१६५	न०
आकाश	१८१	पुं०-न०
आजि	१६०	स्त्री०
आज्य	१६७	न०
आडू	४	स्त्री०
आढक	१०४	पुं०-न०
आत्मन्	४३	पुं०
आधिपत्ये	१२३	न०
आनन	१३७	न०
आपत्	२७	स्त्री०
आमलक	१६१	न०
आमिष	१३७	न०
आयुध	१७९	न०
आरू	४	स्त्री०
आलय	३७	पुं०
आलान	७६	पुं०-न०
आशुशुक्षणि	४	स्त्री०
आशीर	२८	स्त्री०
आश्रम	८५	पुं०-न०
आसन	७६	पुं०-न०
आस्पद	१६५	न०
आस्य	१६५	न०
आहव	१५९	पुं०
	इ	
इक्षु	५१	पुं०
इध्म	८४	न०
इध्मप्रव्रश्चन	१८७	पुं०-अवि०
इन	७४	पुं०
इन्द्रिय	८७	न०
इषु	४६	स्त्री०-पुं०
इषुधि:	४२	स्त्री०-पुं०
	उ	
उक्थ	७१	न०
उक्षा	४८	पुं०
उच्चै: (अव्यय)	१८३	पुं०-स्त्री०-न०
उडुप	७८	न०
उत्तमा	१८	स्त्री०
उत्तरत्	१०८	पुं०
उत्तरीय	८७	न०
उद्दाम	८५	पुं०-न०
उदधि	४१	पुं०
उदर	९०	न०
उदश्वित्	१६३	न०
उद्यम	१७७	पुं०-न०
उद्यान	७६	पुं०-न०
उपवास	९८	पुं०-न०
उपल	१४२	पुं०
उपानत्	२०	स्त्री०
उर्वी	१८	स्त्री०
उल्मुक	६२	न०
उशीर	९२	पुं०-न०
उषस्	२७	स्त्री०
उष्ण	६८	न०
उष्णिक्	२०	स्त्री०
उष्ट्र	१५५	पुं०
	ऊ	

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
ऊर्ण	२१	न०
ऊर्णा	२१	स्त्री०
ऊर्मि	६	स्त्री०
ऊर्मि	८	स्त्री०-पुं०
	ऋ	
ऋजीष	९४	न०
ऋण	६८	नुं०
ऋत्विक्	१०८	पुं०
ऋभुक्षिन्	११५	पुं०
ऋषि	१०९	पुं०
	ए	
एक:	१८४	पुं०
एका	१८४	स्त्री०
एकम्	१८४	न०
	ऐ	
ऐरावत	१७६	पुं०-न०
	ओ	
ओदन	१३८	पुं०
ओषधि	२४	स्त्री०
	औ	
औपगव	१७४	पुं०
औपगवी	१७४	स्त्री०
औषध	१७९	पुं०-न०
	क	
कंस	९९	न०-पुं०
कच्छू	४	स्त्री०
कट	६६	पुं०-न०
कटक	६३	पुं०-न०
कटाह	११६	पुं०
कटि	२४	स्त्री०
कण्टक	६३	पुं०-न०
कण्ठ	४३	पुं०
कण्डु	१७२	स्त्री०-पुं०
कण्व	१६५	न०
कति	१८३	स्त्री०-पुं०-न०
कन्द	११४	पुं०
कन्दर	९०	न०
कपट	६६	पुं०-न०
कपि	१०९	पुं०
कपोल	४९	पुं०
कफ	११६	पुं०
कबन्ध	१७९	पुं०-न०
कमल	१४३	न०-पुं०
कमल	१५८	न०-पुं०
कमण्डलु	५६	पुं०-न०
कम्बल	१४२	पुं०
करण्ड	११२	पुं०
करवाल	४३	पुं०
कररुह	४३	पुं०
कराट	६५	न०
करीष	९५	पुं०-न०
कर्कटरज्जु	५३	स्त्री०
कर्कन्धु	१७२	स्त्री०-पुं०
कर्कन्धू	११	स्त्री०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग	शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
कर्त्री	११	स्त्री०	काश	१८०	पुं०-न०
कर्दम	४३	पुं०	काशू	४	स्त्री०
कर्पट	६६	पुं०	काश्मीर	९०	न०
कर्षू	४	स्त्री०	काश्यपी	१८	स्त्री०
कलत्र	९०	न०	काष्ठ	७१	न०
कल्माष	९४	न०	काष्ठा	७२	स्त्री०
कवच	१६८	न०	कास	९८	पुं०-न०
कवाट	६६	पुं०-न०	किकि	२५	स्त्री०
कवि	१०९	पुं०	किल्विष	९४	न०
कव्य	१६७	न०	किरण	१००	पुं०
कसेरू	५८	न०	किरीट	६५	न०
कशेरू	४	स्त्री०	किष्कु	१७२	स्त्री०-पुं०
कषाय	८८	पुं०-न०	किसलय	८७	न०
क्रतु	४९	पुं०	कु	१८	स्त्री०
क्रव्यम्	१३७	न०	कुक्षि	११७	पुं०
कांस	९८	पुं०-न०	कुङ्कुम	८४	न०
काकुद	१८१	पुं०-न०	कुच	४३	पुं०
काण्ड	४७	पुं०-न०	कुञ्ज	१७८	न०
कानन	७५	न०	कुट	६६	पुं०-न०
कानन	१३७	न०	कुटि	२६	स्त्री०
कान्ता	१८	स्त्री०	कुटीर	९०	न०
कापेय	१२३	न०	कुटुम्ब	१६८	न०
कामिनी	१८	स्त्री०	कुडव	१०३	न०
कार्पास	९८	पुं०-न०	कुड्य	१६७	न०
कार्मुक	१३७	न०	कुणप	७९	पुं०-न०
कार्षापण	६९	पुं०-न०	कुण्ड	१६५	न०
कालायस	१३७	न०	कुण्डल	१४३	न०-पुं०
काव्य	१६७	न०	कुतप	७९	पुं०-न०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग	शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
कुथ	१७८	पुं०-न०	कोकिला	११	स्त्री०
कुन्त	१११	पुं०	कोटि	१४६	स्त्री०
कुन्द	११४	पुं०	कोपना	१८	स्त्री०
कुप्य	१६७	न०	कौमार	१२३	न०
कुम्भ	८०	पुं०	कौमुदी	३३	स्त्री०
कुरू	११	स्त्री०	कौलि	१०९	पुं०
कुर्च	१७८	पुं०-न०	कौसल्या	११	स्त्री०
कुल	१४१	न०	क्षणदा	२५	स्त्री०
कुलिश	१६५	न०	क्षतज	१३७	न०
कुलिश	१८०	पुं०-न०	क्षत्र	९०	न०
कुलीर	९०	न०	क्षपा	२५	स्त्री०
कुश	१८०	पुं०-न०	क्षिति	१८	स्त्री०
कुसुम	८५	पुं०-न०	क्षिपणि	४	स्त्री०
कुसुम	१५७	न०	क्षिप्र	९०	न०
कुसूल	१४२	पुं०	क्षीर	९२	पुं०-न०
कुहर	९०	न०	क्षुत्	२७	स्त्री०
कुहु	५२	स्त्री०	क्षुद्र	९०	न०
कूट	६६	पुं०-न०	क्षुर	८९	पुं०
क्रूर	९०	न०	क्षेत्रज्ञ	४३	पुं०
कूल	१४१	न०	क्षेम	८५	पुं०-न०
कृच्छ्र	९०	न०	क्षोणि	१८	स्त्री०
कृति	९	स्त्री०	क्षौम	८५	पुं०-न०
कृमि	१०९	पुं०	क्ष्मा	१८	स्त्री०
कृषि	२४	स्त्री०	क्ष्वेलित	१७६	पुं०-न०
केदार	९०	न०		**ख**	
केयूर	९०	न०	खडू	४	स्त्री०
केलि	२५	स्त्री०	खड्ग	४३	पुं०
केश	४३	पुं०	खड्डू	४	स्त्री०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
खण्ड	१८०	पुं०-न०
खनकी	११	स्त्री०
खर्जू	४	स्त्री०
खानि	२४	स्त्री०
खारी	३२	स्त्री०
खारी	१०५	स्त्री०
खिल	१४३	न०-पुं०
	ग	
गज	११०	पुं०
गण	६७	पुं०
गण्ड	४९	पुं०
गण्ड	११२	पुं०
गन्ध	११६	पुं०
गभीर	९०	न०
गमन	११९	न०
गरुत्	१०८	पुं०
गल	४३	पुं०
गहन	१३७	न०
गह्वर	९०	न०
गाण्डीव	१३९	न०-पुं०
गाथ	७३	पुं०-न०
गिरि	४३	पुं०
गीत	१२०	न०
गीर्	२८	स्त्री०
गुण	६७	पुं०
गुल्फ	४९	पुं०
गुल्म	८४	न०
गृह	१८१	पुं०-न०
गृहस्थूण	२२	न०
गो	१७१	स्त्री०-पुं०
गोत्र	९०	न०
गोत्रा	१८	स्त्री०
गोदारक	१३७	न०
गोदारण	१३७	न०
गोदोहनी	१८७	स्त्री०
गोमय	८८	पुं०-न०
गोशाल	१२९	न०
गोशाला	१२९	स्त्री०
गौरी	११	स्त्री०
ग्रन्थि	१०९	पुं०
ग्लानि	६	स्त्री०
	घ	
घट	३७	पुं०
घट	६४	पुं०
घस्र	१००	पुं०
घृत	१७६	पुं०-न०
घृणि	६	स्त्री०
	च	
चंचला	१८	स्त्री०
चक्र	९२	पुं०-न०
चत्वर	९०	न०
चत्वारिंशत्	१३	स्त्री०
चन्दन	७६	पुं०-न०
चन्द्रिका	३३	स्त्री०
चपला	१८	स्त्री०
चमस	९८	पुं०-न०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
चमू	४	स्त्री०
चय	३७	स्त्री०
चरण	६९	पुं०-न०
चषक	६३	पुं०-न०
चाप	१३७	न०
चामर	९०	न०
चित्त	१६४	न०
चित्र	९०	न०
चिबुक	६२	न०
चिह्न	७५	न०
चुल्लि	३२	स्त्री०
चूत	१११	पुं०
चूर्ण	६९	पुं०-न०
चूर्णि	६	स्त्री०
	छ	
छत्र	९०	न०
छत्र	१५३	न०
छत्र	१५६	न०-पुं०
छत्रिणी	११	स्त्री०
छदिस्	१३६	स्त्री०
छवि	२५	स्त्री०
छात्र	१५५	पुं०
	ज	
जगत्	१६३	न०
जघन	७५	न०
जठर	९०	न०
जडत्व	१२२	न०
जतु	५८	न०
जनता	१७	स्त्री०
जनपद	१०७	पुं०
जप	३६	पुं०
जय	३७	पुं०
जल	१३७	न०
जाड्य	१२२	न०
जानु	५४	न०
जूर्णि	६	स्त्री०
जृम्भ	८२	पुं०-न०
ज्या	१८	स्त्री०
ज्यानि	६	स्त्री०
ज्योक	८२	स्त्री०
ज्योत्स्ना	३३	स्त्री०
	त	
तक्र	९०	न०
तक्षन्	४८	पुं०
तटिनी	१८	स्त्री०
तडाक	६३	पुं०-न०
तडित्	१८	स्त्री०
तत्र	१८३	स्त्री०-पुं०-न० अवि० लिङ्ग
तनु	५२	स्त्री०
तनू	४	स्त्री०
तन्त्र	९०	न०
तन्त्री	१०	स्त्री०
तपस	१५१	न०
तपस्विनी	२५	स्त्री०
तमिश्रा	२५	स्त्री०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग	शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
तर्भी	२५	स्त्री०	तोमर	९२	पुं०-न०
तल	१४३	न०-पुं०	तोय	१३७	न०
तलभ	८१	न०	तोरण	६८	न०
तल्प	७८	न०	त्याग	३६	पुं०
तरङ्ग	११६	पुं०	त्रपु	५४	न०
तरङ्गिणी	१८	स्त्री०	त्रिंशत्	१३	स्त्री०
तरणि	४	स्त्री०	त्रिभुवन	४४	न०
तरल	१४२	पुं०	त्रिभुवन	१३३	न०
तरी	१०	स्त्री०	त्रियामा	२५	स्त्री०
तर्दु	४	स्त्री०	त्रिरात्र	१३२	न०
ताल	१४२	पुं०	त्रिविष्टप	४४	न०
तालक	६३	पुं०-न०	त्रुटि	२६	स्त्री०
तालु	५४	न०	त्रुटि	१७१	स्त्री०-पुं०
तामसी	२५	स्त्री०	त्वक्	३०	स्त्री०
तारा	३३	स्त्री०	त्विट्	२३	स्त्री०
तिथि	२५	स्त्री०		**द**	
तिमिर	९२	पुं०-न०	दंष्ट्रा	१५४	स्त्री०
तीर	९०	न०	दण्ड	१८०	पुं०-न०
तीर्थ	७३	पुं०-न०	दण्डिनी	११	स्त्री०
तुण्ड	११२	पुं०	दधि	१६५	न०
तुरङ्ग	११६	पुं०	दन्त	४३	पुं०
तुहिन	७५	न०	दर्द्रु	४	स्त्री०
तूर्णि	६	स्त्री०	दर्प	१७८	पुं०-न०
तूर्य	१६७	न०	दर्भ	१७८	पुं०-न०
तूल	१४२	पुं०	दर्वि	२४	स्त्री०
तृट	२३	स्त्री०	दल्मि	६	स्त्री०
तृटि	३१	स्त्री०	दशन	४३	पुं०
तृण	६९	पुं०-न०	दाडिम	८५	पुं०-न०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग	शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
दारा	१०६	पुं०	द्रोणि	६	स्त्री०
दारु	५८	न०	द्वन्द्व	१६८	न०
दिक्	२०	स्त्री०	द्वार्	२८	स्त्री०
दिन	१०२	न०	द्वार	९०	न०
दिवस	१००	पुं०	द्विरात्र	१३२	पुं०
दीधिति	१०१	स्त्री०	द्वीप	७९	पुं०-न०
दीप	७७	पुं०	द्वीपवती	१८	स्त्री०
दीप्ति	९	स्त्री०	द्व्यहः	१३२	पुं०
दुःख	१६८	न०		ध	
दुन्दुभि	१४	स्त्री०	धन	१३७	न०
दुन्दुभि	१६	पुं०	धनुष	१३४	न०
दुहितृ	३	स्त्री०	धनुष्	१३७	न०
दूत	१११	पुं०	धनु	४	स्त्री०
दूर	९०	न०	धमनि	४	स्त्री०
दृढ	१७७	पुं०-न०	धरणि	४	स्त्री०
दृति	१०९	पुं०	धरा	१८	स्त्री०
दिष्टि	९	पुं०	धरित्री	१८	स्त्री०
देव	४३	पुं०	धर्षणि	४	स्त्री०
देवता	१७	स्त्री०	धान्य	१६७	न०
देवल	१४२	पुं०	धारा	३३	स्त्री०
देह	१८१	पुं०-न०	धिष्ण्य	१६७	न०
दैत्य	४३	पुं०	धी	१२	स्त्री०
दैव	१६५	न०	धुनी	१८	स्त्री०
दैव	१६६	न०-पुं०	धूर्	२८	स्त्री०
दोः	४३	पुं०	धूर्त	१११	पुं०
द्यौः	४५	स्त्री०	धूलि	२५	स्त्री०
द्रविण	१३७	न०	धेनु	५२	स्त्री०
द्रोण	१०४		ध्वज	११०	पुं०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
ध्वनि	१०९	पुं०
	न	
नख	४३	पुं०
नगर	१५७	न०
नट	६६	पुं०-न०
नदी	१८	स्त्री०
ननान्दृ	३	स्त्री०
नयन	१३७	न०
नर	४९	पुं०
नर्त्तकी	११	स्त्री०
नलिन	७६	पुं०-न०
नवति	१३	स्त्री०
नवनीत	१६४	न०
नाक	४३	पुं०
नाडि	२५	स्त्री०
नाडीव्रण	१०७	पुं०
नाभि	१५	स्त्री०
नाभि	१६	पुं०
नामन्	१५०	न०
नार	९०	न०
नारी	१८	स्त्री०
नालि	२५	स्त्री०
निकट	६६	पुं०-न०
निगल	१४३	न०-पुं०
नितम्ब	११५	पुं०
नितम्बिनी	१८	स्त्री०
निदाघ	१७७	पुं०-न०
निधानम्	१३७	न०
निधि	४१	पुं०
निमित्त	१६४	न०
निम्न	७५	न०
निम्नगा	१८	स्त्री०
निर्यात	९८	पुं०-न०
निर्व्यूह	११६	पुं०
निशा	२५	स्त्री०
निशीथिनी	२५	स्त्री०
निश्चय	३६	पुं०
निष्क	६३	पुं०-न०
नीर	९०	न०
नीर	१३७	न०
नीरद	४९	पुं०
नीतू	४	स्त्री०
नेत्र	९०	न०
नेत्र	१३९	न०-पुं०
नेमि	६	स्त्री०
नौ	३०	स्त्री०
	प	
पङ्क	४३	पुं०
पङ्क्ति	२६	स्त्री०
पङ्गू	११	स्त्री०
पञ्चखट्वी	१३३	स्त्री०
पञ्चगव	१३३	न०
पञ्जर	९०	न०
पञ्चतक्षी	१३३	स्त्री०
पञ्चन्	१८४	स्त्री०-पुं०-न०
पञ्चपात्र	१३३	न०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
पञ्चमूली	१३३	स्त्री०
पञ्चाशत्	१३	स्त्री०
पट	६४	पुं०
पटह	१८१	पुं०-न०
पटु	१७३	पुं०-न०
पट्ट	१८१	पुं०-न०
पट्वी	१७३	स्त्री०
पण्य	१६७	न०
पत्तन	१५७	न०
पत्र	९०	न०
पत्र	१५३	न०
पत्र	१५६	न०-पुं०
पथि	११५	पुं०
पद	३८	न०
पद्म	१५८	न०-पुं०
पनस	९७	न०
पपी	१०	स्त्री०
परिषत्	२७	स्त्री०
पर्ण	६८	न०
पर्वत	४३	पुं०
पलल	१३७	न०
पलाल	१४३	न०-पुं०
पलित	१६४	पुं०
पल्वल	११६	पुं०
पल्लव	११६	पुं०
पवित्र	१५६	न०-पुं०
पाक	३६	पुं०
पाटलि	१७१	स्त्री०-पुं०
पाणि	११७	पुं०
पाणिपाद	१२४	न०
पात्र	९०	न०
पात्र	१५६	न०-पुं०
पादू	४	स्त्री०
पानीय	१३७	न०
पाप	७८	न०
पामा	११	स्त्री०
पार	९२	पुं०-न०
पार्ष्णि	६	स्त्री०
पार्श्व	१८०	पुं०-न०
पाषाण	६७	पुं०
पाषण्ड	११२	पुं०
पिच्छ	१६८	न०
पिटक	६३	पुं०-न०
पिण्डक	६३	पुं०-न०
पितापुत्रक	१२३	न०
पित्त	१६४	न०
पिनाक	६३	पुं०-न०
पिशित	१३७	न०
पीठ	१६५	न०
पीयूष	९४	न०
पुङ्ख	११६	पुं०
पुच्छ	१७८	पुं०-न०
पुञ्ज	११०	पुं०
पुण्याह	१३१	न०
पुत्	२७	स्त्री०
पुत्र	१५५	पुं०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
पुरुष	४९	पुं०
पुरीष	९४	न०
पुरोडाश	११३	पुं०
पुलाक	६३	पुं०-न०
पुलिन	७६	पुं०-न०
पुष्कर	९०	न०
पुष्प	७८	न०
पुष्प	१५७	न०
पुस्तक	६३	पुं०-न०
पुस्तक	१७६	पुं०-न०
पूग	१५	पुं०
पूर्	२८	स्त्री०
पूर्वाह्ण	१३०(वृत्ति)	पुं०
पृथिवी	१८	स्त्री०
पृथ्वी	१८	स्त्री०
पृश्नि	६	स्त्री०
पृषत्	१६३	न०
पृष्ठ	७१	न०
प्रतिपद्	२७	स्त्री०
प्रतीपदर्शिनी	१८	स्त्री०
प्रपद	४९	पुं०
प्रभु	५१	पुं०
प्रमदा	१८	स्त्री०
प्रयुत	१४५	न०-पुं०
प्रस्थ	१०३	पुं०
प्रस्थ	१७८	पुं०-न०
प्रातिपदिक	६२	न०
प्रावृट्	२३	स्त्री०
प्रियङ्गु	५२	स्त्री०
प्रोथ	७३	पुं०-न०
	फ	
फलक	६३	पुं०-न०
फेन	७४	पुं०
	ब	
बडिश	१६८	न०
बन्धुता	१७	स्त्री०
बर्ह	१६८	न०
बल	१५७	न०
बलि	२६	स्त्री०
बलि	१०९	पुं०
बस्ति	११७	पुं०
बाण	४७	पुं०-न०
बाहु	४६	स्त्री०-पुं०
बिडाल	१४३	न०-पुं०
बिम्ब	१६८	न०
बिल	१३७	न०
बिस	९७	न०
बीज	१६५	न०
बुद्धि	९	स्त्री०
बुदबुद	११४	पुं०
बुस	९७	न०
बुस्त	१७६	पुं०-न०
ब्रह्मचारिणी	११	स्त्री०
ब्रह्मन्	१४९	न०-पुं०
ब्राह्मणता	१७	स्त्री०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग	शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
ब्राह्मणत्व	१२२	न०	भूमि	६	स्त्री०
ब्राह्मणसेन	१२९	न०	भूमि	१८	स्त्री०
ब्राह्मणसेना	१२९	स्त्री०	भूर्णि	६	स्त्री०
ब्राह्मणी	११	स्त्री०	भृङ्गार	९२	पुं०-न०
ब्राह्मण्य	१२२	न०	भृत्र	१५५	पुं०
	भ		भ्रुकुटि	२६	स्त्री०
भक्ति	९	स्त्री०	भ्रू	१२	स्त्री०
भक्ष्य	१३७	न०		**म**	
भग	३८	न०	मङ्गल	१४३	न०-पुं०
भय	३८	न०	मठ	११६	पुं०
भरणि	५	स्त्री०-पुं०	मणि	११६	पुं०
भरण्ड	११२	पुं०	मणि	१७१	स्त्री०-पुं०
भलत्र	९०	न०	मण्ड	११२	पुं०
भवन	७६	पुं०-न०	मण्ड	१८०	पुं०-न०
भस्त्रा	१५४	स्त्री०	मति	९	स्त्री०
भण्ड	१६५	न०	मत्तकाशिनी	१८	पुं०
भाण्डक	६३	पुं०-न०	मथिन्	११५	पुं०
भामिनी	१८	स्त्री०	मद्र	५३	पुं०-न०
भास्	२०	स्त्री०	मद्य	१६७	न०
भास	९८	पुं०-न०	मधु	५६	पुं०न०
भी	१२	स्त्री०	मनस्	१५१	न०
भीम	८३	पुं०	मन्त्र	१५५	पुं०
भीर	९०	न०	मन्दार	९२	पुं०-न०
भीरु	१८	स्त्री०	मयूख	१००	पुं०
भुज	४६	पुं०	मरीचि	१७१	स्त्री०-पुं०
भूत	१७६	पुं०-न०	मरुत्	१०८	पुं०
भू	१२	स्त्री०	मर्जू	४	स्त्री०
भू	१८	स्त्री०	मलय	८८	पुं०-न०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग	शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
यान	७६	पुं०-न०	रन्ध्र	९०	न०
यानि	६	स्त्री०	रन्ध्र	१३७	न०
यामिनी	२५	स्त्री०	रमणी	१८	स्त्री०
युद्ध	१५७	न०	रवि	१०९	पुं०
युध्म	८४	न०	रश्मि	६	स्त्री०
युष्मद्	१८३	स्त्री०-पुं०-न०	रश्मि	१००	पुं०
यूथ	७३	पुं०	रस	९८	पुं०-न०
यूप	७७	पुं०	रसा	१८	स्त्री०
यूष	९५	पुं०-न०	राजा	४८	पुं०
योगिनी	११	स्त्री०	राजि	२६	स्त्री०
योनि	६	स्त्री०	रात्रि	२५	स्त्री०
योनि	८	स्त्री०-पुं०	रामा	१८	स्त्री०
योषा	१८	स्त्री०	राशि	१०९	पुं०
योषिद्	१८	स्त्री०	रुक्म	८४	न०
यौवन	१२३	न०	रुचि	२५	स्त्री०
	र		रुट्	२३	स्त्री०
रक्त	१३७	न०	रुधिर	१३७	न०
रक्षःसभ	१२८	न०	रूप	७८	न०
रजकी	११	स्त्री०	रूप्य	१६७	न०
रजत	१६४	न०	रेणु	५२	स्त्री०
रजनि	४	स्त्री०	रेणु	१७२	स्त्री०-पुं०
रजनी	२५	स्त्री०	रेफ	११६	पुं०
रज्जु	५२	स्त्री०	रोमन्	१५०	न०
रण	६८	न०		**ल**	
रण	१५७	न०	लक्षा	१४६	स्त्री०
रतु	४	स्त्री०	लक्ष्मी	१०	स्त्री०
रत्न	७५	न०	लता	१८	स्त्री०
रथ	७०	पुं०	लपन	१३७	न०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग	शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
लब्धि	९	स्त्री०	वप्र	९०	न०
ललना	१८	स्त्री०	वर	१६८	न०
ललाट	६५	न०	वरण्ड	११२	पुं०
लवण	६८	न०	वरत्रा	१५४	स्त्री०
लाङ्गल	१३७	न०	वरवर्णिनी	१८	स्त्री०
लाजा	१०६	पुं०	वरारोहा	१८	स्त्री०
लिङ्ग	३८	न०	वर्चस्क	६३	पुं०-न०
लोचन	१३७	न०	वर्ण्य	१६७	न०
लोष्ट	६५	न०	वर्तनि	४	स्त्री०
लोह	१३७	न०	वर्ति	२६	स्त्री०
लोहित	१७६	पुं०-न०	वर्मन्	१४८	न०
	व		वर्ष	९५	पुं०-न०
वंश	११३	पुं०	वर्षा	२९	स्त्री०
वक्त्र	९०	न०	वल्लरी	१८	स्त्री०
वक्त्र	१३९	न०-पुं०	वल्ली	१८	स्त्री०
वक्र	९०	न०	वसन	७६	पुं०-न०
वज्र	९२	पुं०-न०	वसु	५४	न०
वट	६५	न०	वसुधा	१८	स्त्री०
वटच्छाय	१२९	न०	वसुन्धरा	१८	स्त्री०
वटच्छाया	१२९	न०	वसुमती	१८	स्त्री०
वत्स	९६	पुं०	वस्ति	१७१	स्त्री०-पुं०
वदन	१३७	न०	वस्तु	५८	न०
वध	३६	पुं०	वस्त्र	९०	न०
वधू	४	स्त्री०	वह्नि	७	पुं०
वधू	१८	स्त्री०	वाक्	३०	स्त्री०
वन	७५	न०	वात	१११	पुं०
वन	१३७	न०	वामलोचना	१८	स्त्री०
वनिता	१८	स्त्री०	वामा	१८	स्त्री०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग	शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
वायस	९६	पुं०	वृक्ष	९३	पुं०
वाराह्या	११	स्त्री०	वृजिन	७५	न०
वारि	१३७	न०	वृत्त	१६४	न०
वाल	१४३	न०-पुं०	वृत्र	१५५	पुं०
वास	९८	पुं०-न०	वृन्दारक	१६८	न०
विंशति	१३	स्त्री०	वृष	९३	पुं०
विचित्र	९०	न०	वृषण	६९	पुं०-न०
विट्	२३	स्त्री०	वृषल	१४२	पुं०
विट	६५	स्त्री०	वृषा	४८	पुं०
विटप	७९	पुं०-न०	वृष्णि	७	पुं०
वित्त	१३७	न०	वेणि	६	स्त्री०
वित्त	१६४	न०	वेणि	३२	स्त्री०
विदि	२४	स्त्री०	वेतन	७५	न०
विद्युत्	१८	स्त्री०	वेदि	२४	स्त्री०
विपत्	२७	स्त्री०	वेशि	२४	स्त्री०
विपिन	७५	न०	वैर	९०	न०
विपिन	१३७	न०	व्याधि	४१	पुं०
विप्रुट्	२३	स्त्री०	व्रज	१७८	पुं०-न०
विभावन	७६	पुं०-न०	व्रण	६९	पुं०-न०
विभावरी	२५	स्त्री०	व्रत	१६४	न०
विमान	७६	पुं०-न०	व्रतति	१८	स्त्री०
वियत्	१६३	न०	व्रात	१११	पुं०
विवर	१३७	न०		**श**	
विश्वम्भरा	१८	स्त्री०	शकन्	१६३	न०
विष	९५	पुं०-न०	शकृत्	१६३	न०
विषाण	६९	पुं०-न०	शङ्कु	१४७	पुं०
वीचि	२५	स्त्री०	शण्डक	६३	पुं०-न०
वीर्य	१५७	न०	शत	१४४	न०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
शत	१४५	न०-पुं०
शब्द	११४	पुं०
शमी	१६२	स्त्री०
शयन	७६	पुं०-न०
शर	४३	पुं०
शर	१६८	न०
शरत्	२७	स्त्री०
शरच्छाय	१२७	न०
शरासन	१३७	न०
शरीर	९०	न०
शर्वरी	२५	स्त्री०
शलाका	३४	स्त्री०
शव	१८०	पुं०-न०
शशीर्ण	२२	न०
शष्कुलि	२६	स्त्री०
शष्प	७८	न०
शस्त्र	९०	न०
शानि	२४	स्त्री०
शार्ङ्गरवी	११	स्त्री०
शालूक	६२	न०
शाल्मलि	१७१	स्त्री०-पुं०
शाल्य	१७७	पुं०-न०
शासन	७५	न०
शास्त्र	९०	न०
शिक्य	१६७	न०
शिखण्ड	११२	पुं०
शिखण्ड	११२	पुं०
शिल्प	७८	न०
शिरीष	९४	न०
शिरोग्रीव	१२४	न०
शिरोरुह	४३	पुं०
शिशिर	९२	पुं०-न०
शीधु	५६	पुं०-न०
शील	१४३	न०-पुं०
शुक्र	९१	न०
शुक्ल	१८५	पुं०-न०
शुक्लता	१७	स्त्री०
शुक्ला	१८५	स्त्री०
शुष्क	६३	पुं०-न०
शूर्प	७९	पुं०-न०
शूल	१४३	न०-पुं०
शुल्ब	१५७	न०
शृङ्ग	१७७	पुं०-न०
शृङ्गार	६५	न०
शृङ्गार	९२	पुं०-न०
शृधु	४	स्त्री०
शैवलिनी	१८	स्त्री०
शोणित	१३७	न०
श्मशान	७५	न०
श्मश्रु	५४	न०
श्राद्ध	१६५	न०
श्री	१२	स्त्री०
श्रुति	९	स्त्री०
श्रेणि	६	स्त्री०
श्रोणि	६	स्त्री०
श्रोणि	१८	स्त्री०-पुं०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग	शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
श्वनिश	१२९	न०	समान	७६	पुं०-न०
श्वनिशा	१२९	न०	समित्	२७	स्त्री०
श्वभ्र	९०	न०	समीप	७८	न०
श्वभ्र	१३७	न०	समुद्ग	११६	पुं०
श्वश्रू	११	स्त्री०	समुद्र	४३	पुं०
श्वा	४८	पुं०	सम्पत्	२७	स्त्री०
	ष		सम्बध्या	३१	स्त्री०
षण्ड	११२	पुं०	सरक	६३	पुं०-न०
षष	१८४	स्त्री०-पुं०-न०	सरणि	४	स्त्री०
षष्टि	१३	स्त्री०	सरयु	५२	स्त्री०
	स		सरित्	१८	स्त्री०
संग्राम	८५	पुं०-न०	सर्जू	४	स्त्री०
संग्राम	१५९	पुं०	सर्प	७७	पुं०
संपत्ति	९	स्त्री०	सर्व	१८८	पुं०न०-अवि०
संभावन	७६	पुं०-न०	सर्वंसहा	१८	स्त्री०
संयम	३६	पुं०	सर्वा	१८८	स्त्री०-अवि०
संवित्	२७	स्त्री०	सस्य	१६७	न०
संसत्	२७	स्त्री०	सहस्र	१४४	न०
सकृत्	१६३	न०	सहस्र	१४७	न०-पुं०
सक्तु	५९	पुं०-न०	सानु	५६	पुं०-न०
सक्थि	१६५	न०	सार	९२	पुं०-न०
सख्य	१२३	न०	सारथि	११७	पुं०
सङ्ग	११६	पुं०	साल	१४६	न०-पुं०
सञ्चर	३७	पुं०	साहस	९७	न०
सत्य	१६७	न०	सिकता	२९	स्त्री०
सप्तति	१३	स्त्री०	सिक्थ	७१	न०
समय	८६	पुं०	सिद्धि	९	स्त्री०
समा	२९	स्त्री०	सिध्म	८४	न०

शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग	शब्द	सूत्राङ्क	लिङ्ग
हस्त	१११	पुं०	होम	८५	पुं०-न०
हानि	६	स्त्री०	ह्रद	११४	पुं०
हृदय	८७	न०	ह्लादिनी	१८	स्त्री०
हेमन्तशिशिर	१२५	पुं०	ह्री	१२	स्त्री०

***

परिशिष्ट-१

पाणिनीय लिङ्गानुशासन के विभिन्न प्रतियों का पाठान्तर

सूत्रसंख्या	कृष्णदास अका. सं. सन् १९९९	कलि. सं. १९०५	विशेष
		स्त्रीलिङ्ग	
२०	०स्रुक दिगुष्णिगुपानहः	०स्रुक स्रग् दिग् दृगु.	संशोधित
२४	०शान्यश्रिवेशि.	०शाण्यश्रिवेणि.	
३२	चुल्ति	चूल्लि	
		पुंल्लिङ्ग	
५४	०जानुवसु०	जानु	अन्य प्रतियों में
५६	०मधु-सिधु-शीधु च	०मधु-शीधु०	
५८	०कशेरु-जनु०	०कशेरुजत्रु०	
७६	०चन्दनालानसमान०	०चन्दनालानसम्मान०	
७८	०उडुपतल्प०	०उडुपताप०	
८४	०सिध्म-युध्मेध्म०	०सिध्य-युग्मेध्म०	
९०	०क्षुद्रनार०	०क्षुद्रपार०	
	०रन्ध्रास्त्र-श्वभ्र०	०रन्ध्रास्त्रशुभ्र०	
	०गह्वर-कुहर०	गह्वर (मात्र).	
	०अंगुलित्र-भलत्र	०अंगुलित्र तनुत्रास्त्र	
९४	शिरीष-र्जीषा०	शिरीष-जोषा०	
९७	पनस०	मानस०	
१०६	०लाजानां बहुत्वं०	०लाजानां-असूनां बहुत्वं	सिद्धान्तकौमुदी
१०९	०राशिदृतिग्रन्थि०	०राशि धृति प्रहि०	
	०कविकपि०	०कवि- (कपि नहीं)	

११२	०भरण्ड-वरण्ड०	०भरण्डरण्डवरण्ड०	
११५	०पथिमथ्यृभुक्षि०	०पथिसख्यृभुक्षि०	
११६	०पल्वल०	०पल्लल०	
	०निर्त्यूह०	०निर्य्यूह०	
११७	बस्ति-पाण्यञ्जलय:	०बस्त्यञ्जलय०	

नपुंसकलिङ्ग

१३५	स्त्रियां च व्यवस्थया		'व्यवस्थया' वृत्ति में है, न कि मूल में- सिद्धान्तकौमुदी
१४५/१४३	०कुण्डलमृणाल०	कुण्डलपललमृणाल	दूसरी सूत्रसंख्या गृहीत पाठ का है।
	०वाल-निगल०	०गल०	
१४९/१४७	शङ्कुः पुंसि	× नहीं है	
१५०/१४७	सहस्त्रः क्वचित्	सहस्त्रः पंसि च	
१५२/१४९	ब्रह्मन् पुंसि च	ब्रह्म पुंसि च	
१५८/१५५	०वृत्रमेढ्रोष्टाः	०वृत्रमैत्रा०	
१६०/१५७	०पतन०	०पत्तन०	
१६६/१६३	०सकृच्छकन्पृणच्०	०सकृत् कृषत् पृषच्	
१६७/१६४	नवनीतावनता०	०नवनीतावता०	
१६८/१६५	०कुण्डभाण्डाङ्कका	०कुण्डाङ्क०	कलि० एवं सिद्धा०
१७०/१६७	०रूप्यकुप्यपण्य०	०रूप्यपण्य०	सिद्धान्तकौमुदी में भी 'रूप्यपण्य'
१७१/१६८	०पिच्छबिम्बकुटुम्ब	०पिच्छविश्वकुटुम्ब०	
	०वरशरवृन्दारकाणि०	०वरवृन्दारकाणि	

स्त्री० - पुंल्लिङ्ग

१७५/१७२	मृत्युसीधु०	मन्युशीधु०	
	०कर्कन्धु-किष्कु	०कर्कन्धुसिन्धु	

	पुं० - नपुंसकलिङ्ग	
१७९/१७६	ऐरावत-पुस्तक०	ऐरावत-पुस्त०
१८१/१७८	०कुथकुर्च०	०कुथकूर्च०
	०अर्धर्चदर्भपुच्छा:	०अर्धर्चपुच्छा: ०
१८४/१८१	०अम्बुदकाकुदाश्च	०अम्बुदककुदाश्च
	अवशिष्टलिङ्ग	
१८५/१८२	अविशिष्टलिङ्गम्	अवशिष्टलिङ्गम्
१८६/१८३	अव्ययं कति युष्मदस्मदः	अव्ययं डति युष्मदस्मदः

***

परिशिष्ट- २

(क) हर्षवर्द्धनकृत लिङ्गानुशासन की संस्कृत-भूमिका का हिन्दी-रूपान्तर

'सर्वलक्षणा' नामक टीका से संवलित हर्षवर्द्धनकृत यह लिङ्गानुशासन लिङ्गविज्ञानीय ग्रन्थों के बीच प्राचीन और अतिविशिष्ट संस्करण मद्रास विश्वविद्यालय के संस्कृत ग्रन्थावली के अन्तर्गत (१९३१ ई० में) प्रकाशित है । महामहोपाध्याय विद्वान् सम्पादक पं० वेङ्कट-रमन शर्मा का कथन है कि प्रस्तुत लिङ्गानुशासन का सम्पादन तीन विशिष्ट हस्तलेखों के आधार पर किया गया है । उनका विवरण निम्नांकित है—

१. तालपत्र पर लिखित प्राचीन केरलीय लिपि में निबद्ध दो-तीन सौ वर्ष पुराना 'क' संज्ञक हस्तलेख ।

२. तालपत्र पर ही लिखित 'नन्दिनागर लिपि' मद्रास राजकीय ग्रन्थशाला में संगृहीत आदर्श ग्रन्थों में एक, जीर्ण-शीर्ण-त्रुटित पत्र वाला 'ख'संज्ञक हस्तलेख ।

३. पत्राकार, देवनागरी (र) लिपि, केरलीय किसी आदर्श पुस्तक से प्रतिरूपित, बिहार और उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी में संगृहीत तथा पटना नगर के श्रीयुत् के० पी० जाय-सवाल महोदय के द्वारा सादर प्रेषित 'ग' संज्ञक ।

ये तीनों हस्तलेख, जो बीच में जहाँ-तहाँ ग्रन्थ के अंश लुप्त हैं, कहीं पूर्वापर वाक्य अत्यन्त अस्त-व्यस्त हैं (थे) । इनमें प्रथम तथा तृतीय आदर्श ग्रन्थ त्रिवाङ्कुर (ट्रावनकोर) के मध्य भाग से तथा अन्य आन्ध्र देश से संगृहीत किये गये हैं, ऐसा प्रतीत होता है । आदर्श ग्रन्थों में समुपलब्ध पाठभेद ग्रन्थ के पार्श्व तथा नीचे भाग में जहाँ-तहाँ उल्लिखित हैं ।

***

(ख) हर्षवर्द्धनकृत लिङ्गानुशासन के व्याख्याकार पृथिवीश्वर और उनकी व्याख्या

हर्षवर्द्धनकृत लिङ्गानुशासन की व्याख्या 'सर्वलक्षणा' या 'सर्वार्थलक्षणा' नाम से सुप्रसिद्ध है। इस व्याख्या के कर्त्ता भट्ट भरद्वाज के आत्मज पृथिवीश्वर थे; यह निष्कर्ष जिन तीन हस्तलेखों के आधार पर महामहोपाध्याय पं० वी० वेङ्कटराम शर्मा ने हर्षवर्द्धन के लिङ्गानुशासन का सम्पादन किया था और मद्रास विश्वविद्यालय से सन् १९३१ में प्रकाशित हुआ था, उन हस्तलेखों की पुष्पिका से ज्ञात होता है। यह चर्चित पृथिवीश्वर मूल ग्रन्थकार के सम-सामयिक थे, ऐसा ग्रन्थ में उद्धृत पद्य से अनुमान किया जाता है; परन्तु जर्मन देशीय पण्डित के द्वारा सङ्कलित अपूर्ण किसी व्याख्याग्रन्थ के आदर्श में व्याख्याकार का नाम भिन्न दृष्टिगोचर होता है। यह चर्चा इस प्रकार है– 'भट्टदीप्तस्वामिसूनोर्बलवागीश्वरस्य शबरस्वामिनः कृतौ हर्षवर्द्धनकृतलिङ्गानुशासनटीकायाम्'। यह नाम का भेद कैसे आया– यह अभी भी सन्दिग्ध है, भिन्न-भिन्न दोनों नामों के बीच वास्तविक रूप से किन्हें गृहीत किया जाय, यह निश्चय करने के लिये कोई ठोस प्रमाण उपलब्ध नहीं है; किन्तु इस लिङ्गानुशासन के ऊपर शबरस्वामी के द्वारा कोई टीका लिखी गयी– यह तथ्य अमरकोशटीका सर्वस्व से ज्ञात होता है। वहाँ मनुष्यवर्ग की ९१वीं कारिका के व्याख्यान में (अनन्तशयन संस्कृत ग्रन्थावलि, ग्रन्थाङ्क-४३) वंद्यघटीय सर्वानन्द ऐसा लिखते हैं– 'सक्थ्यस्थिदधिसृग्व्यक्षि' इत्यादि से इदन्त को भी शबरस्वामी पढ़ते हैं। उणादिसूत्र-वृत्तिकार उज्ज्वल दत्त भी एक स्थान पर शबरस्वामी के वाक्य का उद्धरण देते हैं। वह वाक्य प्रकृत टीका में उपलब्ध नहीं होता।

वैयाकरणों के साम्राज्य-सिंहासन पर विराजित पाणिनि को यथार्थ रूप से पारिभाषित करने में प्राचीन आचार्यों के द्वारा दो द्वार उद्धाटित हैं– एक काशिकाकृत और दूसरा रूपावतारकृत। उनमें वामन-जयादित्य के द्वारा उपनिबद्ध काशिकाप्रस्थान को ही विशेष रूप से आधार लेकर पृथिवीश्वर ने व्याख्याकार्य को सम्पन्न किया है। व्याख्या में पूर्ववर्त्ती आचार्यों के पक्ष-विपक्ष का मत एवं अपने अभिमत-मत को प्रकट किया गया है। तथा च– जहाँ प्रत्ययादि से लिङ्ग का निर्धारण- नियमितीकरण होता है, वहाँ प्रत्ययविधायक शास्त्र काशिका के अभिमत पाठ को उद्धृत कर उदाहरणसहित

साङ्गोपाङ्ग प्रतिपादित करते हैं । सारभूत शब्दों के द्वारा (वाणी से) मूल अर्थ के अनुरूप ही व्याख्या करते हैं; परन्तु लौकिक संस्कृत भाषा के पदों का लिङ्ग-विनिश्चय करने हेतु प्रारम्भ ग्रन्थ के व्याख्यान के लिये तत्पर एक स्थान पर 'धर्म' शब्द की नपुंसकता दिखाने के लिये 'तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्' इस वैदिक-वाक्य को लौकिक संस्कृत के अतिक्रमण करने वाले वाक्य का उदाहरण देते हैं । यह व्याख्याकार का एक साहस ही कहा जायगा ।

–वे० वेङ्कटराम शर्मा

***

(ग) लिङ्गज्ञान-परामर्श

सन्निधाने निमित्तानां किञ्चिदेव प्रवर्त्तकम् ।
यथा तक्षादिशब्दानां लिङ्गेषु नियमस्तथा ।।
भावतत्त्वविदः शिष्टाः शब्दार्थेषु व्यवस्थिताः ।
यद्यद्धर्मेऽङ्गतामेति लिङ्गं तत्तत्प्रचक्षते ।।

प्रस्तुत यह लिङ्गस्वरूप का लक्षण व्याकरण शास्त्र के उपनिषत्स्वरूप 'वाक्यपदीय' में महाभाष्यरूपी अमृत-पान से तृप्त महनीय भर्तृहरि जी के द्वारा विरचित है । यहाँ व्याक-रणाचार्य ने लिङ्ग को पारिभाषित करने में लोकोपयुक्त व्यवहार का अनुवाद करने वाली विवक्षा का ही आश्रय ग्रहण किया है, न कि शब्दप्रयोगवती व्यवस्था का ।

वस्तुतः यह देखा गया है कि सुदूर तक अन्तरित भेद-प्रतिपत्तिप्रयोजक संस्थानविशेष व्यङ्ग्य होने पर ही 'लिङ्ग' नाम प्रथित हुआ है । जैसाकि आप देखते हैं– लोक में प्राणधारियों के मध्य में पुरुष और स्त्री– ये दो प्रकार के व्यवहार ही सुप्रसिद्ध हैं । स्त्री और पुरुष से भिन्न होने के कारण जड़ पदार्थ नपुंसक रूप में प्रसिद्ध हैं । यही संस्थानविशेष से व्यक्त की गयी प्रसिद्धि ही पुंल्लिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग– इन तीन प्रकार के भेदों में हेतु है । यह कैसे ? लौकिक वाच्य पदार्थों के स्त्री०-पुं०-नपुंसक भेद ही पदों में आरोपित होते हैं; यह सामान्य रूप से सभी भाषाओं, विशेष रूप से देशी भाषाओं के सम्प्रदाय हैं । भाष्यकार भी इसी बात को उपश्लोकित = कविता रूप में कहते हैं ।

स्त्री कौन है ? लोकव्यवहार में ये शब्द प्रसिद्ध हैं– स्त्री, पुरुष और नपुंसक । जिन्हें लोक में देखकर यह निश्चय किया जाता है कि 'यह स्त्री है, यह पुरुष है, यह नपुंसक है, वह स्त्री, वह पुरुष, वह नपुंसक' आदि । क्या लोक में यह देखकर निश्चय किया जा सकता है कि यह स्त्रीलिङ्ग है, यह पुंलिङ्ग है अथवा यह नपुंसक लिङ्ग है ? फिर वह क्या है ? इस पर कहा जाता है कि—

स्तनकेशवती नारी लोमशः पुरुषः स्मृतः ।
उभयोरन्तरं यच्च तदभावे नपुंसकम् ।।

अर्थात् स्तन और केश वाली नारी (स्त्री) और रोम से युक्त पुरुष– इन दोनों

में जो अन्तर है, वही स्त्री और पुरुष के स्वरूप का द्योतक है और इन दोनों के अभाव में नपुंसक होते हैं। ऐसी परिस्थिति में वैयाकरणों द्वारा लौकिक लिङ्ग का निर्धारण करना सम्भव नहीं है, अत: अवश्य ही कोई रास्ता खोजना होगा।[१]

लिङ्गस्वरूप के निर्णय में अत्यन्त उलझे हुये महाभाष्यकार जहाँ-तहाँ से प्राचीन आचार्यों से पूर्ण समर्थित वाक्यसमूह को लेकर विमर्श करते हैं और उन पर भली-भाँति विश्लेषण करके 'खट्वा, वृक्ष' शब्दों में स्त्रीलिङ्ग और पुंलिङ्ग का कारण देखते हुये 'उनके अभाव में नपुंसक' इस व्यवहार से नपुंसकत्व का ही उन दोनों में समुचित न्यायत्व को कहा; तथापि संस्कृत में यह वही 'स्तनकेशवती आदि' न्याय दु:खपूर्वक सञ्चरणशील है, यह जानते हुए यह लिङ्ग का लोकाश्रयण भी मुनिवर कात्यायन के अभीष्ट उनके ही वाक्यों के उद्धरण से निरूपण किया कि 'न चैतन्मन्तव्यं स्वमनीषिकयैवोच्यत इति' अर्थात् यह नहीं मानना चाहिये कि 'स्वबुद्धि से ही कहा जाता है'; आचार्य अशेष लिङ्ग का पाठ करेंगे— लिङ्ग के लोकप्रचलित होने के कारण।

महाभाष्यकार ने भी अपने जीवनकाल में किसी लिङ्गानुशासन ग्रन्थ का स्मरण नहीं किया। अत: लिङ्गनिर्धारण हेतु जो नियन्त्रित करने वाली सामान्य व्यवस्था संस्कृत भाषा में प्रचलित है, उसके पदों में अनकत्र व्यभिचार दोष (असंगतिस्वरूप) प्राप्त होता है। कैसे ! वहाँ लिङ्गव्यवस्था कृत्रिमा तथा कष्टप्रदा दिखाई देती है। जरा ध्यान दें— १. शिला, नगरी और भूमि आदि जड़-पदार्थद्योतक शब्द नपुंसक होने के योग्य होने पर भी स्त्रीलिङ्ग होते हैं, उसी प्रकार पाषाण-आहार आदि शब्द पुंल्लिङ्ग दृष्टिगोचर होते हैं। २. भार्या-(पत्नी)-वाचक 'दार' शब्द पुंल्लिङ्ग एवं 'कलत्र' शब्द नपुंसक लिङ्ग माने गये हैं। ३. और क्या, विशेष्यगत लिङ्ग विशेषण में भी आरोपित किया जाता है। जैसे— 'वृक्ष' शब्द विशेष्य नियत पुंलिङ्ग का द्योतक है, तथापि 'बहुवृक्षा पुष्पवाटी' 'बहुवृक्षमुद्यानम्' इत्यादि में विशेषण अवस्था में विशेष्यनिघ्न (विशेष्य के लिङ्गादि का अनुसरण करने वाला)— आश्रित लिङ्ग होता है।

लिङ्ग के निर्धारण में इस प्रकार अनियततारूपी कष्ट को भली-भाँति समझ कर परम्परा को जानने वाले करुणा-वरुणालय प्रतिमूर्त्ति आचार्यों ने प्राचीन संस्कृत वाङ्मयरूपी समुद्र को सभी कसौटियों से कस कर अपनी बुद्धिरूपी मथानी से मथ कर लिङ्गानुशासनरूपी अमृत को सुकुमार बुद्धि वालों के लिये भी, जिससे अनायास ही लिङ्ग-ज्ञान हो जाय, प्राप्त किया है।

---

१. महाभाष्यम् ४।१।३

इस प्रकार स्वाभाविक रूप से दुष्प्राप्य लिङ्ग-निर्णयरूपी महादुर्ग (किला) में सुख-पूर्वक प्रवेश हो जाय, ऐसे विलक्षण एक द्वार को प्राचीन विद्वानों ने उद्घाटित कर दिया है।

आज-कल प्राप्त होने वाले लिङ्गविज्ञानीय ग्रन्थों में महामुनि पाणिनि-प्रवर्त्तित लिङ्गा-नुशासन ही प्रसिद्ध है। उनके अष्टाध्यायी के अङ्गभूत पाँच विशेष रूप— शिक्षा, धातुपाठ, गणपाठ, अक्षरसमाम्नाय और लिङ्गानुशासन, जो कि परिशिष्टों में एक है, वह निःसन्दिग्ध रूप से अत्यन्त प्राचीन है। आज तक हमें लिङ्गतन्त्रसम्बन्धी जिन ग्रन्थों की जानकारी मिली हैं, वे ये हैं—

१. महामुनि पाणिनिप्रोक्त लिङ्गानुशासन, २. आचार्य वररुचिकृत लिङ्गवृत्ति, लिङ्ग-विशेषविधि अथवा लिङ्गानुशासन, ३. विद्यावाचस्पति रामनाथविरचित लिङ्गादि संग्रह टिप्पणी, ४. श्री वामनकृत लिङ्गानुशासन, ५. जैनाचार्य हेमचन्द्रप्रणीत लिङ्गानुशासन, ६. यक्षवर्मकृत उसकी टीका, ७. लिङ्गकारिका (गणरत्नमहोदधि में वर्धमान के द्वारा उद्धृत), ८. लिङ्गकारिका– चन्द्र गोस्वामीप्रणीत– पुरुषोत्तम के द्वारा उद्धृत, ९. लिङ्ग-शास्त्राणि (पञ्चशाश्वत के द्वारा अपने कोश के उपोद्घात में स्मृत), १०. शान्तनवाचार्य द्वारा प्रणीत लिङ्गानुशासन, ११. शाकटायनकृत लिङ्गानुशासन, १२. जयानन्द सूरिकृत लिङ्गानुशासन-वृत्त्युद्धार, १३. हर्षवर्द्धनकृत लिङ्गानुशासन, १४. जैनाचार्य हेमचन्द्रकृत लिङ्गानुशासन-विवरण, १५. वल्लभकृत विवरणव्याख्या, १६. लिङ्गानुशासनवृत्ति– दुर्गकृत (दुर्ग सिंहः ?), १७. बुद्धिसागरकृत लिङ्गानुशासन, १८. नन्दिकृत लिङ्गानुशासन, १९. अरुणदेवकृत लिङ्गानुशासन, २०. भोजदेवकृत लिङ्गानुशासन, २१. लिङ्गनिर्णय, २२. लिङ्गनिर्णयभूषण, २३. लिङ्गप्रबोध।

ऊपर निर्दिष्ट लिङ्गानुशासन के ग्रन्थों में पाणिनीय लिङ्गानुशासन व्याख्यासहित सिद्धान्तकौमुदी के परिशिष्टरूप से बम्बई में प्रकाशित हुआ। उसकी भट्टोत्पल, रामचन्द्र, तारानाथ तर्कवाचस्पति के द्वारा प्रणीत चार भिन्न-भिन्न व्याख्याएँ हैं। वामनकृत लिङ्गानुशासन व्याख्यासहित बरोदा-स्थित राजकीय संस्कृत ग्रन्थावली से प्रकाशित है। आचार्य हेमचन्द्र, वररुचि, शाकटायन एवं हर्षवर्द्धनकृत लिङ्गानुशासन मूलमात्र जर्मन भाषानुवाद के सहित जर्मनदेशीय 'ओट्टो फ्राङ्के' नाम के विद्वान् द्वारा सन् १८९० ई० वर्ष में अपने ही देश में मुद्रित कर प्रकाशित किया गया।

***

(घ) हर्षवर्द्धन और उनका लिङ्गानुशासन

इस लिङ्गानुशासन के रचयिता श्रीवर्द्धन के आत्मज हर्षवर्द्धन हैं और यह लिङ्गानुशासन व्याडि-शङ्कर-चन्द्र-वररुचि-विद्यानिधि और महर्षि पाणिनि द्वारा विरचित लिङ्गविधानों की भली-भाँति समीक्षा करके बनाया गया है; जैसाकि ग्रन्थ के अन्तिम पद्य से विदित होता है, वह पद्य इस प्रकार है—

व्याडेः शङ्करचन्द्रयोर्वररुचेर्विद्यानिधेः पाणिनेः
सूक्तान् लिङ्गविधीन् विचार्य सुगमं श्रीवर्द्धनस्यात्मजः ।
श्रव्यं व्यापि च हर्षवर्द्धन इदं स्पष्टीकृतप्रत्ययं
लिङ्गानामनुशासनं रचितवानत्यर्थसंसिद्धये ।।

इस पद्य में चर्चित लिङ्गविज्ञानीय ग्रन्थों में कुछ तो दीमक लग जाने से नष्ट हो गये और कुछ सुमेरु पर्वत के समान आज भी अडिग हैं, सुरक्षित हैं। दाक्षीपुत्र पाणिनि के तन्त्र को दाक्षायण होने के कारण अपनी माता के भ्रातृव्य (भतीजा) आचार्य व्याडि ने एक लाख श्लोकों वाले 'संग्रह' नामक ग्रन्थ के द्वारा विस्तार किया था, ऐसी जनश्रुति है। ऋग्वेद के प्रातिशाख्यनिर्माता भगवान् शौनक भी व्याडि का अनेक बार स्मरण करते हैं। उन्हें विकृतवती नामक किसी ग्रन्थ का कर्ता मानकर स्मरण किया गया है। व्याडि के ग्रन्थ तो लुप्त हो चुके हैं।

विशेष रूप से यह हर्षवर्द्धन कहाँ के थे ? कब हुए ? इत्यादि तो अज्ञात ही हैं; परन्तु जर्मन देश के उक्त पण्डित ने और उनके पक्षपाती अन्य विद्वानों के 'श्री' पद से अलंकृत 'श्रीवर्द्धन' पद वाले पद्य को देखा; अतः एकदेशग्रहण न्याय से प्रभाकरवर्द्धन इस अभिप्राय से निरूपण करते हुए वर्णाश्रम धर्मचक्र प्रवर्तन करने वाले परमादित्य (सूर्य) के भक्त परमभट्टारक महाराजाधिराज श्रीप्रभाकरवर्द्धन, उनके पुत्र परम आज्ञाकारी एवं परम सौगत बुद्ध के समान दूसरों के उपकार करने में एकनिष्ठ (तत्पर), सन्मार्ग से उपार्जित अनेक प्रकार के धन तथा भूमि दान करके याचकों को सन्तुष्ट करने वाले श्रीयशोमती में उत्पन्न परमभट्टारक महाराजाधिराज श्री राज्यवर्धन, उनके अनुज (छोटे भाई) तथा पादसेवक परममाहेश्वर महेश्वर (महादेव) के समान सभी प्राणियों पर दया करने वाले, धवल यश के विस्तार से समस्त भूमण्डल को

आलोकित करने वाले परमभट्टारक महाराजाधिराज 'श्रीहर्ष' यह ताम्र-शासनपत्रों में चर्चित पहले स्थाण्वीश्वराधिपति, तत्पश्चात् कान्यकुब्जाधिपति हुए- ऐसा विज्ञात है। इतना ही नहीं; प्रसिद्ध गद्यकवि बाणभट्ट के आश्रयदाता श्रीहर्षदेव थे, जिनका राज्य-काल (ख्रिस्ताब्द ६०२-६४७) संस्कृत साहित्य का सुवर्णकाल था, यह ऐतिहासिक विद्वानों ने सुनिश्चित किया है। वह ही इस लिङ्गानुशासन का कर्ता है, यह निवेदन किया। यूरोपदेशीय संस्कृत-पण्डित कीथ महाशय ने भी इसी आशय को स्वीकार कर, तत्काल प्रसिद्धि को प्राप्त अपने संस्कृत भाषा साहित्य चरित्र में प्रस्तुत किया।

किन्तु यह बात यहाँ चिन्तनीय है कि लिङ्गानुशासन की व्याख्या के उपोद्घात में व्याख्याकार पृथिवीश्वर मूल ग्रन्थ के रचयिता हर्षवर्द्धन के द्वारा विनम्रता से पैर छूकर प्रार्थना करने पर लिङ्गानुशासन की व्याख्या करना प्रारम्भ किया गया है। जैसाकि प्रस्तुत है—

प्रार्थितः शास्त्रकारेण पादग्रहणपूर्वकम्।
लिङ्गानुशासनव्याख्यां करोति पृथिवीश्वरः॥

महान् उन्नतशील एवं महिमा से मण्डित किसी सार्वभौम ने अपने प्रभाव और स्थान को तिरस्कृत कर एक पण्डित से अपने ग्रन्थ की व्याख्या करने के लिये पैर पकड़कर प्रार्थना की थी, जो कि काव्य के यथार्थ अर्थ का उपपादन करने वाले काव्यप्रकाशकार मम्मट के 'श्रीहर्षादेर्धावकादीनामिव धनम्' इस वाक्य के समान असमञ्जस को उत्पन्न करने वाला अव्यावहारिक है।

अतः नरवर्द्धन के वंश में उत्पन्न हर्षवर्द्धन चक्रवर्ती इस ग्रन्थ के कर्ता हो सकते हैं या नहीं- इस संशय का निश्चायक कोई दूसरा प्रमाण नहीं है और कीत् महाशय से इस विषय में हम लोगों ने पत्र द्वारा जिज्ञासा की तो उन्होंने विना साधक या बाधक प्रमाण के इस प्रकार का समाधान भेजा—

कान्यकुब्जाधिपति हर्षवर्द्धन पर लिङ्गानुशासन के कर्तृत्व का अध्यारोप विन्टरनिट्स् महाशय के द्वारा स्वीकृत होने पर भी आफ्रड विद्वान् ने ग्रहण नहीं किया। अतः यहाँ पिता का नाम अस्त-व्यस्त होने के कारण कुछ निश्चय नहीं हो सकता। इसी कारण को लेकर आफ्रड महाशय कान्यकुब्जाधिपति को इसके कर्ता के रूप में स्वीकार नहीं करते (आपने इस विषय में कोई नया निर्णायक प्रमाण यदि प्राप्त किया हो तो उसके विना)। हो सकता है कि 'श्रीवर्द्धन' यह प्रभाकरवर्द्धन का प्रशंसात्मक स्वरूप हो- इसी सम्भावना से यह संवाद मानता हूँ, असामयिक नहीं है।

***

(ङ) लिङ्गानुशासन किसे कहते हैं !

'लिङ्गानुशासन' उसका नाम है, जिससे किसी शब्दविशेष का अमुक (नामनिर्देशपूर्वक) लिङ्ग होगा– यह निर्णय हो सके । अथवा स्त्री-पुरुष-नपुंसक लिङ्गों का अधिकृत (सुनिश्चित) अनुशासन जहाँ हो, अथवा लिङ्ग जिससे शासित हो, वह लिङ्गानुशासन है । ङीप्-टाप् आदि प्रत्ययों से जिसे चिह्नित किया जाय, व्यक्त किया जाय, वह स्त्रीलिङ्ग, पुंल्लिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग के नाम से प्रथित होता है । जिससे लिङ्ग का अनुशासन करते हैं, वह शास्त्र (शासक) लिङ्गानुशासन है । और भी– कहा जाता है कि— लिङ्गानुशासन वाणी के मलों का चिकित्सक है । पाणिनीय व्याकरण तन्त्र प्रस्थान को ही प्रधान मान कर पूर्वाचार्यों ने लिङ्गनिर्णय का विधान किया है । लिङ्गों के अनुशासन (नियन्त्रित) करने में उन्होंने महान् प्रयत्न किया है ।

भूमि-विद्युत्-लता और सरितों (नदियों) का पर्यायवाची शब्द स्त्रीलिङ्ग, पर्वत-वृक्ष-समुद्र आदि के पर्याय पुंल्लिङ्ग, मुख-जल-कमल आदि के पर्याय नपुंसक लिङ्ग, घञ् प्रत्ययान्त शब्द पुंल्लिङ्ग, क्तिन् प्रत्ययान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग, ल्युट् प्रत्ययान्त नपुंसक लिङ्ग इत्यादि आरोहावरोह क्रम से ऊपर-नीचे, कुछ शब्दों का लिङ्गनिर्णय सामान्य नियमों से, कहीं किसी अंश में देशी भाषा के स्वरूप से, कहीं सामान्य नियमों में अन्तर्भुक्त न होने वाले शब्दों की अलग गणना से और किन्हीं सरल मार्गों से लिङ्ग सुनिश्चित किये गये । और इसी प्रस्थान (उपक्रम) को सामान्य रूप से विभिन्न मार्गों का अवलम्बन कर प्राय: सभी आचार्यों ने मतभेद-प्रदर्शनपूर्वक अपने ग्रन्थों में समादृत किया ।

अब यहाँ एक प्रश्न यह उठता है कि व्याडिप्रभृति आचार्यों के द्वारा निर्दिष्ट एवं विरचित लिङ्गानुशासनविधि के जागरूक रहने पर हर्षवर्द्धन ने लिङ्गों का अनुशासन पुन: क्यों प्रवर्तित किया, इस आकांक्षित प्रश्न के उत्तर में यह कहा जाता है कि ग्रन्थकार ने पूर्वरचित ग्रन्थों से अपने ग्रन्थ की मौलिकता और उपादेयता के सम्बन्ध में प्रारम्भिक द्वितीय पद्य में स्पष्ट किया है । वह पद्य इस प्रकार है—

मनोहरतमैर्वृत्तैः सज्जनानन्दवर्धनम् ।
लिङ्गानुशासनं स्पष्टं यथाबुद्धि विधीयते ।।

इस विषय में ग्रन्थकार का कहना है कि पूर्वाचार्यों– व्याडि, पाणिनिप्रभृति

आचार्यों के द्वारा सूत्ररूप में ग्रन्थविस्तर से लिङ्गों का अनुशासन होने से अनायासपूर्वक उन्हें यथावत् ग्रहण करना समयसाध्य एवं क्लिष्ट है। अत: मैं सुखपूर्वक लिङ्गज्ञान करने हेतु, विविध प्रकार के मनोरम एवं हृदयग्राही पद्यों को अपना तथा सहृदय पाठकों एवं अध्येताओं द्वारा सुखपूर्वक ग्रहण करने हेतु पृथक् प्रकरणादि से युक्त प्रवचन कर रहा हूँ।

उपर्युक्त पद्य में 'सज्जनानन्दवर्धन' यह सार्थक विशेषण दिया गया है। जिस प्रकार हर्षवर्द्धन सज्जनों के सहृदयों के आनन्द को बढ़ाने वाले हैं, उसी प्रकार उनका लिङ्गानुशासन भी आनन्दवर्धक हो, इसी अभिप्राय से प्रयुक्त वह विशेषण है।

हर्षवर्द्धन ने कुल मिलाकर ९७ कारिकाओं द्वारा अतिशय महत्त्वपूर्ण वाणीविलास का लिङ्गविधान का प्रवचन किया। यहाँ जो शब्द अकथित रह गये हैं, उन्हें लोक-व्यवहार से विद्वानों को जानना चाहिये; क्योंकि महाभाष्यकार का बार बार कहना है कि 'लिङ्गमशिष्यं लोकाश्रयत्वाल्लिङ्गस्य' अर्थात् लिङ्गनिर्धारण अशासनीय है, लिङ्ग का लोकवाणी पर आश्रित रहने से।

***

परिशिष्ट– ३

'लिङ्गवचनविचार' ग्रन्थ की संस्कृत भूमिका का हिन्दी रूपान्तरण

अनेकार्थक लिङ्ग-शब्द के विचारणीय विषय– विचारणीय लिङ्गस्वरूप के पुंस्त्वादि रूप के लौकिक तथा शास्त्रीय दो भेद होते हैं। वहाँ लौकिक लिङ्ग चेतनमात्रवाचक ब्राह्मण कुमार आदि वाच्य होते हैं। अत एव यहाँ 'ब्राह्मणोऽयं कुमारः' इत्यादि में स्त्रीलिङ्ग की व्यावृत्ति हो जाती है।

शास्त्रीय लिङ्ग इससे कुछ विलक्षण ही है। व्याकरण शास्त्र में 'तस्माच्छसो नः पुंसि' इस पाणिनीय सूत्र में निमित्तता से आश्रयण हुआ है। यहाँ लौकिक लिङ्ग निमित्त-रूप में नहीं ठहर सकता, 'घटान्' इत्यादि में नत्वाद्यभाव की सम्भावना है।

लौकिक पुंस्त्वादि में लिङ्गत्व निर्वचन– 'घट' शब्द पुंलिङ्ग 'अथ लिङ्गानुशासनम्, सम्पूर्णमुच्यते वर्गैर्नामलिङ्गानुशासनम्' (अमर०) इत्यादि व्यवहार से शास्त्रीय पुंस्त्वादि में लिङ्ग पदवाच्यत्व की अवधारणा तो की जाती है, किन्तु लौकिक पुंस्त्वादि में किस प्रकार लिङ्ग शब्द की वाच्यता हो सकती है ? इस विषय में कहा जाता है—

पुंस्त्वादि लौकिकं पुंस्त्रीक्लीबानां लक्षणं यतः।
तेनोच्यते लिङ्गमिति लिङ्गलक्षणवाचि यत् ॥[1]

लौकिक पुंस्त्व, स्त्रीत्व और नपुंसकत्व लिङ्गों में लक्षणस्वरूप लिङ्गत्व अक्षत ही है। लौकिक पुंस्त्वादि से पुरुष-स्त्री-नपुंसकरूप व्यक्तिविशेष लक्षित होते हैं। इस प्रकार लौकिक और शास्त्रीय दोनों ही पुंस्त्वादिक लिङ्ग कहे जाते हैं।

लौकिक पुंस्त्वादि के लक्षण–

पुंस्त्वं तु लौकिकत्वं मेढ्रवत्त्वं स्त्रीत्वं सयोनिता।
अयोग्येन्द्रिययोगित्वं क्लीबत्वमवधार्यताम् ॥[2]

---

१. लिङ्गवचनविचार, पृ०-२, श्लो०-५।२

२. लिङ्गवचनविचार, पृ०-२, श्लो०-६

अर्थात् पुरुषचिह्न (लिङ्ग) से युक्त होना पुंस्त्व लौकिक लिङ्ग माना जाता है तथा योनि (जननेन्द्रिय) सहित होना स्त्रीत्व लौकिक लिङ्ग मानना चाहिये और जिस व्यक्ति में दोनों चिह्नों में अयोग्यता है अर्थात् न पुरुष का प्रतीकचिह्न है और न ही स्त्रीत्व का प्रतीकचिह्न है, यदि है भी तो अयोग्य (व्यवहार में असामर्थ्य) है, उसे लौकिक नपुंसक लिङ्ग जानना चाहिये। अब शास्त्रीय पुंस्त्वादि के लक्षण प्रसंगप्राप्त कहे जाते हैं—

साङ्ख्यप्रसिद्धसत्त्वादेर्लिङ्गं परिणतिर्मतम् ।
शास्त्रतो ज्ञायते यस्मात्ततः शास्त्रीयमुच्यते ।।
तत्रोपचयभागो यस्तत् पुंस्त्वमभिधीयते ।
स्त्रीत्वं त्वपचयो भागः साम्यं क्लीबत्वमुच्यते ।।
केवलं शास्त्रकार्यार्थमाश्रितं शाब्दिकैर्बुधैः ।।[१]

अर्थात् सांख्य शास्त्र के प्रसिद्ध सत्त्वादि से लिङ्ग की परिणति (परिणाम) मानी गयी है। यतः शास्त्र से उसका ज्ञान होता है; अतः उसे शास्त्रीय लिङ्ग कहा जाता है।

यहाँ पर यह विमर्श किया जाता है कि 'ब्राह्मणोऽयम्, ब्राह्मणीयं' इत्यादि में शब्दशक्ति से प्रतीयमान लौकिक लिङ्ग भी 'तस्माच्छसो नः पुंसि[२], स्त्रियाम्[३], स्वमोर्नपुंसकम्'[४] व्याकरण के इन पाणिनिसूत्रों में निमित्त नहीं है। 'घटान्, खट्वा, मधु' आदि प्रयोगों में 'न' आदेश, टाप् प्रत्यय, लुक् आदि के अभावप्रसङ्ग से, किन्तु उन लौकिक लिङ्गों से विलक्षण और कुछ दूसरा ही है। जैसाकि सरूपसूत्र के भाष्य में कहा गया है— 'न वैयाकरणैः शक्यं लौकिकं लिङ्गमाश्रयितुम्। अवश्यं कश्चित् स्वकृतान्त आस्थेयः'। आशय यह है कि वैयाकरणों के द्वारा लौकिक लिङ्ग का आश्रय लेना शक्य नहीं है, अवश्य ही कोई अपने द्वारा कृत उपाय सोचना चाहिये। यह 'स्वकृतान्त' प्रयास क्या है ? तो देखिये, वह लक्षण 'संस्त्यानप्रसवौ लिङ्गमिति'। इसका अर्थ है कि 'संस्त्यान' सत्त्वादि गुणों के उपचय-(समृद्धि)-रूप परिणाम और 'प्रसव' अपचय का परिणाम है। इन दोनों से संपृक्त द्वयात्मक जो लिङ्ग वैयाकरणों के द्वारा शास्त्रों में निमित्त आश्रय लेना चाहिये।

---

१. लिङ्गवचनविचार, पृ०-२, श्लो०-७।८
२. अष्टाध्यायी (सिद्धान्तकौमदी)-६।१।१०३
३. अष्टाध्यायी (सिद्धान्तकौमदी)-४।१।२
४. अष्टाध्यायी (सिद्धान्तकौमदी)-७।१।२३

निष्कर्ष यह हुआ कि उपचय पुंस्त्व लिङ्ग है और अपचय स्त्रीत्व लिङ्गद्योतक। इस प्रकार शास्त्रीय पुंस्त्व और स्त्रीत्व का निरूपण किया गया।

अब यह विचार किया जाय कि शास्त्रीय नपुंसकत्व क्या है ? कुछ मनीषी विद्वानों का मत है कि सत्त्व-रज और तम- इन तीन गुणों के उपचय-अपचय और साम्य क्रमशः पुंस्त्व-स्त्रीत्व-नपुंसक लिङ्ग के द्योतक हैं और कुछ विद्वानों का मत है कि सत्त्वादि गुणों के बीच में किसी गुण का उपचय पुंस्त्व, अपचय स्त्रीत्व और साम्य नपुंसकत्व, न कि तीनों गुणों का। उसके साम्य में प्रलय ही सिद्धान्तित हैं— ऐसा कहते हैं। कुछ लोग तो ऐसा भी कहते हैं कि साम्य नपुंसक नहीं है; अपितु स्थिति है।

वस्तुतः सत्त्व-रज-तम गुणों के मध्य में किसी गुण के उपचय अंश पुंस्त्व और अपचय अंश स्त्रीत्व- यह तो ठीक ही है। नपुंसकता तो वहाँ किसी गुण की साम्यावस्था अर्थात् उपचय-अपचय से रहित होने से सम परिणाम वाला होता है। जैसाकि सरूपसूत्रभाष्य-प्रदीप में आचार्य कैयट ने कहा है—

'गुणानां सत्त्वरजस्तमः परिणामरूपाणां शब्दादीनां वृद्धिह्रासमध्यमावस्थाः शब्दैकगोचरा लिङ्गत्वेन परिगृह्यन्ते इति'।

इसका आशय यह है कि सांख्य सिद्धान्त के अनुसार से सभी पदार्थ प्रतिक्षण परिणमित होने वाले तीन गुणों के संघात रूप— पुरुष से भिन्न हैं। वहाँ किसी का वृद्धिरूप परिणाम, किसी का ह्रासरूप परिणाम और किसी का तो वृद्धि और ह्रास से रहित सम परिणाम दीप के समान नियत है। इस प्रकार के गुण-परिणाम ही उन-उन शब्दमात्र द्वारा जानने योग्य (वेद्य) होते हैं। जो अत्यन्त सूक्ष्म होने के कारण प्रमाणान्तर से दुरधिगम (कठिनाई से प्राप्तव्य) लिङ्गत्व रूप से वैयाकरण स्वीकार करते हैं। इससे 'रामस्य दारा मैथिली कुलरत्नमिति' इस वाक्य में एक मैथिली पदार्थ में एक साथ पुंस्त्व, स्त्रीत्व और नपुंसकत्व- इन तीनों लिङ्गों की प्रतीति होती है। लौकिक लिङ्गपरिग्रह में तो उस प्रकार के पुंस्त्वादि का एक साथ या एक स्थान पर समावेश असम्भव होने से उसकी अनुपपत्ति (अप्राप्ति) होगी और तटादिकों में तो किसी भी वैसे लिङ्ग के असद्भाव से (नहीं रहने से) 'तटी-तटम्' इत्यादि में तत्प्रयुक्त शास्त्रीय कार्य होना (अशक्य) असम्भव ही है।

अब यहाँ यह निष्कर्ष निकलता है कि सत्त्व-रज-तम आदि गुण-परिणाम शास्त्रीय लिंङ्ग है। उसमें विशेष वृत्ति का परिणाम पुंस्त्व है। ह्रास परिणाम स्त्रीत्व है और समतावस्था में जो परिणाम निकलता है, वह नपुंसकत्व है। अतः यह मत सुदृढ़ हुआ

कि गुण-परिणाम के जो सामान्य धर्म हैं, वही लिङ्गत्व है। उसमें व्याप्य रहने वाले पुंस्त्वादि हैं। इस सन्दर्भ में सांख्य-व्याकरण-न्यायादि दर्शनों में भी ऊहापोहपूर्वक विचार किया गया है। विशेष द्रष्टव्य– लिङ्गवचनविचार– पृ०, ४-६।

पुंस्त्वादि शब्द की व्युत्पत्ति– 'पूञो डुम्सुन्' इस औणादिक सूत्र के द्वारा 'पुनाति' इस विग्रह में 'पुम्स' शब्द सिद्ध होता है और उसका रूप 'पुमान्-पुमांसौ' इत्यादि विभक्त्यन्त रूप होते हैं। वहाँ 'पुनाति इति' विग्रहमात्र है, न कि उसके अर्थ का अनुगम है। इसका प्रवृत्तिनिमित्त ही कथित लक्षण लौकिक और शास्त्रीय पुंस्त्व है। व्युत्पत्तिनिमित्त अलग होता है और प्रवृत्तिनिमित्त अलग— 'अन्यद्धि व्युत्पत्तिनिमित्तम् अन्यत्प्रवृत्ति-निमित्तमिति'।

सरूपसूत्रभाष्य में तो 'लोके कर्तृसाधनः सूते इति पुमान् , सूतेः सप्' ऐसा कहा गया है। इसके अनुसार 'सू' धातु से कर्त्ता में 'कर्तरि डुम् सुनि' धातु के सकार का पकारादेश होने पर 'पुम्स' शब्द बनता है। यहाँ 'सूते' इसका 'योनिरूपे आधारे शुक्रं त्यजतीत्यर्थः' अर्थात् योनिरूप आधार में शुक्र को छोड़ता है– यह अर्थ हुआ। इस प्रकार उद्योत में नागेशजी ने कहा है; परन्तु इस प्रकार के साधन होने पर भी 'पुम्स' शब्द का पूर्वोक्त प्रवृत्तिनिमित्त ही मानना चाहिये, न कि शुक्रत्यागकर्तृत्व को। अत एव बालक में भी 'पुमानयं'– यह पुरुष है, ऐसा व्यवहार होता है।

'स्त्री' शब्द तो संघातार्थक 'स्त्यै' धातु से अधिकरण में 'ड्रट्' प्रत्यय करने पर सिद्ध होता है। 'स्त्यायतः सङ्घीभवतः शुक्ररजसी यस्यां सा स्त्रीति' अर्थात् जिसमें या जहाँ शुक्र (पुरुष का) और रज (स्त्री का) एकत्रित होते हों, वह स्त्री है– ऐसा विग्रह होगा। इसका भी पूर्वोक्त ही प्रवृत्तिनिमित्त जानना चाहिये।

नपुंसक शब्द की व्युत्पत्ति तो जहाँ न स्त्रीत्व हो और न पुंस्त्व हो, वहाँ 'न भ्राण्न-पान्नवेदानासत्यानमुचिनकुलनखनपुंसकनक्षत्रनक्रनाकेषु प्रकृत्या'[१] (न स्त्री न पुमान् स्त्री-पुंसकयोः पुंस्कभावो निपातनात्) इस सूत्र से निपातन से स्त्री-पुंस का पुंसक आदेश हुआ, यहाँ प्रकृतिभाव से नलोप का अभाव है। इसका भी पूर्वोक्त ही प्रवृत्तिनिमित्त है।

लिङ्ग का प्रसिद्धत्व और अप्रसिद्धत्व जानने (ज्ञान) का उपाय– इस विषय में 'लिङ्गवचनविचार' में कहा गया है कि—

---

१. अष्टाध्यायी (सिद्धान्तकौमुदी– तत्पुरुष समास प्रकरण)-६।३।७५

लिङ्गे प्रसिद्धिविज्ञानं नामलिङ्गानुशासनात् ।
तत्तल्लिङ्गे प्रयोगाणां दर्शनादपि जायते ।।[१]

इसका आशय यह है कि कोष और व्याकरण में उन-उन लिङ्गों में बोधकत्व जो शब्द कहे गये हैं, उन्हें प्रसिद्ध लिङ्गों में ही प्रयोग करना चाहिये और प्रसिद्धि वहाँ मानी जायगी, जहाँ पुराण-इतिहास-प्राचीन निबन्ध-काव्य-नाटक और आख्यायिकाओं में जिनका प्रचुर प्रयोग हुआ हो । यह सम्भव नहीं है कि व्याकरण और कोष में कथित लिङ्ग ही सर्वत्र प्रसिद्ध हों । जैसे 'अर्द्धर्चाः पुंसि च'[२] इस सूत्र से अर्द्धर्चादि का पुंस्त्व और नपुंसकत्व दोनों अनुशिष्ट (स्वीकृत) है, किन्तु अर्द्धर्चादि गण में शरीर-घृत आदि भी पठित हैं; लेकिन उनका नपुंसक लिङ्ग में ही प्रयोग देखा जाता है, पुंल्लिङ्ग में नहीं । उनका पुंस्त्व अप्रसिद्ध है; अतः उनका वहाँ प्रयोग नहीं करना चाहिये । यही कारण है कि अमरसिंह ने उनका नपुंसकत्व प्रयोग ही सिद्ध किया ।

यदि ऐसा है तो उनका अर्द्धर्चादि में पाठ उचित नहीं है क्या ? नहीं, ऐसा नहीं; बल्कि उचित ही है; क्योंकि वे लोक और वेद में सामान्य स्वरूप में हैं । अब थोड़ा विचार करें । शब्दानुशासन के व्याख्यान में किन शब्दों का अनुशासन होगा ? यह पूछने पर 'लौकिक और वैदिक शब्दों का'– यही भाष्यकार ने कहा है । अमरसिंह ने भी यही कहा है—

अर्धर्चादौ घृतादीनां पुंस्त्वाद्यं वैदिकं स्मृतम् ।
तन्नोक्तमिह लोकेऽपि तच्चेदस्त्यस्तु शेषवत् ।।

इसी प्रकार 'वा पुंसि पद्मम्' इत्यादि से पद्मादि की पुंस्त्व शक्ति भी कही गयी है; परन्तु पुंस्त्व तो उसका अप्रसिद्ध ही है । कोष भी प्रायः करके लोक-वेद में साधारण शब्द का विषय है; अतः पद्मादि का पुंस्त्व शक्ति का कथन व्यर्थ नहीं है ।

यह विषय लिङ्गभिन्न अर्थ में सम्भव है । जैसे कि वे शब्द, जिनका तत्-तत् अर्थ में नाना कोषों में प्रतिपादित होने पर भी प्रसिद्धि होने पर ही प्रयोग करना चाहिये, जैसा कि हेमचन्द्र कोष में कहा गया है—

क्रोडा हारा चा दारा च त्रय एते यथाक्रमम् ।
क्रोडे हारे च दारेषु शब्दाः प्रोक्ताः मनीषिभिः ।।

---

१. लिङ्गवचनविचार-१७

२. अष्टाध्यायी (सिद्धान्तकौमुदी–तत्पुरुष समास प्रकरण)-२।४।३१

यहाँ 'हार-दार' शब्द टाप् प्रत्यय वाले भी कहे गये हैं; परन्तु दोनों का अटाबन्त प्रयोग ही प्राप्त है । अटाबन्त = टाप् प्रत्ययरहित । हारा = हार, दारा = दार; जैसे कि किसी कवि का यह प्रयोग अटाबन्त है—

हारो नारोपितः कण्ठे मया विश्लेषभीरुणा ।
इदानीमन्तरे जाताः पर्वताः सरितो द्रुमाः ।।

नमयति धनुरैशं यस्तदारोपणेन त्रिभुवनजयलक्ष्मी मैथिली तस्य दाराः ।

इस उदाहरण का आशय यह हुआ कि 'हारा' और 'दारा' शब्द अप्रयुक्त एवं अप्रसिद्ध होने से प्रयोग नहीं करना चाहिये । इसी प्रकार अन्य शब्दों के विषय में भी अनुसन्धान करना चाहिये ।

यद्यपि अनेक ग्रन्थों के अवलोकनपूर्वक किस शब्द का क्या लिङ्ग होगा, वह प्रसिद्ध है अथवा अप्रसिद्ध- यह निर्णय अत्यधिक परिश्रम एवं बहु कालसापेक्ष है; फिर भी अमर सिंहविरचित 'अमरकोष' नाम से सुप्रसिद्ध नामलिङ्गानुशासन से यह निर्णय करना आसान होगा । उसमें जो शब्द जिस अर्थ में प्रसिद्ध हैं, वे उसी अर्थ में प्रतिपादित हैं । जिनका जो लिङ्ग प्रसिद्ध है, उनका वही लिङ्ग कहा गया है ।

अमरकोष में भी दैवत-पद्मादि का पुंस्त्व प्रतिपादित है, किन्तु वह प्रसिद्ध नहीं है । इसलिये अमरकोष में उक्त शब्दों के, उसके द्वारा कथित सकल लिङ्गों में प्रयोग योग्य नहीं है— यदि ऐसा कहा जाय तो नहीं । अमर सिंह के द्वारा दैवतादि का पुंस्त्वादि प्रसिद्ध नहीं है, यह बात स्वयं शैली द्वारा सूचित है ।

अमरकोष की लिङ्गज्ञान-शैली- यह अमरकोष (अमरसिंह कोषकार) की लिङ्गज्ञान-शैली पाँच प्रकार से कही गयी है— १. रूपभेद से, २. साहचर्य से, ३. विशेष उक्ति से, ४. 'दोनों का' यह कहने से, ५. यत्किञ्चित् लिङ्गनिषेधमुख से जो लिङ्ग बोधित होता है, वह प्रसिद्ध है ।

यहाँ जो रूपभेद से नहीं कहा गया है बल्कि शब्द के सहित 'पुंसि' इत्यादि से बोधित होता है, वह अप्रसिद्ध है और जिसका जो लिङ्ग दूसरे कोषों में कहे जाने पर भी स्वयं बोधित नहीं होता, वह लिङ्ग भी अप्रसिद्ध ही है ।

१. अब रूपभेद से, जैसे— 'मेघपुष्पं घनरसः' । २. साहचर्य से, जैसे— 'नीवृज्जनपदौ' । यहाँ 'जनपद' शब्द के रूपविशेष से पुंस्त्वनिर्णय से तथा उसके साहचर्य से 'नीवृत्' पुंल्लिङ्ग है- यह निर्णय हुआ । ३. विशेषोक्ति से, जैसे— पुंल्लिङ्ग

और नपुंसक लिङ्ग में— काकोल-कालकूट-हलाहल, स्त्रीलिङ्ग में— प्रावृट् । ४. 'द्वयोः' इस कथन से, जैसे— 'द्वयोः पाटलिः' । 'मिथुने तु द्वयोरिति' यह कहने से 'द्वयोः' इससे स्त्री-पुंस दोनों का ग्रहण होगा । ५. निषेधमुख से, जैसे— 'अर्गलं न ना धर्मोऽस्त्री' । यहाँ पुंस्त्व के निषेध से अवशिष्ट स्त्रीत्व-नपुंसकत्व का ग्रहण होगा और स्त्रीत्व के निषेध से अवशिष्ट पुंस्त्व-नपुंसकत्व का निर्णय होगा, 'निषिद्धलिङ्गं शेषार्थम्' ऐसा कहने से ।

और अब 'दैवतानि पुंसि वा' यहाँ 'दैवत' शब्द के पुंस्त्व स्वरूप से ही परिज्ञात 'दैवत' 'पुंसि वा इति' कहने से अप्रसिद्ध है– ऐसा सूचित होता है । इसी प्रकार 'वा पुंसि पद्म' इत्यादि में भी जानना चाहिये । विकल्प के द्वारा प्रतिबोधित लिङ्गों के मध्य में जो लिङ्गस्वरूप से अर्थात् तत्प्रयुक्त कार्य के द्वारा जाने जाते हैं, वही प्रसिद्ध हैं ।

दोनों के प्रसिद्ध होने पर 'पुं-नपुंसक' ऐसा कहना चाहिये अथवा 'अस्त्रियाम्' कहने से भी वही बोध होगा । अनुक्त होने पर जैसे 'शरीरं वर्ष्म विग्रहः' यहाँ 'शरीर' शब्द का पुंस्त्व नहीं कहा गया है तथा 'अर्धर्चा' यहाँ शास्त्र के द्वारा कहे जाने पर प्रसिद्ध नहीं है । इसी प्रकार 'नीवृत्' शब्द का दूसरे कोष में कथित स्त्रीत्व प्रसिद्ध नहीं है, अमर सिंह के द्वारा उपेक्षित होने से ।

संस्कृत वाक्यों में लिङ्ग-संख्या के विषय में विविध वैचित्र्य होने से अनेक प्रकार का सन्देह उत्पन्न होना स्वाभाविक है । प्रथमतः लिङ्गनिर्धारण के विषय में किसी नपुंसक व्यक्ति में 'यह ब्राह्मण' यह वाक्य प्रयोग करना चाहिये अथवा 'इयं ब्राह्मणी' यह । सन्देह का कारण तो तब उत्पन्न होता है, जब पुरुष (पुंल्लिङ्ग) में लौकिक स्त्रीत्व और स्त्री में लौकिक पुंस्त्व तथा 'न स्त्री न पुमान्' इस विग्रह के अनुसार नपुंसक में लौकिक पुंस्त्व और स्त्रीत्व– इन दोनों का अभाव है और ब्राह्मणादि शब्द लौकिक पुंस्त्व और स्त्रीत्व के ही बोधक हैं; न कि लौकिक नपुंसकत्व के ।

इस प्रकार व्याकरण में 'पुंसि' इत्यादि शब्द लेकर कार्य किये जाते हैं । वहाँ यदि पुंस्त्वादिक लौकिक ग्रहण किया जाता है तो 'घटान्' इत्यादि में नहीं होगा और यदि चेतन (सजीव) या अचेतन (निर्जीव) रूपसामान्य को शास्त्रीय ही पुंस्त्वादि ग्रहण किया जाता है तो ब्राह्मणी से पुरुष का भी बोध होगा । अतः व्याकरण शास्त्र में निमित्तभूत पुंस्त्वादि लौकिक अथवा शास्त्रीय ग्रहण करना चाहिये– यह दूसरा सन्देह का स्थान है ।

इसी प्रकार 'स्त्रीस्वामिकं धनम्' यह वाक्य शुद्ध है अथवा 'स्त्रीस्वामिनीकम्' अथवा दोनों ही शुद्ध हैं, यह भी एक संशय का स्थान है । इसी प्रकार और भी हो

सकते हैं। संख्या के विषय में भी यही सन्देहास्पद स्थिति है। जैसे कि 'इयं रामस्य दारा' यह वाक्य शुद्ध है अथवा 'इमे रामस्य दारा' यह।

और भी देखें— 'नारीणां स्तनाविति' यह वाक्य ठीक है अथवा 'किं वा नारीणां स्तना' यह अथवा दोनों।

इसी प्रकार 'गावो धनम्, गावो धनानि' इन दोनों वाक्यों में पहला वाक्य ठीक है या दूसरा अथवा दोनों– इस प्रकार के अन्य बहुत से सन्देह उत्पन्न होते हैं। सन्देहग्रसित व्यक्ति संस्कृत वाणी से यथोचित रूप से न तो बोल सकते हैं और न ही लिख सकते हैं।

इनके अतिरिक्त लिङ्गादि के विषय में विशेष रूप से बहुत-सी बातें जानने योग्य हैं। जैसे— लौकिक और शास्त्रीय पुंस्त्वादि के क्या लक्षण हैं एवं किस प्रकार लौकिक पुंस्त्वादि में लिङ्ग-पदवाच्यता आ सकती है ? पुंल्लिङ्गादि शब्दों के कौन-कौन अर्थ हो सकते हैं ? एक व्यक्ति में दारा इत्यादि बहुवचनों का किस प्रकार साधुत्व हो सकता है ? इत्यादि।

और न ही लिङ्ग-संख्या के विषय में उन-उन सन्देहों को दूर करने वाला तथा अभीष्ट तत्तद् अर्थप्रतिपादन में समर्थ केवल इन्हीं विषयों का किसी के भी द्वारा प्रणीत कोई भी ग्रन्थ इस समय उपलब्ध है।

यह 'लिङ्गवचनविचार' नामक ग्रन्थ पाणिनीय व्याकरण के महाभाष्य, भाष्यप्रदीप, प्रदीपोद्योत, सिद्धान्तकौमुदी, शब्देन्दुशेखर, भूषण, दर्पण, शास्त्रार्थरत्नावली, व्युत्पत्ति-वाद, गूढार्थतत्त्वालोक, पदवाक्यरत्नादि ग्रन्थों के लिङ्गनिरूपण करने वाले अंशों को देखकर यथामति सम्पादित किया गया है, इससे लिङ्गविचार में सहायता मिलेगी।

***

परिशिष्ट–४

आचार्य पं० युधिष्ठिरमीमांसक द्वारा सम्पादित वामनीय लिङ्गानुशासन की संस्कृत भूमिका का हिन्दी रूपान्तरण

स्थावर और जंगमात्मक इस संसार में जितने भी पदार्थ हैं (सुबन्त और तिङन्त से निष्पन्न शब्द अथवा द्रव्यादि सप्त पदार्थ), वे सभी संस्त्यान और प्रसव गुण के योग से दोनों की समानता अथवा अभाव से स्त्री, पुम् और नपुंसकरूप से विभक्त उपलब्ध होते हैं; जैसा कि भगवान् भाष्यकार पतञ्जलि ने कहा है— 'सर्वाश्च पुनर्मूर्तय एवात्मिका: संस्त्यानप्रसवगुणा: शब्दस्पर्शरूपरसगन्धवत्य:'[१] । यहाँ संस्त्यानप्रधान विवक्षा में स्त्री, प्रसव गुणप्रधान विवक्षा में पुरुष और दोनों में समता अथवा अभाव में नपुंसक होता है । इस प्रकार स्त्री-पुरुष और नपुंसक (लिङ्ग) का विभाग जानना चाहिये ।

जिस प्रकार लौकिक जगत् के प्रतिपद प्रयोग में स्त्रीलिङ्ग, पुंल्लिङ्ग तथा नपुंसक लिङ्ग के नाम से भेद उपलब्ध होते हैं, उसी प्रकार उनके वाचक शब्दों में भी स्त्री-पुम्-नपुंसक विभाग होते हैं । यहाँ प्राणि-जगत् में लिङ्गज्ञान की व्यवस्था सुगम होती है, किन्तु जब हम अप्राणि-जगत् में पहुँचते हैं तो लिङ्गव्यवस्था करना दुरूह हो जाता है; क्योंकि जड़ पदार्थों में स्त्रीलिङ्ग, पुंल्लिङ्ग एवं नपुंसक लिङ्ग का ज्ञान सुदुष्कर होता है । अत: तन्निमित्तक उन-उन शब्दों का भी विशिष्ट लिङ्गज्ञान होना अत्यन्त क्लेशसाध्य होता है ।

इस प्रसंग में एक अन्य कारण यह भी है, जिससे कि संस्कृत भाषा के पदों का लिङ्ग-ज्ञान दु:साध्य हो गया है ।

अत्यन्त प्राचीन काल में जब मानव जाति की सूक्ष्म से सूक्ष्म भेद-प्रभेद को जानने में समर्थ कुशाग्र बुद्धि थी, उस समय वह जड़ पदार्थों में भी चैतन्ययुक्त पदार्थ के समान वास्तविक लिङ्ग जानकर उस शब्द में भी यथार्थ (वास्तविक) लिङ्ग का व्यवहार करते थे ।

१. महाभाष्य-४।१।३

अत: उस समय प्राय: सभी शब्द त्रिलिङ्ग (स्त्रीलिङ्ग-पुंल्लिङ्ग-नपुंसकलिङ्ग) हुआ करते थे और यह स्थिति प्राचीन वैदिक ग्रन्थों में भी उपलब्ध होती है ।

इस प्रकार के प्रयोग प्राप्त होते हैं । कुछ शब्दों के आज भी त्रिलिङ्गत्व दृष्टिगोचर होते हैं । इससे यह अनुमान किया जाता है कि उत्तर काल में संस्कृत विद्या के ह्रास से उसकी प्राचीन लिङ्गव्यवस्था भी प्राय: नष्ट हो गयी, ऐसी स्थिति में किन्हीं शब्दों का स्त्रीलिङ्ग प्रयोग ही रह गया, कुछ का पुंलिङ्ग हो गया और कुछ नपुंसक लिङ्ग ही रह गये । उनमें जो द्विलिङ्गी तथा त्रिलिङ्गी थे, उनकी संख्या अत्यन्त स्वल्प है ।

इस प्रकार यथार्थ लिङ्गविज्ञान अस्त-व्यस्त, आकुल-व्याकुल होने के कारण यह विज्ञान विद्वानों के लिये भी अत्यन्त कठिन हो गया, फिर सामान्य लोगों का तो कहना ही क्या ?

ऐसी स्थिति में शास्त्रचिन्तन में लगे दयाशील ऋषि-महर्षियों और आचार्यों ने सर्वसाधारण लोगों को लिङ्गज्ञान सुखसाध्य तथा अनायास हो जाय– यह सोचकर लिङ्गानुशासन के विभिन्न ग्रन्थों का प्रवचन-प्रचारण किया ।

किन्तु अब यह कहना कठिन है कि किन-किन वैयाकरण महानुभावों ने लिङ्गानुशासन का प्रवचन किया ? इसकी पूरी जानकारी अब नहीं हो सकती; क्योंकि वे सभी ग्रन्थ सम्प्रति अनुपलब्ध और दुर्लभ है । फिर भी यह दृढ़ता के साथ कहा जा सकता है कि स्त्री-पुं०-नपुंसक लिङ्गों का शब्दों के साथ समवायि सम्बन्ध (कारण) होने के कारण लिङ्गानुशासन के विना शब्दों का अनुशासन यथोचित ढंग से नहीं कहा जा सकता; अत: शब्दानुशासन के प्रवक्ता सभी वैयाकरणों ने लिङ्गानुशासन का प्रवचन अवश्य किया– यह बात सामान्य रूप से कही जा सकती है ।

इनके अतिरिक्त कुछ विद्वानों ने स्वतन्त्र रूप से भी लिङ्गनिर्धारणार्थ नियामक अनुशासन का निर्णय लिया है ।

इस प्रकार दो लिङ्गानुशासन सम्प्रति प्राप्त होते हैं । कुछ शब्दानुशासन के पूरक खिलभाग के रूप में, जैसाकि पाणिनीय लिङ्गानुशासन है और कुछ स्वतन्त्र रूप से भी कहे गये हैं; जैसे कि हर्षीय (हर्षवर्धनीय) और वामनीय लिङ्गानुशासन ।

इस तरह दो प्रकार के जो लिङ्गानुशासन हैं, वे सम्प्रति ग्रन्थाकार रूप में उपलब्ध होते हैं अथवा जिनके नाम प्राचीन वाङ्मय में उपलब्ध होते हैं या स्मरण किये जाते हैं । ये लिङ्गानुशासन हैं—

१. शान्तनवम् २. व्याडीयम् ३. पाणिनीयम् ४. चान्द्रम् ५. वाररुचम् ६. अमर-सिंहीयम् ७. जैनेन्द्रम् (देवनन्दिकृतम्) ८. शाङ्करम् ९. हर्षवर्धनीयम् १०. दौर्गम् ११. वामनीयम् १२. शाकटायनीयम् (पाल्यकीर्त्तिप्रोक्तम्) १३. भोजीयम् १४. बुद्धिसागरसूरिप्रोक्तम् १५. अरुणदेवीयम् १६. हैमम् १७. हेलाराजीयम् १८. मलयगिरिकृतम् १९. रामसूरिप्रोक्तम् २०. वेङ्कटराजीयम् २१. लिङ्गकारिका २२. लिङ्गनिर्णय २३. नवकिशोरकृतम् २४. व्यासीयम् २५. जैमिनिकोशसूत्रम् २६. कात्यायनीयम् २७. वात्स्यायनीयम् २८. दण्डिकृतम् २९. पद्मनाभीयम् ३०. जयसिंहीयम् ३१. आनन्दकविकृतम् ३२. विद्यानिधिकृतम् ३३. रामनाथीयम् ३४. विद्यावाचस्पतिकृतम् ३५. शाश्वतोद्धृतम् ३६. जयानन्दसूरिकृतम् ३७. नन्दिकृतम् ३८. सरयूप्रसादकृतम् ३९. लिङ्गवचनविचारः ४०. लिङ्गप्रबोध आदि ।

***

हर्षवर्द्धनकृत लिङ्गानुशासन (मद्रास संस्करण) के साथ शाकटायनकृत लिङ्गानुशासन का संक्षिप्त स्वरूप (पृ०-११८ से १२४)

नपुंसक लिङ्ग— नव्व्यच् सन्तमवेधोजरस्तथा मन्त्रकर्तरित्रान्तम् ।
त्वाद्यात्वाद्बहुलं ध्यक्तानखभावोऽव्ययीभावः ॥१-१९.१/२॥
अथ पुंलिङ्गप्रकरणम्— १९.१/२ से ३० पद्य तक ।
अथ स्त्रीलिङ्गप्रकरणम्— ३१ से ४६.१/२ तक ।
अथ स्त्री-पुंसलिङ्गप्रकरणम्— ४७-४८ पद्य तक ।
अथ पुं-नपुंसकलिङ्गकरणम्— ४८ से ६५ पद्य तक ।
अथ त्रिलिङ्गप्रकरणम्— ६६ से ७० पद्य तक ।
पर्यन्ते— वाग्विषयस्य तु महतः संक्षेपत एष लिङ्गविधिरुक्तः ।
यन्नोक्तमत्र सद्भिस्तल्लोकत एव विज्ञयेम् ॥

***

हर्षवर्द्धनकृत लिङ्गानुशासन के साथ वररुचिकृत लिङ्गविशेषविधि का संक्षिप्त स्वरूप
(पृ०-१२९-१३५)

मूल स्वरूप

यावान् कश्चित् त्रान्तः शब्दोऽत्र नपुंसके हि बोद्धव्यः ।
वर्ज्यं हि पुत्र मन्त्र श्वित्रानेवं गरित्रं च ॥१॥

पर्यन्ते

वाग्विषयस्य च महतः संक्षेपत एष लिङ्गविधिरुक्तः ।
यननोक्तमत सद्भिस्तल्लोकत एव बोद्धव्यम् ॥८०॥

इति श्रीमदखिलवाग्विलासमण्डितसरस्वतीकण्ठाभरणा-नेकविशरणश्रीनरपतिसेवितविक्रमादित्यकिरीटकोटि-निघृष्टचरणारविन्दाचार्यवररुचिविरचितो लिङ्गविशेषविधिः

***

वस्तुनिष्ठ प्रश्नोत्तर

१.प्रश्न– 'अनुशासन' शब्द से यहाँ क्या गृहीत हुआ है ?

अ. आदेश
ब. प्रोत्साहन
स. शिक्षण नियमों-विधियों का बनाना
द. संज्ञाओं के लिङ्गसम्बन्धी नियमों का निर्धारण

२.प्रश्न– 'लिङ्ग' शब्द से यहाँ क्या तात्पर्य है ?

अ. चिह्न
ब. लक्षण
स. प्रमाण के साधन
द. स्त्री या पुरुषवाची शब्द-ज्ञान का चिह्न

३.प्रश्न– पाणिनीय लिङ्गानुशासन के रचयिता कौन हैं ?

अ. आपिशलि
ब. काश्यप
स. पाणिनि
द. गार्ग्य

४.प्रश्न– महामुनि पाणिनि का कौन-सा समय माना जाता है ?

अ. ई० पू०-३५०
ब. ई० पू०-३००
स. ई० पू०-पाँचवीं शताब्दी
द. ई० पू०-२४०० वर्ष

५.प्रश्न– त्रिकाण्डशेषकोश में पाणिनि के कितने नाम परिगणित हैं ?

अ. ४
ब. ५
स. ६
द. ८

६.प्रश्न– पाणिनि के पिता का क्या नाम था ?

अ. शालंक
ब. पाणिन
स. बाभ्रव्य
द. अज्ञात

७.प्रश्न– पाणिनि के माता का क्या नाम था ?

अ. दाक्षी स. दाक्षायणी
ब. आर्या द. अज्ञात

८.प्रश्न– पाणिनि के गुरु का क्या नाम था ?

अ. वर्ष स. उपवर्ष
ब. माहेश्वर द. अज्ञात

९.प्रश्न– पाणिनि कहाँ के निवासी थे ?

अ. शालातुर स. वाहीक
ब. अटक लाहुर द. अज्ञात

१०.प्रश्न– पाणिनि का मुख्य ग्रन्थ कौन है ?

अ. अष्टाध्यायी स. छन्दोविंशतिका
ब. जाम्बवतीविजय द. महाभाष्य

११.प्रश्न– पाणिनीय लिङ्गानुशासन किस विधा में है ?

अ. गद्य में स. गद्य-पद्य दोनों में
ब. पद्य में द. सूत्ररूप में

१२.प्रश्न– पाणिनीय लिङ्गानुशासन में कुल कितने सूत्र हैं ?

अ. १८० स. १९२
ब. १८५ द. १९५

१३.प्रश्न– पाणिनीय लिङ्गानुशासन में पहला सूत्र कौन है ?

अ. 'स्त्री' स. 'अन्यूप्रत्ययान्तो धातु'
ब. 'लिङ्गम्' द. 'क्तिन्नन्तः'

१४.प्रश्न– पाणिनीय लिङ्गानुशासन में कितने प्रकरण हैं ?

अ. ३ स. ५
ब. ६ द. ४

१५.प्रश्न– पाणिनीय लिङ्गानुशासन किस लिङ्ग से प्रारम्भ होता है ?

अ. पुंल्लिङ्ग से स. नपुंसकलिङ्ग से
ब. स्त्रीलिङ्ग से द. स्त्री०-पुंल्लिङ्ग से

१६.प्रश्न– पाणिनीय लिङ्गानुशासन में एकल या मिश्रित कितने लिङ्गों का निर्देश है ?

अ. ४ स. ६

ब. ३ द. ५

१७.प्रश्न– ऋकारान्त कितने शब्द स्त्रीलिङ्गाधिकार में होते हैं ?

अ. ३ स. ४

ब. ५ द. २

१८.प्रश्न– क्तिन् प्रत्यय जिनके अन्त में होता है, वे किस लिङ्ग के होते हैं ?

अ. पुंल्लिङ्ग स. नपुंसकलिङ्ग

ब. स्त्रीलिङ्ग द. उभय लिङ्ग

१९.प्रश्न– पाणिनीय लिङ्गानुशासन में स्त्रीलिङ्गनिर्देशक कितने सूत्र हैं ?

अ. ३० स. ३२

ब. ३४ द. ३१

२०.प्रश्न– पाणि० लिङ्गानुशासन का पुं० प्रकरण किस सूत्र से प्रारम्भ होता है ?

अ. 'घञवन्तः' स. 'नङन्तः'

ब. 'पुमान्' द. 'घाऽजन्तश्च'

२१.प्रश्न– अशनि, भरणि, अरणि शब्द किस लिङ्ग में होते हैं ?

अ. स्त्रीलिङ्ग स. नपुंसकलिङ्ग

ब. स्त्रीलिङ्ग-पुंल्लिङ्ग द. पुं०-नपुंसक लिङ्ग

२२.प्रश्न– निप्रत्ययान्त धातुज शब्द किस लिङ्ग में होते हैं ?

अ. स्त्रीलिङ्ग स. नपुंसक लिङ्ग

ब. पुंल्लिङ्ग द. उभयलिङ्ग

२३.प्रश्न– श्रोणि, योनि और उर्मि शब्द किन-किन लिङ्गों में होते हैं ?

अ. पुंल्लिङ्ग स. स्त्रीलिङ्ग और पुंल्लिङ्ग

ब. स्त्रीलिङ्ग द. त्रिलिङ्ग

२४.प्रश्न– विंशति (२०) आदि संख्यावाचक शब्द किस लिङ्ग में होते हैं ?

अ. पुंल्लिङ्ग स. नपुंसक लिङ्ग

ब. स्त्रीलिङ्ग द. पुं०-स्त्रीलिङ्ग

२५.प्रश्न– तलन्त शब्द किस लिङ्ग में होते हैं ?

अ. पुंल्लिङ्ग स. नपुंसक लिङ्ग
ब. स्त्रीलिङ्ग द. उभयलिङ्ग

२६.प्रश्न– रात्रि आदि शब्द किस लिङ्ग में होते हैं ?

अ. पुंल्लिङ्ग स. नपुंसक लिङ्ग
ब. स्त्रीलिङ्ग द. स्त्री०-पुं०

२७.प्रश्न– चुल्लि, वेणि और खारी शब्द किस लिङ्ग में होते हैं ?

अ. पुंल्लिङ्ग स. नपुंसक लिङ्ग
ब. स्त्रीलिङ्ग द. अज्ञात

२८.प्रश्न– शलाका शब्द नित्य किस लिङ्ग में होता है ?

अ. स्त्रीलिङ्ग स. नपुंसक लिङ्ग
ब. पुंल्लिङ्ग द. स्त्री०-पुंल्लिंङ्ग

२९.प्रश्न– 'पुमान्' इस सूत्र का अधिकारक्षेत्र कहाँ तक है ?

अ. 'वंशाशपुरोडाशा:' स. 'सारथ्यतिथिकुक्षि०'
ब. 'पल्लवपल्वल०' द. 'ह्रस्वकन्दकुन्द०'

३०.प्रश्न– क्यजन्त शब्द किस लिङ्ग के होते हैं ?

अ. स्त्रीलिङ्ग स. नपुंसक लिङ्ग
ब. पुंल्लिङ्ग द. उभय लिङ्गी

३१.प्रश्न– 'इषुधि' शब्द किस लिङ्ग में प्रवृत्त है ?

अ. स्त्रीलिङ्ग स. स्त्री और पुंल्लिङ्ग
ब. पुंल्लिङ्ग द. नपुंसक लिङ्ग

३२.प्रश्न– 'क' उपधा वाले शब्द किस लिङ्ग में होते हैं ?

अ. स्त्रीलिङ्ग स. नपुंसक लिङ्ग
ब. पुंल्लिङ्ग द. उभय लिङ्गों में

३३.प्रश्न– 'तलभ' शब्द किस लिङ्ग में प्रयुक्त है ?

अ. पुंल्लिङ्ग स. नपुंसक लिङ्ग
ब. स्त्रीलिङ्ग द. उभय लिङ्ग

३४.प्रश्न– 'आजि' शब्द किस लिङ्ग में होता है ?

अ. पुंल्लिङ्ग स. नपुंसक लिङ्ग
ब. स्त्रीलिङ्ग द. उभय लिङ्ग

३५.प्रश्न– 'नपुंसकम्' इस सूत्र का कहाँ तक अधिकारक्षेत्र है ?

अ. 'धान्याज्य०' स. 'अक्षमिन्द्रिये'
ब. 'द्वन्द्वबर्ह०' द. अज्ञात

३६.प्रश्न– निष्ठा-प्रत्ययान्त शब्द किस लिङ्ग में होते हैं ?

अ. पुंल्लिङ्ग स. नपुंसक लिङ्ग
ब. स्त्रीलिङ्ग द. उभय लिङ्ग

३७.प्रश्न– अव्ययीभावसहित शब्द किस लिङ्ग में होते हैं ?

अ. पुंल्लिङ्ग स. नपुंसक लिङ्ग
ब. स्त्रीलिङ्ग द. पुं०-नपुंसक लिङ्ग

३८.प्रश्न– 'अर्चि' शब्द किस लिङ्ग में गृहीत है ?

अ. पुंल्लिङ्ग स. नपुंसक लिङ्ग
ब. स्त्रीलिङ्ग द. नपुंसक-स्त्रीलिङ्ग

३९.प्रश्न– 'अटवी' शब्द किस लिङ्ग में होता है ?

अ. पुंल्लिङ्ग स. नपुंसक लिङ्ग
ब. स्त्रीलिङ्ग द. उभय लिङ्ग

४०.प्रश्न– 'स्त्रीपुंसयोः' इस सूत्र का कहाँ तक अधिकारक्षेत्र है ?

अ. 'गुणवचन०' स. 'गुणवचन०'
ब. 'मन्युसीधु०' द. 'अपत्यार्थस्तद्धिते'

४१.प्रश्न– 'पुंनपुंसकयोः' इस सूत्र का कहाँ तक अधिकारक्षेत्र है ?

अ. 'शृङ्गार्ध०' स. 'दण्डमण्ड०'
ब. 'कबन्धौषधा०' द. 'गृहमेहदेह०'

४२.प्रश्न– ऐतिहासिक पुस्तकों एवं लिङ्गानुशासन के ग्रन्थों में कितने लिङ्गानुशासनों की मुख्य रूप से चर्चा है ?

अ. ३० स. ४०
ब. ३५ द. अज्ञात

४३.प्रश्न– पाणिनीय लिङ्गानुशासन से पूर्व कौन-सा लिङ्गानुशासन चर्चित है ?

अ. वामनीयम्　　स. शान्तनवम्
ब. वाररुचम्　　द. व्याडीयम्

४४.प्रश्न– पाणिनीय लिङ्गानुशासन का आदर्श कौन-सा लिङ्गानुशासन है ?

अ. शान्तनवम्　　स. चान्द्रम्
ब. व्याडीयम्　　द. वाररुचम्

४५.प्रश्न– लिङ्गानुशासनों की वास्तविक संख्या कितनी है ?

अ. ३५　　स. ३६
ब. ३०　　द. ४०

४६.प्रश्न– संस्त्यानप्रधान कौन-सा लिङ्ग है ?

अ. पुंल्लिङ्ग　　स. नपुंसक लिङ्ग
ब. स्त्रीलिङ्ग　　द. स्त्री०-पुं०

४७.प्रश्न– प्रसव गुणप्रधान कौन-सा लिङ्ग है ?

अ. स्त्रीलिङ्ग　　स. नपुंसक लिङ्ग
ब. पुंल्लिङ्ग　　द. पुं०-न०

४८.प्रश्न– संस्त्यान और प्रसवप्रधान रूपों की समता अथवा वैषम्य कौन-सा लिङ्ग है ?

अ. पुंल्लिङ्ग　　स. नपुंसक लिङ्ग
ब. स्त्रीलिङ्ग　　द. पुं०-स्त्री०

४९.प्रश्न– सम्प्रति कितने लिङ्गानुशासन उपलब्ध हैं ?

अ. ७　　स. १०
ब. ६　　द. ९

५०.प्रश्न– क्या 'धर्म' शब्द पुंल्लिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग दोनों प्राप्त होते हैं ?

अ. नहीं　　स. केवल पुंल्लिङ्ग
ब. हाँ　　द. अज्ञात

***

उत्तरमाला

१. द	११. द	२१. ब	३१. स	४१. द
२. द	१२. स	२२. अ	३२. ब	४२. द
३. स	१३. ब	२३. स	३३. स	४३. स+द
४. स	१४. ब	२४. स	३४. ब	४४. ब
५. स	१५. ब	२५. ब	३५. स	४५. स
६. ब	१६. स	२६. ब	३६. स	४६. ब
७. अ	१७. ब	२७. ब	३७. स	४७. ब
८. अ	१८. ब	२८. अ	३८. द	४८. स
९. अ	१९. ब	२९. स	३९. ब	४९. स
१०. अ	२०. ब	३०. ब	४०. द	५०. ब

*****